कही अनकही कहानियाँ

(कहानी संग्रह)

डॉ. डी.एस. शुक्ला

भारत प्रकाशन
लखनऊ

प्रकाशक : भारत प्रकाशन
17, अशोक मार्ग, लखनऊ-226 001
दूरभाष : 0522-2288381, 09415102821

© कृति स्वाम्य : लेखक

ISBN No. : 978-81-8002-079-7

प्रथम संस्करण : 2016

मूल्य : 250.00 रुपये

मुद्रक : बालाजी आफसेट, नयी दिल्ली

KAHI ANKAHI KAHANIYAN

(Collection of Stories)

By Dr. D.S. SHUKLA

समर्पण

अपनी माता **श्रीमती वीना शुक्ला** को समर्पित जिनके आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन ने मुझे इतनी योग्यता दी कि इंटर के बाद ही मेडिकल में चयनित हो सका। आज मैं जो भी हूँ माता के दिये स्नेह और संस्कार की अनुकंपा से ही हूँ।

-डॉ. डी.एस. शुक्ला

डॉ० सूर्यप्रसाद दीक्षित
सभापति
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
१२, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद-३

'साहित्यिकी'
डी० ५४, निरालानगर
लखनऊ-२२६०२०
फोन : ०५२२-२७८८४५

शुभाशंसा

सर्जन के रूप में डॉ. शुक्ल की सिद्धि-प्रसिद्धि से मैं सुपरिचित हूँ। आज उनके साहित्य-सर्जन को देखकर विमुग्ध तथा विस्मित हूँ। वस्तुतः यह सर्जनात्मक क्षमता उन्हें आनुवांशिक परंपरा और प्रकृति-परिवेश से प्राप्त हुई।

'लावारिस' कहानी में अस्पतालों की दुखस्था का मार्मिक चित्रण किया गया है, जो उनकी आँखों देखा सत्य है और सहज संवेदना की उपज है। 'सुंदरी' तथा 'अनलिखा उपन्यास' लंबी कहानियाँ है। इसमें लेखक-जीवन की विडम्बना का प्रेरक प्रसंग है। 'भीष्म की पीड़ा' में पितामह का अंतर्द्वंद्व मन को छूता है। 'अजा गल घंटि' में यौन समस्या पर प्रकाश डाला गया है। इसी प्रकार 'सोने की बिल्ली' में अंधविश्वासों की ओर जिस प्रकार ध्यानाकर्षण किया गया है, वह रोचक है और प्रेरणास्पद भी।

अतः मैं इन रचनाओं का स्वागत करता हूँ, शुक्ल जी को हृदय से बधाई देता हूँ और पाठकों से यही आग्रह करता हूँ कि वे इन्हें मनोयोगपूर्वक पढ़कर स्वयं को लाभान्वित करें।

साभिवादन,

-डॉ० सूर्यप्रसाद दीक्षित

दहकते जीवानुभव का उतप्त कथानुभव में रूपान्तरण

वैसे तो रायबरेली के उर्वर क्षेत्र ने अनेक यशस्वी साहित्यकारों को जन्म दिया है और यह क्रम अब भी जारी है...। अब उसी धरती से आ रहे हैं- डॉ. डी.एस. शुक्ला अपनी कहानियों के नवीनतम संकलन के साथ! पेशे से डॉक्टर, किन्तु रुचि से, व्यसन से, अन्तरतम से एक अच्छे साहित्यकार जो साहित्य के रस-सागर में पूरी तरह निमग्न हैं, डूबे हैं और वहीं रचे-बसे हैं।

इस पुस्तक की भूमिका को उन्होंने 'प्रेरक-पीड़ा' कहा है- क्या रचनाधर्मिता प्रेरक पीड़ा नही? एक अच्छी व्याख्या और बहस की संभावना इसमें निहित है।

यह 'प्रेरक-पीड़ा'- यह भूमिका कैसे अपने संक्षिप्त ताने-बाने में आपको कसकर जकड़ लेती है, विशेषतः जब आप इन पंक्तियों से गुजरते हैं- **''पीड़ा के रिश्ते कितने गहरे और अटूट होते हैं...! पीड़ा पीड़ित ही नहीं करती, प्रेरित भी करती है। इस तरह पीड़ा से प्रेरणा, पीड़ाभागियों से प्रोत्साहन पा, लेखन की राह पर झिझकते, ठिठकते चल पड़ा...। रचना पूर्ण होने पर जब तक कोई अन्य उसका आकलन न करे, रचनाकार को संतुष्टि नहीं मिलती। स्थापित रचनाकारों से न तो परिचय था न ही अनजाने लेखकों से आग्रह करने का साहस। सो वानप्रस्थी दो सदस्यों के परिवार में मात्र पत्नी ही सुलभ थीं जिसे यह दायित्व सौंपा जा सके, और यह कार्य पत्नी ने अत्यंत निर्ममता से किया। पत्नी ने अधिकांश रचनायें अस्वीकृत कर दीं और कुछ को तो फाड़ ही दिया। यदि वह इतनी निष्ठुर न होतीं तो अब तक कई ग्रंथ बन गए होते।''**

महाकवि कालिदास से महाकवि तुलसीदास तक उनके जीवन-प्रसंग से जुड़ी जो कहानियाँ प्रचलित हैं, उनमें उनकी पत्नियों के सकारात्मक योगदान के प्रसंगों का बड़ा ही अच्छा वर्णन मिलता है। उपर्युक्त विवरण

पढ़कर यह कहा जा सकता है कि श्रीमती शुक्ला एक श्रेष्ठ संपादक हैं जो जानती हैं कि अनावश्यक परिमाण पर्याप्त नहीं होता, उससे श्रेष्ठतर स्थिति है, 'देखन में छोटे लगैं, घाव करें गंभीर।' अतः धर्मपत्नी के द्वारा विनष्टीकरण एवं अस्वीकृत की प्रक्रिया को पार कर, अब जो रचनाएँ बची हैं, वे निःसंदेह खरी-निखरी रचनाएँ हैं, जिनका कथ्य एवं शिल्प-विधान दोनों आपको बाँधता है।

कौतूहल बनाये रखना इन कहानियों का विशेष गुण है। छोटे-छोटे चुभते वाक्य, जो जितने संक्षिप्त हैं, उतने मुखर भी, आपके आस-पास कथानक का ऐसा सम्मोहक ताना-बाना बुनते हैं कि आप उसके जादुई-प्रभाव में उलझते ही जाते हैं। और आपको तब चैन मिलता है, जब कहानी पूरी हो जाये। पर उसके बाद भी चैन कहाँ क्योंकि मन में फिर कई प्रश्न उठते हैं कि ऐसा क्यों हुआ? आप अपने आस-पास की दुनिया में उसकी सादृश्यता ढूँढते हैं। अनुत्तरित प्रश्नों का उत्तर ढूँढते हैं और कभी यह सोचकर संतोष करते हैं कि जीवन के आखिर कितने पहलू हैं, कितने आयाम हैं..... शायद अन्तहीन.....! चलो, यह भी होता है या ऐसा भी हो सकता है।

मैं आपको आमंत्रित करता हूँ कि 'मन की बात' के माध्यम से आप डॉ. डी.एस. शुक्ला के कथा-संसार की यात्रा करें और स्वयं इसे परखें कि उतप्त कथानुभव दहकते जीवनाभुव के कितने करीब हैं या दोनों एक-दूसरे में कैसे घुल-मिल गये हैं।

मैं आशा करता हूँ कि यह यात्रा फलप्रद होगी तथा इस कृति का साहित्य-प्रेमियों तथा सामान्य पाठक-वर्ग के मध्य सम्यक् स्वागत एवं समादर होगा।

अपरिमित शुभकामनाओं के साथ।

डॉ. (शंभुनाथ)
पूर्व कार्यकारी अध्यक्ष,
उ.प्र. हिन्दी संस्थान,
लखनऊ।

25.03.2016
1/60, विशालखण्ड,
गोमतीनगर, लखनऊ।

प्रो. ओम् प्रकाश पाण्डेय (डी.लिट.)

पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय
(पूर्व) अतिथि आचार्य, सोरबोन नूवेल यूनिवर्सिटी, पेरिस, फ्रांस
पूर्व सदस्य सचिव, म.सा.
राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (भारत सरकार)
पूर्व उपाध्यक्ष, उ.प्र. संस्कृत संस्थान, लखनऊ
साहित्य अकादमी से पुरस्कृत
एवं राष्ट्रपति-सम्मान से सम्मानित

निवास : B-1/4, विक्रान्तखण्ड
गोमतीनगर, लखनऊ-226010
दूरभाष : (0522) 2720082
चलभाष : 09919490406

दो शब्द

रामायण और महाभारत सम्पूर्ण भारतीय साहित्य के लिए उपजीव्य ग्रन्थ हैं। इनकी कथाओं और पात्रों को लोक परवर्ती साहित्यकारों ने विविध प्रकार से अभिनव कल्पनाओं के आतान-वितानपूर्वक उपबृंहण[1] किया हैं लेकिन इनमें से शिखण्डी का चरित्र ऐसा है, जिस पर, जहाँ तक मेरी जानकारी है, किसी ने भी गंभीरता से विचार नहीं किया है। डॉ. शुक्ल जी ने संभवतः पहली बार उस पर विभिन्न दृष्टिकोणों से लेखन-कार्य किया है। बच्चन जी की एक अभ्युक्ति को लेकर पहले उन्होंने उसे चिकित्सा विज्ञान के निकषग्राव[2] पर कसा है और बाद में अन्य दृष्टियों से इस अद्यावधि उपेक्षित चरित्र के पक्षों को अनावृत किया है। इस कृति में इसी प्रकार के अन्य चरित्र हैं। किन्नरों के रूप में शिखण्डी के परवर्ती बन्धु आज भी जिस वेदना को झेल रहे हैं, उसे साहित्य के पटल पर अंकित कर डॉ. शुक्ल जी ने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

सर्जन होते हुए भी डॉ. शुक्ल जी की भाषा और प्रस्तुति में प्रौढ़ता और परिष्कार है। यह कृति एक समर्थ लेखक की विशिष्ट उपलब्धि होने की परिचायक है। मेरी कामना है कि कृति को सहृदय पाठकों की आत्मीयता और डॉ. शुक्ल जी को अनन्त सुयश प्राप्त हो।

ओम् प्रकाश पाण्डेय

पुनश्च :- कृति के गुण-दोष के वास्तविक निर्णायक गंभीर पाठक ही होते हैं। अवधी के महाकवि गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश' की शब्दावली में फिलहाल यही कहना उचित होगा- 'सब कुछ नाही है, मुला कलाकृति कुछ तो है।' ('पारिजात', महाकाव्य से)।

1. विस्तार
2. कसौटी पत्थर

अपनी बात

''कहानियाँ मात्र मन की भड़ास निकालने के लिए नहीं बल्कि ऐसे प्लाट को ध्यान में रख कर लिखी जानी चाहिए जिन पर पूर्ण चिंतन किया गया हो। पाठक की मनोदशा का प्रतिपल ध्यान रख कर, इस प्रकार कहानी का ताना-बाना, भाषा-शिल्प, कथ्य आदि गढ़ा जाय कि तारतम्यता न टूटने पाये।'' इस कसौटी पर सर्जन-साहित्यकार डॉ. डी.एस. शुक्ला पूरी तौर से खरे उतरते हैं।

जहाँ आप सामाजिक विद्रूपताओं को रेखांकित करते हैं वहाँ विवशता में भी 'इंकलाबी रास्ता' निकालने की पहल करते नज़र आते हैं। (कहानी-अजा गलि घंटि)।

सुंदरता तन की ही नहीं मन की भी सुंदरता होना जरूरी है। पर आप इस संसार का क्या करेंगे जो मन की सुंदरता से अधिक चेहरे की सुंदरता पर अधिक रीझता है। 'सुंदरी' कहानी में विडम्बना, विद्रूपता का मनो-वैज्ञानिक विश्लेषण बहुत सुंदर ढंग से किया गया है।

मैं पूर्ण रूप से आश्वस्त हूँ यह कहानी संग्रह संपूर्ण साहित्य जगत में स्वीकार्य होगा और पाठकों में लोकप्रिय होगा।

-देवकी नंदन 'शांत'

(कवि एवं साहित्यकार)

अंदर की बात

कहते हैं कि वायरस कोशिका में घुस कर उसका डी.एन.ए. बदल देता है। ऐसा ही कुछ मेरे 'इनके' साथ भी हुआ। अच्छे खासे सर्जन थे। 34 वर्ष के सेवा काल में काफी व्यस्त रहे। सोचा था रिटायरमेंट के बाद हम लोग नार्मल जिंदगी जियेंगे। पर यह क्या.....! ये सुबह चार बजे उठने लगे, भाव आने लगे, इनके अंदर लेखन का जिन्न (वायरस) घुस गया। कहानी का लेखक है तो श्रोता भी होना चाहिए। यदि कोई भी न मिले तो घर मे एक अदद बीवी तो है ही। इसलिए दिन रात बगैर समय के बंधन के इनकी रचनाएँ सुनना आवश्यक हो गया। डॉक्टर की पत्नी हूँ, जानती हूँ कि प्रसव के समय दाई की मौजूदगी कितनी आवश्यक है। सो रचना के जन्म के समय मुझे तत्काल अटेण्ड करना पड़ता है। इसमें कितनी ही बार गैस पर रखी दाल जल गई, लपट पर रोटी कोयला हो गई, मगर दाई का रोल निबाहना पड़ा। अगर कभी थोड़ी देर हो गई और प्रसव 'हुचक' गया या भाव का एबार्शन हो गया तो..... 'महाभारत' और 'लंकाकांड' का गायन और मंचन एक साथ।

इसके अलावा गृहणी को लैपटाप की चार्जिंग, प्रिंट पेपर की उपलब्धता का भार के साथ ही रचनाओं के मूल्यांकन का एक्स्ट्रा भार।

मूल्यांकन का भार तो मुझे मजबूरी में सौंपा गया क्योंकि 'नो अदर ऑप्शन' जिसका निर्वाह मैंने 'गृहणी बुद्धि' से किया। जिस प्रकार दाल से कंकड़ पत्थर बीन कर निकाले जाते हैं वैसा ही कुछ मैंने रचनाओं के साथ किया। हो सकता है कुछ अच्छी रचनाएँ कंकड़ समझ कर निकाल दी गई या पूरी थाली में कंकड़ ही बचे। इसका निर्णय पाठक स्वयं करें। यदि दूसरी स्थिति हो तो कृपया अपने तक ही रखें वरना..... दोष मेरा.....श्रेय.....।

-श्रीमती नीरज शुक्ला 'रानी'

(लेखक की पत्नी)

प्रेरक पीड़ा

मैं उस परिवार से हूँ जिस पर सरस्वती की महान कृपा रही। मेरे पितामह व उनके अनुज शंकर (पं. द्वारिका प्रसाद शुक्ल एवं पं. रमावतार जी शुक्ल 'चातुरा' संस्थापक-'चातुर मण्डल' रायबरेली) अपने समय के मान्य साहित्यकारों में थे। कहते हैं कि उस समय के बच्चे तो क्या अनुचर भी छोटी मोटी काव्य पंक्तियाँ लिखते थे। परिवार में मैं पहला चिकित्सक बना, वह भी चीर-फाड़ विधा का, साहित्य से कोसों दूर। परंतु 4 नवंबर 2009 को वास्तविक पीड़ा से मेरा परिचय हुआ निकट संबंधियों की मृत्यु ने तो पीड़ा पहुँचाई पर उससे विश्वास नहीं डिगा। पर इस पीड़ा ने आस्था और श्रद्धा को भंग कर दिया। लगा जैसे देवी-प्रतिमा खंडित हो गई...। रात भर सो नहीं सका। उसी रात 2 बजे उठकर लिखा। मेरी व्यथा कागज पर अंकित हुई। जब यह पीड़ा साधारण सी वार्षिक पत्रिका में छपी तो कई फोन आए। कुछ रो रहे थे, कुछ ने अवरुद्ध कंठ से मुबारकबाद देते कहा : ''यह कल्पना नहीं हो सकती। इतनी पीड़ा उसकी ही लेखनी से जन्म ले सकती है जो इससे गुजरा हो.....।''

पीड़ा के रिश्ते कितने गहरे और अटूट होते है.....। पीड़ा पीड़ित ही नहीं करती, प्रेरित भी करती है। इस तरह पीड़ा से प्रेरणा, पीड़ाभागियों से प्रोत्साहन पा लेखन की राह पर झिझकते, ठिठकते चल पड़ा।

''पराई नारि और अपनी रचना सभी को अच्छी लगती है।'' इस उक्ति से मैं परिचित था। रचना पूर्ण होने पर जब तक कोई अन्य उसका आकलन न करें, रचनाकार को संतुष्टि नहीं मिलती। स्थापित रचनाकारों से न तो परिचय था न ही अनजाने लेखकों से आग्रह करने का साहस। सो वानप्रस्थी दो सदस्यों के परिवार में मात्र पत्नी ही सुलभ थी जिसे यह दायित्व सौंपा जा सके और यह कार्य पत्नी ने अत्यंत निर्ममता से किया। पत्नी ने अधिकांश रचनायें अस्वीकृत कर दीं और कुछ को तो फाड़ ही दिया। यदि वह इतनी निष्ठुर न होती तो अब तक कई ग्रंथ बन गए होते।

जो रचनायें बचीं उन्हें आदरणीय देवकी नन्दन जी शांत जी को

दिखाया उन्होंने साधु वचन कह कर श्री किशोरी शरण शर्मा जी को दिखाने को कहा। शर्मा जी व श्री शंभुनाथ (आइएएस) के प्रोत्साहन से इसे पुस्तक का रूप देकर आपके सम्मुख प्रस्तुत कर रहा हूँ। इस वरिष्ठ-नागरिक का 'बाल-प्रयास' जैसा भी बन पड़ा पाठकों को समर्पित है।

-डॉ. डी.एस. शुक्ला
18/378, इन्दिरानगर,
लखनऊ-226016
मो0 : 9415469561
Email : dsumeshdp@rediffmail.com

कृतज्ञता ज्ञापन

'यह मैने किया' ऐसा विचार अहंकार की चरम सीमा है।
कृतज्ञजन ही इस महामोह से बच पाते हैं।

मेरे पितामह पं. द्वारका प्रसाद जी शुक्ल (स्व.) का मुझ पर असीम कृपा व स्नेह रहा। उनकी प्रेरणा से बचपन में ही मेरा धर्म-ग्रन्थों से परिचय हुआ। मुझ जैसे बालक से भी वह पढ़े ग्रन्थों पर चर्चा करते थे और समझाते। शायद ही कोई दिन हो जब मैं उन्हें अपने स्मृति-सुमन अर्पित न करता होऊँ।

मेरे गुरु, अभिभावक, बंधु-सखा, मुझसे आयु में कुछ ही बड़े मेरे चाचा डॉ. उमादत्त शुक्ल जी कहने को तो अब इस दुनिया में नही हैं, पर मैं उनको अपनी प्रत्येक कृति में अपने साथ महसूस करता हूँ।

जीवन व जीवन की सफलता में जीवनसाथी का बड़ा योगदान होता है (सर्वश्री मोदी, कलाम, अटलबिहारी वाजपेयी) आदि अपवादों को छोड़कर)। घर में शांति रखनी है तो पत्नी को धन्यवाद देना ही होगा। सक्रिय सेवा कार्य के दौरान यदि वह मुझे पारिवारिक दायित्वों से मुक्त न रखती तो चिकित्सा सेवा का कार्य इतना सुगम न होता। लेखन-कार्य में भी शांति परम आवश्यक है। इस शांत वातावरण की दायिनी अपनी सहधर्मिणी को दिल से धन्यवाद देता हूँ।

जन्मदाता जननी (स्व.) श्रीमती विद्या शुक्ल और पिता (स्व.) श्री यू.डी. शुक्ल को धन्यवाद का विचार भी मन में वैसी ही लघुता का एहसास भर देता है जैसे सूर्य को दिया दिखाना। परंतु कृतज्ञता न व्यक्त करना कृतघ्नता होगी जो मेरे विचार से सबसे बड़ा पाप है।

मेरी माँ बहुत ही सरल, विनयशील, मृदु स्वभाव की महिला थीं। मितभाषी होने के बावजूद संवादहीन नहीं थीं। वहीं मेरे पिता बहुत मिलनसार एवं तेजस्वी थे, उनके जैसे प्रभावशाली व्यक्तित्त्व वाले बिरले ही होते हैं। ऐसी जननी और जनक सौभाग्य से ही मिलते हैं। यह शरीर ही उनका दिया हुआ है। मैं उन्हें शत्-शत् नमन करता हूँ।

मैं श्री रामशंकर जी त्रिपाठी, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, विश्रुत शिक्षक को मार्गदर्शन और उत्साहवर्धन के लिए नमन करता हूँ। अंत में अपने पुत्रवत सुहृद श्री दिव्य रंजन पाठक को उनके सहयोग के लिए साधुवाद और आशीर्वाद देता हूँ।

इस पुस्तक के प्रकाशन में श्री वीरेन्द्र कुमार बाहरी एवं श्री तरुण कुमार बाहरी जी के साथ-साथ उनकी टीम के समस्त सदस्यों का भी आभारी हूँ। जिन्होंने इस कार्य को पूर्ण करने में भरपूर सहयोग प्रदान किया।

-डॉ. डी.एस. शुक्ला

अनुक्रम

समर्पण	iii
प्रेरक पीड़ा	xi
कृतज्ञता ज्ञापन	xiii
भीष्म की पीड़ा	**01**
लावारिस	**06**
अजा गल घंटि	**11**
सुंदरी	**23**
अनलिखा उपन्यास	**35**
मनोविकार (Fetishism)	**48**
कार्पोरेट गेम्स	**56**
किराये की कोख	**67**
शिखंडी	**77**
उसने ही विश्वास नहीं किया...	**87**
मन की बात	**98**
वसीयत	**105**
मासूम शिकार	**114**
पोस्टमार्टम	**120**
सोने की बिल्ली	**130**
सहृदयता	**136**
दहेज...अभिशाप या अभिशप्त	**142**
वंचितो की वंचना	**155**
कान का बुंदा	**161**

भीष्म की पीड़ा

कुरुक्षेत्र की रणभूमि। समय आधी रात। सर्वत्र घायलों की पीड़ा भरी चीख-पुकार के बीच स्वास्थ्य रक्षकों की सांत्वना देती वाणी, नीरवता में स्पष्ट सुनाई दे रही थी। सियार आदि मांस-भक्षियों को घायलों से दूर रखने के लिए मशालें जल रहीं थीं।

रणभूमि के एक कोने में एक विशेष क्रम-व्यवस्था में मशालें लगी थीं। किसी विशिष्ट घायल की सुरक्षा में सशस्त्र सैनिक तैनात थे। इनके मध्य में एक व्यक्ति शर-शय्या पर लेटा था। केश व शरीर के सभी रोम पूर्ण रूप से श्वेत हो चुके थे, परंतु शरीर बहुत ही सुगठित और बलिष्ठ था। गांडीव की प्रत्यंचा की भाँति तने हुए स्नायु-तन्तु, बलिष्ठ माँसपेशियाँ, सुता हुआ शरीर किसी भी बलिष्ठ युवक को लज्जित करने में सक्षम था। शर-शैय्या पर लेटा व्यक्ति था-महावीर भीष्म।

काफी रक्त निकल जाने व ज्वर की वजह से भीष्म को तंद्रा आई थी कि एक बहुत ही परिचित आवाज सुनाई दी।

''देवव्रत...सो रहे हो।''

देवव्रत! इस काल में जब सभी उसे पितामह, आर्यश्रेष्ठ या वीरवर कह कर संबोधित करते हैं, यह मुझे देवव्रत संबोधित करने वाला कौन? भीष्म आश्चर्य में थे।

''देवव्रत मुझे सुन रहे हो...?''

भीष्म ने आँखें बंद किए ही पूछा, ''कौन?''

आवाज ने फिर पूछा, ''...बहुत पीड़ा हो रही है?''

अब भीष्म जाग्रत हो गए थे, प्रश्न सुनकर उन्हें हँसी आ गई।

आवाज में कौतूहल था। ''क्या हुआ?''

भीष्म ने उत्तर दिया, ''जिसने अपने इतने लंबे जीवन में पीड़ा ही पीड़ा भोगी हो, उसे यह कष्ट पीड़ित नहीं कर सकता।''

''क्या कहते हो, स्वर्ग के आठवें वसु! देवी गंगा और महाराज शांतनु का पुत्र, वर्तमान का अकेला चंद्रवंशी कौरव, हस्तिनापुर का भाग्य-विधाता और जीवन की पीड़ा...।''

भीष्म- ''हाँ, यह सत्य है।''

''क्या तुम्हें धृतराष्ट्र का अंधत्व, पांडु का रोग, द्रौपदी का अपमान या कपट-द्यूत पीड़ित नहीं करते?''

''नहीं, यह सब तो मानसिक वेदनाएं थीं जिन्हें विधाता की नियति मानकर सकारात्मक विचारों से मन को समझा लिया। मेरा जीवन केवल किशोरावस्था में ही उत्फुल्ल रहा। युवा होते ही पिता का माता सत्यवती के लिए आकर्षण, पुत्र का कर्तव्य पालन करते हुए पिता से 'इच्छा-मृत्यु' का वरदान पाना। इसके साथ ही जनम में पहली बार मातृ-प्रेम की आशा जागी। ममता मिली भी परंतु क्षणिक। पिता की अचानक मृत्यु... छोटे भाई चित्रांगद, विचित्रवीर्य और सूने हस्तिनापुर के सिंहासन ने सब कुछ बदल दिया। माँ का मुझसे राज्याभिषेक का आग्रह जिसमें भय मिश्रित लाचारी परिलक्षित हो रही थी... शायद इसलिए कि तब तक मुझे आर्यावर्त का सर्वश्रेष्ठ वीर माना जाने लगा था।''

''माता को मैंने उनके पिता, मत्स्य-राज, को दिये हुए अपने वचन की याद दिलाई, और उस पर दृढ़ रहने का वचन पुनः दोहराया। तब ही वह आश्वस्त दिखी। मुख पर आती हुई मुस्कान को हटाते वापस ठेलते हुए, उन्होंने कहा-''वत्स, तुम्हारी जैसी इच्छा।''

''वत्स... अचानक मैं पुत्र से वत्स कैसे बन गया...?''

''मैंने माता की ओर देखा। उनके चेहरे पर भय और लाचारी का स्थान आत्म-विश्वास ने ले लिया था। उनके चेहरे पर दृढ़ निश्चय दिखा। उन्होंने मुझे विचित्र दृष्टि से देखा - उस दृष्टि में शायद तिरस्कार का भाव था व ममता का पूर्ण अभाव था।''

''इसी क्षण मेरा परिचय पीड़ा और वेदना से हुआ, जो कि उम्र के साथ प्रगाढ़ होता गया।''

''मैं माता की हर इच्छा पूरी करने की कोशिश करता। उसके पालन में धर्म और अधर्म के बीच की रेखा पार करने में मैं भी नहीं हिचका। पर जब उनकी आज्ञा पालन कर उपस्थित होता था, तो मन में उनके विश्वास और आशीर्वाद की कामना होती। परंतु वह चित्रांगद और

विचित्रवीर्य का हाथ पकड़ कर महल में चली जाती। जाते समय मुझ पर दृष्टिपात करतीं, उसमें विद्रूप तिरस्कार होता। कुछ दिन प्रतीक्षा के बाद मैं पुनः अपनी कुटिया, जो हस्तिनापुर के बाहर गंगा के किनारे थी, लौट आता था। गंगा की लहरों में मुझे शांति मिलती।''

''राज्य द्वारा इसका भी ध्यान रखा जाता था कि मुझसे मिलने कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति न आए।''

''युवावस्था का मेरा यह वानप्रस्थ कुछ समय के अंतराल के बाद राजमहिषी के रथ और उनके रक्षकों के कोलाहल से टूटता। मैं स्वीकार किए जाने की आशा से उनके स्वागत को कुटिया के द्वार पर पहुँचता। क्षितिज पर उनके रथ की पताका, धीरे-धीरे पास आती दिखायी देती। रथ कुटिया के सामने रुकता। मैं माता को प्रणाम करता। सिर ऊपर उठाते ही माता की वही दृष्टि मुझे स्तब्ध कर देती। मुझे ज्ञात हो जाता कि हस्तिनापुर में कोई संकट है। माता अपनी रुष्ट और व्यंग्यात्मक वाणी से बताती कि संकट का कारण मैं ही हूँ, अतः उससे निपटना मेरा धर्म है। पता नहीं क्यों? मैं नहीं जानता, उनकी वाणी और दृष्टि मुझमें अपराध बोध क्यों पैदा कर देती। जबकि मैं भलीभाँति जानता था कि उस संकट का कारण मैं नहीं हूँ।''

''फिर भी... शरीर में इतने बाण लगे हैं... पीड़ा तो होगी ही'', आवाज ने फिर कुरेदा।

''हृदय की पीड़ा के सामने शारीरिक पीड़ा नगण्य होती है।''

''तो क्या अर्जुन का बाण, जो हृदय पर लगा, वह ही पीड़ा कर रहा है?''

एकाएक भीष्म का स्वर स्नेहातिरेक से रुँध गया, ''नहीं, पार्थ ने मुझे केवल युद्ध से विरत करने के लिए मुझ पर शर-संधान किया। हृदय और मस्तिष्क में एक भी बाण नहीं लगा।''

''फिर हृदय की पीड़ा कैसे?''

भीष्म अब तक पूर्ण रूप से चेतन हो चुके थे। उन्होंने आवाज देने वाली आकृति को पहचाना। वह उनकी ही अनुकृति थी। भीष्म ने जान लिया कि वह उनकी ही जीवात्मा है, जो उन्हें अंतिम समय ग्रंथि से मुक्त कर रही थी। उन्हें याद आया... सूर्य उत्तरायण हो चुका था। उन्होंने उत्तरायण में ही देह त्यागने की इच्छा की थी। उनका अंत समय आ गया

था।

''तब भी तुम उसे सव्यसाची और सर्वश्रेष्ठ मनुष्य कहते हो?''

''हाँ! वह तो वह है ही। मेरे ऊपर प्रहार के पीछे कृष्ण की प्रतिज्ञा भंग होने का विषाद और यह सत्य अनुमान कि मुझे युद्ध में विरत किये बिना धर्म युद्ध नहीं जीता जा सकता। फिर भी उसने मस्तिष्क और हृदय का संधान नहीं किया था।''

एकाएक उनके आसपास आदर मिश्रित स्वर उठने लगे थे। सावधान हलचल होने लगी थी। वातावरण में अजब शांत चेतना फैल रही थी। शीतल सुगंधित बयार डोलने लगी। भीष्म जान गए... कृष्ण पधार रहे हैं।

''कृष्ण कितना महान है, अद्‌भुत है। मेरा अंतिम समय जान कर मुझे कृतार्थ करने आ रहा है। इसीलिए कुछ लोग उसे ईश्वर का अवतार मानने लगे हैं।''

''वासुदेव कृष्ण का प्रणाम स्वीकार करें, पितामह! कैसे हैं? कष्ट तो आपको व्याप्त नहीं होता।''

''समय से आए हो मोहन, मेरे प्रयाण का समय निकट है। तुमने दर्शन दे कर कृतार्थ कर दिया। अंतिम समय में मेरा प्रणाम स्वीकार करो, गोविंद।''

कृष्ण विस्मित होते हुए- ''क्या बात है पितामह, आपकी वाणी में संशय है।''

''हाँ केशव, मैं ब्रह्मचारी मृत्यु को प्राप्त हो रहा हूँ। बगैर श्राद्ध-कर्म के गति कैसे होगी। हृदय में उपेक्षा की पीड़ा बाकी है, ऐसे में मुक्ति कहाँ? तुम कुछ कर सकते हो?''

कृष्ण अपनी मोहक हँसी के साथ बोले, ''आप तो परम ज्ञानी हैं पितामह। संसार में कोई भी पूर्ण नहीं है। चंद्रमा में भी दाग है। 'माता' शब्द में भी 'वि' उपसर्ग लग जाने से उसमें मानवीय कलुषताएं आ जाती हैं। वह स्वयं के पुत्र के लिए 'संरक्षण-ग्रंथि' से ग्रसित हो जाती है। प्रत्येक सामर्थ्यवान उसे निज पुत्रों का प्रतिद्वंद्वी प्रतीत होने लगता हैं चाहे कितना भी हितैषी क्यों न हो, पुत्रहित में वह उससे आशंकित रहती है और उसे दूर रखने का प्रयास करती है।''

''भगवान राम को ही देखिए, 'मर्यादा पुरुषोत्तम' थे। परंतु क्या विमाता को आश्वस्त कर सके? नहीं। कैकेयी ने उन्हें चौदह वर्षों के लिए दूर करके अपने पुत्र की सुरक्षा सुनिश्चित की थी। आप इसे अपनी हार न मानिए और अपने हृदय में न रखिए।''

एकाएक कृष्ण का स्वरूप तेजोमय होने लगा। चेहरा सैकड़ों सूर्यों की आभा से दीप्तमान हो गया। भीष्म को छोड़ सभी की आँखें प्रकाश से मुँदने लगीं। कृष्ण का दाहिना हाथ आकाश की ओर उठा। मेघगर्जन सी गंभीर वाणी में कहा, ''मैं वासुदेव कृष्ण, भीष्म की मुक्ति हेतु व्यवस्था देता हूँ- आज के बाद जो भी श्राद्ध-कर्म करेगा वह भगवान विवस्वान के बाद भीष्म पितामह को जल देगा। उसके बाद ही अपने पितरों को तर्पण करेगा।'' भीष्म को संबोधित करते हुए बोले, ''और पितामह आज से आपकी पीड़ा का थोड़ा भाग, आने वाले समय में हर विमाता का सुपुत्र भोगेगा। अब आप निश्चिंत रूप से गो-लोक में निवास करें।''

कृष्ण की मुद्रा धीरे-धीरे शांत और सामान्य होने लगी।

लोगों ने देखा पितामह मुक्त हो चुके थे।

❐❐❐

लावारिस

('हंस' में प्रकाशित)

नाइट ड्यूटी से सुबह घर वापस जाते रास्ते में ही मूड कुछ रोमांटिक हो रहा था। घर पहुँचने पर दरवाजा खुलने में थोड़ी देर होने पर खिजलाहट हुई। पत्नी ने दरवाजा खोला। शायद नहाने जा रही थी। दरवाजा खोलने की जल्दी में वह किसी तरह टावेल से तन ढाँप कर आई थी। ''क्या रूप निखरा है!'', मैंने कहा। पत्नी चेहरे पर वर्जनात्मक मुस्कान लिए हुए दरवाजा बंद करने मुड़ी। मैंने उसे पीछे से स्पर्श किया। उसने मुझे धीरे से कोहनी से दूर करना चाहा- ''उफ...।''

अचानक मेरे पेट में दर्द उठा। हल्की-सी चींख के साथ मेरी आँख खुल गई। मैं अब भी अस्पताल की नाइट ड्यूटी पर ही था। बैठे बैठे आँख लग गई थी। हे भगवान...! इतने श्रृंगारिक सपने के बाद ऐसा दर्द। सोचा, रात छोले खाने की वजह से बदहजमी हो गई है। तभी दर्द की एक लहर उठी- असहनीय। किसी तरह इमरजेंसी पहुँचा। इमरजेंसी डॉक्टर ने लिटा कर देखा। पेट के नीचे की तरफ दाहिने हिस्से को दबाते ही मुझे जोर का दर्द महसूस हुआ। डॉक्टर सिर हिलाते हुए बोला, ''अपेन्डिक्स लगती है, भर्ती करो!''

स्ट्रेचर पर लाद कर मुझे इमरजेंसी वार्ड में दाखिल कर दिया गया। वहाँ मेरे साथ भी वही ड्रिप, इंजेक्शन का सिलसिला शुरू हो गया जिसे मैं रोज ही दूसरे मरीजों के साथ होता देखता था। थोड़ी देर में आराम होने लगा। मुझे नींद-सी आने लगी थी कि सर्जन साहब अपने मॉर्निंग राउंड पर आ गए। सिस्टर ने बताया, ''अपने अस्पताल का ही सिक्योरिटी गार्ड है। भला आदमी है, अपेन्डिक्स हो गया है।'' मैंने पूछना चाहा- ''बुरे आदमियों को अपेन्डिक्स नहीं होता क्या?'' जोर का दर्द फिर उठा। सर्जन ने भी अपने हिस्से का पेट टटोलने की जिम्मेदारी पूरी कर ली थी। मैंने मन में सर्जन को कोसते हुए सोचा- सिस्टर बता रही है कि अपेन्डिक्स

है, फिर भी दोबारा कोंचने की क्या जरूरत आन पड़ी? सर्जन कुछ ज्यादा ही मगरूर होते हैं। सर्जन ने सिस्टर से मेरी खून और पेशाब की जाँच भेजने को कहा और मुझसे बोले, ''अपेन्डिक्स ही है, पर शायद ऑपरेशन की जरूरत न पड़े। एक-दो दिन में ही ठीक होकर घर जा सकोगे।'' मैं तय नहीं कर पा रहा था कि सर्जन की आवाज में ऑपरेशन न कर पाने का अफसोस है अथवा एक्स्ट्रा ऑपरेशन करने से बचने की राहत। मुझे वार्ड में ट्रांसफर करने का आदेश देकर वह दूसरे मरीज को देखने लगे।

वार्डब्वाय मुझे स्ट्रेचर पर लाद कर रेगुलर वार्ड छोड़ने चला। ऊबड़खाबड़ रास्ते पर भी गाते हुए स्ट्रेचर खींच रहा था। झटकों से मेरा दर्द बढ़ रहा था। उस पर क्या- 'वै डोलते मन आपने, उनके फाटत अंग।' वार्ड में एकदम कार्नर के बेड पर पहुँच कर खँखारता हुए बोला, ''अपने आप बेड पर खिसक जाओगे या मैं हाथ लगाऊँ?'' मैंने स्वयं ही धीरे से खिसकने में गनीमत समझी। वह उसी मतवाले अंदाज में स्ट्रेचर वापस लेकर चल पड़ा। जाते-जाते सिस्टर को बोलता गया, ''अपेन्डिक्स का मरीज कॉर्नर बेड पर लिटा दिया।'' सिस्टर चीखी, ''फाइल तो देते जाओ। ट्रीटमेंट क्या दूँगी।''

वार्डब्याव जाते-जाते बुदबुदाया, ''स्साली... आज फिर मरद से लड़ कर आई है। सुबह-सुबह पारा गर्म है।''

थोड़ी देर बाद वही वार्डब्वाय स्ट्रेचर खड़खड़ाते एक और मरीज मेरे सामने के कॉर्नर के बेड पर ले आया। पड़ोसी मरीज के रिश्तेदार से बोला, ''भाई! जरा हाथ लगाना। यह खाते-पीते घर का लगता है।'' रिश्तेदार ने वार्डब्वाय की सेहत देखकर चुपचाप मदद करने में ही भलाई समझी। वह मरीज शायद ज्यादा ही सीरियस था। उसकी साँस बहुत तेज चल रही थीं और घरघरा रही थीं।

''यह लीजिए दो फाइल। एक अपेन्डिक्स की और एक लावारिस की। दोनों को कॉर्नर बेड पे आमने-सामने लिटा दिया है। लावारिस सीरियस है। उसका इलाज पहले शुरू कर दो, नहीं तुम यहाँ बैठी रहोगी और वह टें हो जाएगा।'' वह सिस्टर को चिढ़ाता हुआ-सा बोला। सिस्टर को फिर चीखने का अवसर मिला।

''अरे देख ले... बचेगा तो वह ऐसे भी नहीं।'' वार्डब्वाय बड़बड़ाता हुआ चला गया।

मैं वार्डब्वाय की भविष्यवाणी को कनफर्म करने के लिए बिस्तर से थोड़ा उचका ही था कि दर्द के डर से फिर लेट गया।

मरीज वाकई बहुत सीरियस था। पर अब उसकी साँसे रुक-रुक कर आ रही थीं। तभी सिस्टर दोनों नए मरीजों की फाइल लेकर आती दिखी। लावारिस मरीज पर नजर पड़ते ही वह चौंकी और दौड़ कर झटपट इजेंक्शन मरीज को लगाते हुए एक से ऑक्सीजन लगाने को बोली और ट्रेनी सिस्टर से कहा, ''छोटी! तुम जल्दी से भागकर ड्यूटी डॉक्टर को बुला लाओ, कहना एक लावारिस मरीज बहुत सीरियस है, आकर देख ले...। कॉल लिखने का वक्त नहीं है।''

मैं सिस्टर के बदले हुए मुन्तजिम रवैये को देख कर हैरान हो रहा था। मरीज की हालत गंभीर देख किस प्रकार अपने घर की प्रॉब्लम भूल कैसी तत्परता से अपना दायित्व निबाह रही थी। डॉक्टर साहब भी फुर्ती से आए। एक-दो इंजेक्शन दिए। मरीज का सीना दबाया, पर मरीज इलाज के परे था।

डॉक्टर के डेथ नोट लिखने के बाद सिस्टर ने बताया कि यह लावारिस था। पुलिस रिपोर्ट लिख दीजिए जिससे कि इसके घरवालों को इन्फार्म किया जा सके। यह 'लावारिस' था, अननोन नहीं।

घरवालों के नाम से मुझे अपने घरवाले याद आ गये। साथी सिक्योरिटी गार्ड के छुट्टी जाने पर मुझे डे और नाइट ड्यूटी एक साथ करनी पड़ रही थी। सुबह घर न जाकर यहीं एम्बुलेंस रूम में सो जाता, नीद पूरी कर आफ्टर नून फिर ड्यूटी आ जाता था, क्योंकि थोड़ी देर के लिए आने-जाने में पैसा और समय बेकार ही बर्बाद होता। घर सूचना दे दी थी। परन्तु बीमारी के बारे में कोई सूचना मेरे परिवार वालों को नहीं थी। सोचा, कल-परसों तक ऑपरेशन के बगैर ही ठीक हो जाऊँगा... बेकार में पत्नी और बूढ़े अम्मा-बाबू को परेशानी होगी। जैसे ड्यूटी पर वैसे अब भी अस्पताल पड़ा रहूँगा। अस्पताल में सभी परिचित हैं।

लावारिस मरीज का चेहरा कम्बल से भली प्रकार से ढँक कर पलंग के चारों ओर स्क्रीन लगाकर पर्दा कर दिया था। वार्ड में शान्ति हो गई थी। मेरा दर्द भी कम होने लगा था। शायद मुझे नींद आ गई।

पता नहीं कितनी देर बाद मुझे लगा कि कॉरीडोर में मेरी पत्नी खड़ी है। उसका मुँह दूसरी तरफ है। पल्लू के पीछे से उसकी गोरी पीठ बड़ी

आकर्षक लग रही थी। मैंने सोचा, उम्र का भी क्या तकाज़ा है कि तीन दिन घर न पहुँचने पर नींद में भी पत्नी की देहयष्टि के सपने आ रहे हैं। मैं मुस्कुरा उठा।

पर यह क्या? मेरी पत्नी घूँघट से मुँह ढके रोती हुई मेरे पलंग की ओर दौड़ी। उसके पीछे अम्मा और बाबू जी। साथ-साथ कुछ पड़ोसी भी तेजी से वार्ड में घुसे और सब के सब मृत लावारिस मरीज के पलंग की ओर चले गए। रोना-पीटना मच गया। मुझे लगा कि मरने वाला लावारिस हो सकता है कि कोई पड़ोस का रहने वाला था। पर अम्मा-बाबू इतना क्यों परेशान हैं? क्या हमारा कोई नजदीकी रिश्तेदार है? तभी स्क्रीन स्टैंड के बीच से देखा कि मेरी पत्नी लावारिस की देह से लिपट कर रो रही थी। मेरा असमंजस और जिज्ञासा चरम सीमा पर थे। तय पाया कि मैं जाग रहा हूँ और यह स्वप्न नहीं है।

मैंने थोड़ा उठकर धीरे से बाबू को आवाज दी, ''बाबू''। शोर में बाबू ने शायद नहीं सुना। बाबू धीरे-से मेरी ओर मुड़े। उनका चेहरा आँसुओं में डूबा था। अधपके मोतियाबिंद और आँसुओं की वजह से उन्हें शायद कुछ दिखाई नहीं पड़ा।

मैंने फिर जोर से पुकारा, ''बाऽऽऽबू! यह कौन है?'' अबकी बार बाबू ने मेरी आवाज पहचान ली। उनके चेहरे पर दुख के भाव की जगह आश्चर्य उभरा। जल्दी से आँसू पोंछ कर बड़ी व्याकुलता से उन्होंने मेरी ओर देखा और पहचाना पहचान कर चिल्लाये, ''अरे बहुरिया, ललुआ तो हियाँ है।'' कहकर मुझसे लिपट कर जोर-जोर से रोने लगे- मैं हक्का-बक्का। तभी पड़ोसी ने मुड़कर देखा और चिल्लाया- ''लालमनी तो यहाँ है।'' सुनकर मेरी माँ और पत्नी भी मृतक लावारिस को छोड़ मुझे पहचान कर मुझसे लिपट कर रोने लगीं। मरीजों के रिश्तेदारों का जमाव होने लगा था कि पड़ोसी चिल्ला कर बोले, ''देखो तो स्सालों को। अच्छे-खासे जिन्दा आदमी की मरने की खबर घर भेज दी- जवान बीबी और बूढ़े माँ-बाप का रो-रो कर क्या हाल हो गया।''

तब तक पड़ोस के वार्ड से भी लोग आकर एकत्र हो गए। भीड़ बढ़ती देख किसी ने ड्यूटी डॉक्टर व अधीक्षक को सूचित कर दिया। वह भी सारा काम छोड़कर तत्काल पहुँच गए। आरोपों का दौर चल पड़ा, अधीक्षक सुलझे अधिकारी थे। स्थिति की नजाकत समझकर सबसे पहले उन्होंने स्वयं गलती मान ली और अस्पताल के सभी कर्मचारियों की ओर

से सबकी तरफ से हाथ जोड़कर माफी माँग ली तथा जाँच करके दोषी के विरुद्ध कार्रवाई का आश्वासन देकर भीड़ को विदा किया। सिस्टर ने बताया, ''वार्डब्याव एक मरीज के बारे में न बता कर एक साथ ही दोनों फाइल छोड़ गया। मैं मरीज कन्फर्म करने जैसे ही वार्ड पहुँची कि लावारिस मरीज को सीरियस देख उपचार में लग जाने के कारण गलती हो गई और डेथ नोट्स के लिए दूसरी फाइल दे गई।'' उसकी इस गलती के चलते पुलिस द्वारा मृत्यु की खबर गलती से मेरे घर पहुँच गई। मेरे घरवाले भी बगैर-मृतक की पहचान किए शोक मनाने लगे। अधीक्षक ने समझाया कि कार्य की अधिकता के कारण कभी मानवीय त्रुटियाँ हो जाती हैं। इन्चार्ज के माफी माँगने और सिस्टर को रोता देख घरवालों ने सभी को माफ कर दिया।

मैं अपने पलंग पर लेटा अपनी पत्नी को नजदीक पाकर प्रसन्न था। वह प्यार से मेरा सिर सहला रही थी। मैंने उससे कहा, ''मैं तो उस लावारिस मरीज का शुक्रगुजार हूँ जिसने मेरी मृत्यु खुद पर ओढ़ ली और तुम्हें बुलाकर मेरे पास बैठा दिया। मैं अभी तक इस बिस्तरे में पड़े-पड़े तुम्हारे ही सपने देख रहा था।''

''और रात-रात बाहर रहो। ये तो होना ही था।'' पत्नी यह कहकर मुस्कराई और हौले से मेरे गाल खींच दिए। मैं प्रसन्न होकर हँसना चाहता था कि पहले के दर्द की याद कर शांत हो गया।''

❐❐❐

अजा गल-घंटि
(बकरी के गले की घंटी)

हल्की बारिश हो चुकी थी। मौसम रूमानी था या नहीं, पर माया को शैम्पेन के सुरूर में रूमानी ही महसूस हो रहा था। शलभ उससे सट कर बैठना चाहता था। पर वह कोई विघ्न नहीं चाहती थी इसलिये उसने धीरे, पर दृढ़ता से उसे दूर रहने का संकेत दिया। शलभ सिकुड़ कर बैठ गया। माया विन्डो ग्लास पर सिर टिका कर न देखते हुए भी सड़क देख रही थी।

अचानक गाड़ी में जोर का ब्रेक लगा। माया झटके से सतर्क हो गई। एक चौदह पन्द्रह वर्ष की लड़की भागती हुई गाड़ी के सामने आ गई थी। ड्राइवर ने तत्काल ब्रेक न लगाया होता तो शायद लड़की पहिये के नीचे आ गई होती। भीड़ एकत्र हो गई। लोग ड्राइवर की तारीफ कर रहे थे।

माया ने देखा कि दो लोग भीड़ को देख कर सड़क के किनारे ठिठक कर आपस में बात कर रहे थे। वह फौरन समझ गई कि यह लड़की उन्हीं दो लोगों से बच कर भाग रही थी और गाड़ी के नीचे आते आते बची। लड़की का इन लोगों से इतना भयभीत होने का कोई भयानक कारण होगा। उसे पन्द्रह साल पहले अपनी स्थिति याद आ गई कि वह भी ऐसे ही भाग रही थी जब उसे भी किसी महिला ने सहारा दिया।

शलभ के मना करने के बावजूद उसने कार से उतर कर लड़की को उठाया। उठाने में ही लड़की ने उन आदमियों की ओर इशारा किया। माया ने धीरे से पूछा, ''क्या यह लोग तुम्हारा पीछा कर रहे हैं?'' लड़की सहानुभूति पाकर उससे लिपट गई और सुबकते हुए हामी में सिर हिलाया और बचाने की याचना करने लगी। माया ने उसे आश्वस्त कर कार में बैठने को कहा। कार में बैठाते समय उसने उन दोनों लोगों को आग्नेय दृष्टि से घूरा। दोनों घबरा कर पीछे लौट गये।

शलभ के चेहरे से लग रहा था कि उसे इस तरह एक अनजान

लड़की को गाड़ी में बैठा कर चल देना अच्छा नहीं लग रहा था। वह भी अपनी जगह सही था। नाबालिग अनजान लड़की कभी भी मुसीबत का कारण बन सकती थी। वह बोला, ''क्या हम इसे घर छोड़ेंगें?''

माया ने लड़की का सिर सहलाते हुए कहा, ''यदि इसका घर होता तो इसे उन बदमाशों से बचने के लिए सड़क पर नहीं भागना पड़ता।'' लड़की ने सुबकते हुए माया की बात पर हामी में सिर हिलाया। शलभ समझ नहीं पा रहा था कि माया बगैर पूछे ही सब कुछ कैसे जानती है। पर माया को उस लड़की में अपनी खुद की कहानी दुहराती हुई जान पड़ रही थी। वास्तव में शायद हर रोज न जाने कितनी ही जगह यह कहानी दुहराई जाती है जिसमें नादान किशोरियों को घर से बहला कर जिस्मफरोशी के धन्धे में झोंका जाता है। पन्द्रह साल पहले माया भाग्यशाली थी कि उसे शरण देने के लिये कोई भले दिल की महिला मिल गई थी। ऐसा नहीं कि माया जिस्मफरोशी से बच गई थी... नहीं। वास्तव में माया जिस्मफरोशी के ही धन्धों में थी मगर... अपनी शर्तों पर।

जिस्म का धन्धा शायद आदम की संतानों के समय से ही चल पड़ा है। बदलते समय के अनुसार इसके नाम बदलते गये। वेश्या, नगर वधू, देवदासी, काल गर्ल और सबसे आधुनिक सोसाइटी गर्ल शब्दों से जाने जाने वाली यह बालाएं अबके कार्पोरेट कल्चर का अभिन्न हिस्सा बन कर राजनीति और कार्पोरेट जगत में स्टेटस सिम्बल बन गई। परन्तु पहले के शब्दों से जानी जाने वाली लड़कियों से आज की यह सोसाइटी गर्ल्स कहीं ज्यादा स्वतंत्र थीं और अपनी मर्जी से काम करने में सक्षम हो गई थीं। माया भी ऐसी ही मुक्त नारी बन चुकी थी जो केवल वीक एन्ड 'डेट्स' पर ही जाती थीं। बाकी वीक डेज में वह एक मल्टीनेशनल फर्म के अधेड़ मालिक की सेक्रेट्री थी। यह बात दीगर है कि कुछ 'वीक एन्ड्स' उसे अपने मालिक के क्लाइंट्स के साथ बिताने पड़ते थे। परन्तु इसमें उसे कोई आपत्ति नहीं होती। वह मानती थी कि वह इसी काम के लिए फर्म से सैलरी पाती थी। महीने में एक आध बार उसे अपने मालिक के साथ टूर पर भी जाना होता था। उसका मालिक कार्पोरेट जगत में अपने मैनर्स और बिजनेस सेन्स के अलावा सुन्दर और ग्रेसफुल सेक्रेट्री के लिए जाना जाता था। बाकी बचे वीक एन्ड्स को माया अपनी मर्जी से गुजारती थी। यह उसकी 'प्राइवेट प्रैक्टिस' थी। डेट पर जाने के लिए क्लाइंट भी वही तय करती थी और फीस रु0 तीस हजार एडवान्स लेना नहीं भूलती।

'हाई प्राइस टैग' होने से वह ऐसी क्रीमी लेयर में मूव करती थी जहाँ स्कैन्डल नहीं होते। यह था माया का अपनी शर्तों पर जीना।

फार्म हाउस में पहुँच कर शलभ ने एक बार फिर पूछा, ''यह लड़की कहाँ रुकेगी?''

माया ने उसके हाथ को आत्मीयता से दबा कर कहा, ''क्या तुम्हारा फार्म हाउस इतना छोटा है कि एक साढ़े पाँच फिट की लड़की नहीं रह सकती। यह हमारे साथ ही ऐन्ट रूम में रूक जायेगी। इस समय इसे अकेले नहीं छोड़ा जा सकता।'' शलभ माया को कभी 'न' नहीं कर पाता था सो इस पर भी उसे राजी होना ही था।

फार्म हाउस पहुँच कर लड़की कार से उतर कर जैसे ही चलने को हुई कि लड़खड़ा कर गिर पड़ी। शलभ ने आश्चर्य से पूछा, ''क्या हुआ?'' माया ने लड़की को सहारा देते हुए कहा, ''इसको चलने में तकलीफ हो रही है।'' माया समझ रही थी पर शलभ को अचरज हो रहा था कि कुछ देर पहले तो यह लड़की इतनी तेज भाग रही थी, उसे एकाएक क्या हो गया कि इसे अब चलने के लिए भी सहारे की जरूरत पड़ रही है।

फार्म हाउस के स्टूडियो अपार्टमेंट में माया लड़की को सीधे बाथरूम ले गई। बाथ टब में गर्म पानी भर कर उसने लड़की को कपड़ों समेत ही टब में बैठने को कहा। उसके बाद हैंगर में टंगे गाउन की ओर इशारा करते हुए बोली, ''सिकाई के बाद दर्द कम हो जाएगा तब टब से बाहर निकल कर, अच्छी तरह नहा कर, यह गाउन पहन कर बाहर आना।''

लड़की पिछले कुछ दिनों में इतना कुछ देख चुकी थी कि उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह किस पर विश्वास करे किस पर न करे। हर कोई पहले बड़े प्यार से मिलता पर अंत में उसी देह लोलुपता और देह व्यापार मे धकेलने का प्रयास करता।

गरम पानी में बैठ कर उसे बड़ी राहत महसूस हुई। जांघों के दर्द में राहत के साथ महसूस हो रहा था कि पिछले दिनों की सारी गंदगी भी धीरे धीरे दूर हो रही थी। शायद उसे नींद आ गई या जागते ही अपनी पुरानी खुशहाल जिंदगी का सपना देखने लगी।

तराई के आँचल में नदी किनारे एक गाँव जिसे प्रकृति ने अपूर्व सौंदर्य प्रदान किया था। प्रदूषणरहित वातावरण के चलते सभी स्वस्थ और

सुंदर थे। जमीन उपजाऊ थी पर हर साल की बाढ़ की वजह से केवल एक फसल ही हो पाती थी। बाढ़ में मवेशियों का नुकसान होता था। कुल मिलाकर गाँव में गरीबी का स्थायी प्रवास था। थोड़ी बड़ी होने पर रधिया को समझ आना शुरू हुआ कि गरीबी क्या होती है। दो भाई चार बहनों का बड़ा परिवार। उसके पोषण की कठिनाई क्या होती है। पिता रोज दिन में माँ को बच्चे पर बच्चा पैदा करने के लिए कोसता पर रात में दारू के नशे में भूल जाता कि बच्चे उसी की जबरदस्ती का परिणाम है। माँ तो रात होते ही बच्चों के बीच छुपने का प्रयास करती।

लड़कियाँ माँ के ज्यादा नजदीक होती हैं। माँ का दर्द व काम बँटाने का प्रयास करती हैं। इसलिए वह भी बड़ी लड़की होने के नाते घर के काम में माँ का हाथ बँटाती, गाय के लिए घास काट लाती, छोटे भाई बहनों को संभालती।

गाँव में गरीबी के चलते काफी युवा बड़े शहरों की ओर काम करने निकल जाते। पर जब वह तीज त्योहार में घर लौटते उनका परिवेश एकदम बदला होता। वह अच्छे कपड़े पहने होते, व उनके बक्से में नातेदारों के लिए (सस्ते) गिफ्ट्स जरूर होते। ऐसे लोग गाँव की युवतियों को बहुत आकर्षित करते। कम उम्र की ललनाएं उन्हें देवर बनाकर चाय-पानी कराने को उत्सुक रहतीं। बदले में कुछ सुंदर भौजाइयाँ शहर के सस्ते कंगन, चमकीली टिकुली बिंदी, और कुछ खास अंतरंग भाभियाँ लिपिस्टिक और अधोवस्त्र पाकर निहाल होती।

ऐसे ही एक 20-22 का पड़ोसी युवक जो पिछले साल तक उसे 'नकफूसरी' कह कर चिढ़ाता, चोटी खींचता पर कोई गिफ्ट नहीं देता था। एकाएक उसके लिए गिफ्ट लाने लगा। दिन में एक बार उसकी माँ को चाची कह चाय की डिमांड करता। हालाँकि माँ को भी गिफ्ट देने की कोशिश की पर माँ ने सख्ती से मना कर दिया और रधिया को तो विशेष रूप से वर्जित किया कि वह कोई गिफ्ट न ले। रधिया को चिढ़ होती। जब सभी को गिफ्ट लेने में कोई परहेज नहीं तो सिर्फ अम्मा ही काहे नाक चढ़ाये रहती हैं। चलो तुम्हें नहीं लेना तो न लो। मुझे काहे मना करती हो। चाय क्या सेन्तमेंत पिला दें। चाय की पत्ती और चीनी क्या मुफ्त में आती है।

और हद हो गई जब एक बार दिप्पू भइया शहर से अम्मा के लिए महकुवा चाय लाये, वह भी अम्मा ने यह कहकर लौटा दी कि इसे

अपनी माँ को देना उसे भी तो 'गिरहस्ती' में जरूरत होगी।

''तब से दिप्पू भइया ने घर आना कम कर दिया, पर जब भी रधिया को बाहर देखते तो जरूर रुक कर बात करते। कभी सिर सहला कर टॉफी देते और कहते इसे यहीं खा लो नहीं तुम्हारी मम्मी नाराज न हों। जब मैंने पहली टॉफी खाई... ओह! कितनी स्वाद! मीठी मीठी! मुँह में ही सट्ट से घुल गई। छोटी को भी देने के लिए एक और टाफी माँगी... छोटी को मीठा बहुत पसंद है। पर भइया ने मुझे और टॉफी देते हुए कहा, ''छोटी अभी छोटी है। जब बड़ी हो जायेगी तब उसके लिए भी टाफी लाऊँगा।'' फिर मेरा गाल सहलाते हुए बोले, ''छोटी हो सकता है माँ से बता दे तो तुम्हें टाफी मिलना बंद हो जायेगी।''

इसके बाद जब तक भइया गाँव में रुके, मैं जानबूझ कर दो तीन बार उनके सामने पड़ने की कोशिश करती और हर बार भइया मेरे गाल सहला कर मुझे टाफी देते। एक दिन उन्होंने मुझे अलग बुला कर दो टाफी दी और बताया कि वह वापस शहर जा रहे हैं। मैंने टॉफी खाते पूछा, ''कब आओगे।'' तो बोले, ''छुट्टी मिलने पर ही आ पाऊँगा, पर क्या तुम मुझे याद करोगी।'' मैंने हामी में सर हिलाया। भइया ने कहा, ''अबकी बार मैं तुम्हारे लिए चाकलेट लाऊँगा वह और स्वादिष्ट होती है।'' यह कह कर मुझे चिपटा लिया। मुझे अजीब लगा क्योंकि अब तो बाबा भी मुझे ऐसे प्यार नहीं करते। हाँ छोटी को जरूर गोद में बैठाते। कुल मिला कर मुझे अच्छा मालूम हुआ।''

''भइया चले गए पर मुझे उनकी याद आती थी। कभी कभी काम में गलती हो जाती तो माँ डाँटती कि तुम्हारा ध्यान किधर है? मैं मन ही मन मुस्कराती कि अगर बता दिया तो और डाँटेगी। अब मैं छोटी को दो तीन बार लिपटा कर प्यार जरूर करती। क्योंकि अब यह अच्छा लगने लगा था।

एक दिन भोर ही मुझे ऐसा लगा कि कमरे की टूटी खिड़की से भइया मुझे देख रहे हैं। तभी माँ ने आवाज दी। भइया का चेहरा गायब हो गया। मुझे लगा जैसे मुझे भ्रम हुआ हो। सुबह जब गाय के लिए घास काटने गई तो भइया को खड़े पाया। मैं लपक कर उनके पास गई और पूछा, ''कब आए? मैंने आज भोर में ही तुम्हारा सपना देखा।'' भइया कंधा सहलाते हुए बोले, 'सपना नहीं मैं स्वयं तुम्हें बताना चाहता था कि मैं वापस आ गया और तुम्हारे लिए चाकलेट भी लाया हूँ।'' यह कहते

हुए उन्होंने मेरे मुँह में बड़े प्यार से चाकलेट रख दी और कहा, ''इसे धीरे-धीरे चूसो। चाकलेट के सामने टाफी का स्वाद कुछ नहीं।'' मैंने पूछा, ''शहर में इतनी अच्छी चीजें मिलती हैं, ऐसी हमारे गाँव में क्यों नहीं मिलती?'' भइया ने कहा, ''अगर मिलें भी तो खरीदेगा कौन? बहुत मंहगी आती हैं। यहाँ गाँव में तो दो जून की रोटी का जुगाड़ भी मुश्किल है। वरना मुझे शहर जाने की क्या जरूरत है।'' ''मैं जब तक चाकलेट खाती रही भइया मुझे जगह-जगह सहलाते रहे। मुझे चाकलेट और उनका सहलाना दोनों ही अच्छा लग रहा था।''

घर वापस आते समय मेरे कदम लड़खड़ाए पर मैं संभल गई। सोचा शायद चाकलेट का असर हो। बहरहाल घर में न तो भइया और न ही चाकलेट के बारे में किसी को कुछ बताया। दो दिन तक सुबह शाम हम लोग मिलते। मैं चाकलेट खाती कभी-कभी भइया से खुद ही लिपट जाती कभी वह ऊपर से नीचे तक मुझे छूते। मुझे थरथराहट होती तो मुझे जोर से चिपटा लेते। अब दिन रात मैं हल्की बेचैनी में रहती कि कब मौका मिले और कब भइया से मिलूँ। इसमें चाकलेट का स्वाद या भइया का स्पर्श कौन मुझे ज्यादा खींचता मैं नहीं जानती। हाँ माँ ने एक बार गुस्से में टोका, ''तू एकाएक इतनी बड़ी क्यों लगने लगी। आइंदा बगैर चुन्नी के बाहर मत जाया कर।''

''धीरे-धीरे वह दिप्पू, जो कि शहर जाकर दीपक बन गया था, उसके स्पर्श और चाकलेट के स्वाद का इतना पागलपन चढ़ गया कि जब घर के लोग सो गए तो वह अंधेरी रात में दीपक के कहने पर उससे मिलने चल दी। दीपक की चाकलेट पर ध्यान न देकर मैं सीधे उससे लिपट गई। दीपक से लिपटते समय उसके मन में नशे और उन्माद मे धुत अपने बाबा और माँ की छाया घूम रही थी। दीपक अपने प्रयास का वांछित प्रभाव देख वैसी ही कुटिलता से मुस्कराया जैसे शिकारी अपने शिकार को जाल में आते देख मुस्कराता है। काश... रधिया उस समय दीपक का चेहरा देख लेती तो शायद एक त्रासदी टल जाती। पर नहीं, मैं उसका चेहरा नहीं देख पाई और और उसके आगे वह हुआ जो नहीं होना चाहिए था। मान की सभी वर्जनाएं नाकाम रहीं। जब मुझको होश आया तो मैं दीपक से लिपटी थी। दीपक हल्के से मुस्करा रहा था पर उसकी जलती आँखें कुछ और ही बयाँ कर रही थी। उधर मैंने आँखें बंद कर रखी थीं। कपड़े ठीक करते ही मुझे घर की याद आई। कहीं घर में

कोई जग तो नहीं रहा होगा? एक अंजाने भय की लहर दौड़ी पर अगले ही क्षण दीपक से बोली, ''अगर घर में सब ठीक रहा तो कल भी इसी जगह आ जाऊँगी। तुम तो आओगे न?''

दीपक ने विजयी मुस्कान के साथ कहा, ''हाँ हाँ! क्यों नहीं।''

''अगली शाम से ही माँ को पेट में शूल का दर्द उठा। बाबा उन्हें कस्बे के डॉक्टर को दिखा कर सुई लगवा लाये। माँ को आराम हो गया। पर रात होते-होते फिर बड़ी तेज दर्द होने लगा। दर्द और दर्द के साथ उल्टी। माँ रात भर कराहती रही। मुझको बार-बार माँ के पेट सेंकने के लिए गरम पानी देना और उल्टी की सफाई करनी पड़ी। आँख झपकाने का ही टाइम नहीं मिला तो दीपक से मिलने कैसे जाती।

अगले दिन बाबा फिर माँ को कस्बे ले गए। अबकी माँ को सुई लगाने के अलावा बोतल भी चढ़ाई गई। मैं दिन में भी दीपक से नहीं मिल पायी क्योंकि छोटे भाई बहन और सारा घर मेरे ही जिम्मे था। बड़ी खीझ, बेचैनी हो रही थी। पता नहीं चाकलेट न मिलने या दीपक से न मिल पाने में कौन सी चीज मुझे ज्यादा बेचैन कर रही थी। फिर एकाएक दीपक का चेहरा खिड़की में दिखा। उसे माँ की बीमारी का पता चल चुका था। तीन चार चाकलेट देकर बोला, ''मुझे कुछ दिन के लिए शहर जाना होगा। मालिक ने अगर हाँ की तो अगली बार तुझे भी साथ शहर ले चलूँगा।'' मैंने झपट कर उसके हाथ से चाकलेट ले ली। और खाने लगी। यह देख दीपक कुटिलता से मुस्कराया। चाकलेट खाने से उसकी बेचैनी कुछ कम हुई तो दीपक की शहर ले जाने की बात ध्यान आई। मुँह बनाकर मैंने सोचा, हूँह! बगैर अम्मा बाबा के शहर कौन जायेगा?''

''माँ शाम को घर लौटी। दर्द तो नहीं था पर कमजोरी अलबत्ता बहुत थी। मैंने माँ को चावल का माँड़ और उसमे नमक, चीनी, नींबू डाल कर कई बार दिया। एक बार माँ मेरा सिर सहला कर बोली ''मेरी बिटिया कितनी अच्छी है, कितनी सेवा करती है भगवान तुझे खुश रखे। जब तू चली जायेगी तो मैं कैसे रहूँगी?'' मुझे दीपक की शहर जाने वाली बात फिर याद आ गई। मैंने माँ से हँसते हुए कहा, ''मैं तुझे छोड़ कर कहीं नहीं जाने वाली।''

अपने दिवास्वप्न में कब वह नहाने के बाद गाउन पहन कर बाहर आ चुकी थी और माया बड़े गौर से उसकी कहानी सुन रही थी। रधिया ने अपना कथ्य जारी रखा।

''दीपक की दी चाकलेट खत्म होते ही फिर शरीर में अजब सी बेचैनी, घबराहट शुरू हो गई। काम में मन नहीं लग रहा था। दो तीन बार बच्चों की पिटाई भी कर दी तब माँ ने डाँटा, ''आज तुझे क्या हो गया है? काहे तू इतना तड़क-भड़क रही है समझ में नहीं आ रहा है?''

''समझ तो मैं भी नहीं पा रही थी?''

माया ने पूछा, ''तुम्हें दीपक या उसके स्पर्श की याद तो नहीं बेचैन कर रही थी?''

''वह भी थी पर चाकलेट की कमी ज्यादा मार रही थी।'' रधिया ने बताया।

''हो सकता है कि वह चाकलेट नशीली हो जिसकी तुम्हें लत लग गई हो।'' माया ने गुस्से में कहा।

रधिया ने घबरा कर माया का हाथ पकड़ पूछा, ''क्या ऐसा भी हो सकता है?'' माया ने कहा, ''हाँ, तभी तो तुम्हें उसकी तलब और बेचैनी हो रही थी। खैर आगे बताओ।''

''एक रात जब मुझसे और बर्दाश्त नहीं हुआ तो मैं चुपचाप उठ कर वहीं पहुँची जहाँ दीपक से मिलती थी। मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब मैंने दीपक को वहीं खड़े पाया। मैं दौड़ कर उसके पास गई और उससे चाकलेट माँगी। चाकलेट खाने के बाद फिर वही हुआ जो नहीं होना चाहिए।''

''चलते समय दीपक ने मुझसे कहा, ''यदि तुम्हें चाकलेट और मेरा साथ चाहिए तो परसों रात यहाँ पर आ जाना। हम लोग शहर निकल चलेंगें। किसी को बताना नहीं वरना तुम मुझे और चाकलेट हमेशा के लिए भूल जाओ।''

''निश्चित समय पर मैं यंत्रचालित सी दीपक के पास पहुँच गई और उसके साथ शहर आ गई।''

''शहर आकर हम दीपक की खोली में रुके। दीपक ने मुझे चाकलेट दी, और दिन भर में तीन चार बार प्यार किया। शाम को जब हम दोनों खाली हो गए तो पेट के खाली होने का एहसास हुआ। दीपक खाना लेने के लिए बाहर गया। जाते समय वह दरवाजा बाहर से बंद कर गया। मैं थकान से सो गई। मैं खुश थी पर नींद में अम्मा आई, मेरा चेहरा हाथ में लेकर बोली, ''तुम चली आओगी तो मैं क्या करूँगी?'' मेरी नींद

खुल गई।

तभी बाहर से दरवाजा खुलने की आहट हुई। मैं करवट लेकर सोने का नाटक करने लगी और शायद झपकी भी लग गई हो कि उसके प्यार के स्पर्श से चेतना आई। वह मुझे प्यार कर रहा था। मैंने भी सहयोग किया। पर यह क्या?... दीपक के चिकने चेहरे कि जगह यह खुरदुरी दाढ़ी कैसे...? देशी शराब के साथ भयंकर पसीने की बदबू कैसे...? मैंने आँख खोली तो एक लाल आँखों वाला अंजान आदमी अपनी पूर्ण उत्तेजित नग्नता के साथ मुझसे लिपट पड़ा था। मेरी चीख उसने अपने हाथ से दबा दिया। मेरी ही चुन्नी से मेरा मुंह बांध कर मेरे शरीर को ही नहीं मेरी आत्मा को कलुषित कर डाला।''

और फिर... क्या दिन क्या रात कभी भी कोई आ जाता मुझे भंभोड़ता और चला जाता। कितने लोग आते थे मैंने यह गिनना ही छोड़ दिया। दीदी मेरा शरीर मेरी आत्मा दोनो अपवित्र हो चुकी हैं। इस घृणित देह को मैं छोड़ना चाहती हूँ।''

यह कह कर तेजी से उठी और बाथरूम के पर्दे को अपनी गर्दन में लपेट कर झूल कर फाँसी लगाने की कोशिश की। डिजाइनर पेलमेट में इतनी सामर्थ्य कहाँ जो एक स्वस्थ किशोरी का भार सह सके। पर्दामय पेलमेट फिक्सिंग के भरभरा कर गिर गया।

इस बार तो रधिया बच गई पर अगर उसे सबक नहीं दिया गया तो यह प्रयास फिर कर सकती है, और तब शायद वह आज की तरफ असफल न हो। इस दृढ़ निश्चय के साथ माया उठी, उसे पर्दे से अलग किया। दोनों हाथों से उसके बाल पकड़ कर तेजी से झकझोरते हुए पूछा, ''तू वाकई मरना चाहती है?'' आँसू भरी आँखों से उसने हाँ मे सिर हिलाया। उसे बाल खींचे जाने का दर्द महसूस नहीं हो रहा था। माया उसे बाल से ही खींचते हुए बाथरूम में ले गई और टब के पानी में उसका सिर दबा दिया। थोड़ी देर में ही रधिया फड़फड़ाने लगी तब माया ने उसे छोड़ा। उसका चेहरा अपनी ओर करके कहा, ''देखा! मरना कितना कष्टप्रद होता है।'' यह कह कर उसने रधिया को सीने से लगा लिया। और प्यार से उसका सिर सहलाते हुए बोली-''जिंदगी भगवान की दी हुई है। इसे ऐसे खत्म मत करो। क्या तुम मानती हो कि दुनिया में तुम ही एक लड़की हो दूषित हुई हो। तुमने पंच-कन्याओं का तो नाम सुना होगा।'' रधिया ने हामी में सिर हिलाया।

''यदि उन्होंने भी तुम्हारी तरह ही आत्महत्या कर ली होती तो आज प्रात: स्मरणीय कैसे होती।'' माया ने कहा।

''पर वे तो देवी थीं दीदी।'' रधिया ने कहा।

''नहीं! देवी वह तब बनीं जब उन्होंने अपने ऊपर हुए अत्याचार को अपना दोष या दूषण नहीं माना। बल्कि डट कर परिस्थितियों का सामना किया। उन्होंने समाज में यह सिद्ध किया कि दोषी वह नहीं थी। दोषी थे उन पर अत्याचार करने वाले। क्या तुम्हें नहीं मालूम कि दुर्योधन, जयद्रथ का क्या हश्र हुआ। देवराज होते हुए भी इन्द्र की पूजा नहीं होती। श्राप-मुक्ति से पहले उसकी ऐसी दुर्गति हुई कि वह किसी को मुँह भी नहीं दिखा सकता था।''

फिर माया ने रधिया की ठुड्ढी ऊपर करते हुए पूछा, ''जब यह स्त्रियाँ अपवित्र नहीं हुईं तो तुम कैसे अपने को अपवित्र मान रही हो।''

रधिया की आँखों में आँसू थे पर इतना समझाने के बाद भी वह आश्वस्त नहीं थी।

तब माया ने दोनों कंधों को मजबूती से पकड़ कर निर्णायक ब्रह्मास्त्र छोड़ा-

''तुम्हें आज जहाँ दर्द हो रहा है वही तुम्हारी सबसे बड़ी शक्ति है। पुरुष शारीरिक रूप से शक्तिशाली है, हिंस्र है, पर क्या तुम जानती हो कि बकरी ही बाघ की सबसे बड़ी कमजोरी होती है। कुमाऊँ की कहावत है कि बकरी की गले की घंटी सुनकर बाघ 'स्वाद-कातर' होकर खिंचा चला आता है, जहाँ घात में बैठा शिकारी उसे निशाना बना देता है, या पिंजड़े में कैद कर लेता है। इसी प्रकार पुरुष भी 'यौन-कातर' होता है। इस 'योनि-कामी' पुरुष को नारी बड़ी आसानी से अपने वश में कर 'रिंग-मास्टर' की भाँति नचा सकती है।''

रधिया सहानुभूति पाकर थोड़ा आश्वस्त हुई थी परन्तु माया की इतनी बेलाग बात सुनकर एक बार फिर सहम कर अपने में सिमट गई। एक बार फिर उसे वही जुगुप्सा का एहसास हुआ जो उसने पहली बार तार-तार होने पर महसूस की थी। पर यह अनुभूति मानसिक थी शारीरिक नहीं। उसे लगा कि इस बार माया उसके मानस को विकृत करना चाहती है।

माया ने बहुत दुनिया देख ली थी। वह चेहरे के भावों को खुली

किताब की तरह पढ़ सकती थी। वह समझ गई कि उसके शब्दों ने वांछित असर कर दिया था। बगैर 'शॉक-ट्रीटमेंट' के रधिया के मस्तिष्क को दुनिया की वास्तविकता समझाना असंभव था। उसने रधिया के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, ''डरो नहीं, दुनिया तुम्हारे बचपन के सपनों से बहुत अलग है। यह सपने कहानियों की राजकुमारियों के लिए सच हो सकते हैं। यौवन की दहलीज पर खड़ी अकेली सुंदर किशोरी के लिए नहीं। तुम जिस त्रासदी से गुजरी हो उससे मैं भी गुजर चुकी हूँ और तुम्हारी तरह मुझे भी एक भुक्त-भोगी महिला मिली, जिसने मुझे अपने पैरों पर खड़े होने का संबल दिया।''

वीक-एंड पर वापस लौटते समय शलभ ने नोटिस किया कि रधिया की लंबाई पहले से कहीं ज्यादा लग रही थी...। अब उसके चेहरे पर लाचारी बिल्कुल नहीं थी। एक अजब सी शालीनता थी। क्यों न हो? माया ने उसका ब्रेन-वाश जो कर दिया था। माया ने उसे बताया कि 15 वर्ष पहले वह उसे भी एक महिला ने सहारा दिया जो कोठे पर धंधा करती थी। उस कोठे वाली बाई ने उसे समझाया कि अब तुम्हारे घर वाले भी तुझे वापस नहीं लेंगे। तुम्हें अपने शरीर के सहारे ही जीवित रहना होगा, चाहे लाचारी में अत्याचार सहते हुए या हालात से समझौता करके अपनी शर्तों पर और अपनी मर्जी से। माया ने दूसरा विकल्प चुना, और उसका उसे कोई अफसोस नहीं।

रधिया को उसने बताया कि इन 15 वर्षों में नई उम्र के लड़कों का नजरिया अब बदल गया है। शारीरिक शुचिता के वह अब उतने कायल नहीं है। विवशता से देह-व्यापार में लिप्त लड़की को अब वह 'पाकीजा' मान सकते हैं। एक लंबी साँस लेकर माया ने बताया कि शलभ को आज भी उसकी 'हाँ' का इंतजार है। पर माया ही स्वीकार नहीं कर पा रही हैं। उसने बताया उसे सहायता करने वाली महिला अब वृद्ध हो चुकी हैं और माया के साथ ही रह रही हैं।

रधिया को यकीन नहीं हो रहा था। जो उसके साथ हुआ वह एक अपवाद न होकर बहुत आम था। इसका मतलब तमाम किशोरियाँ इसी तरह नारकीय जीवने जीने के लिए बाध्य होती हैं। माया की तरह उसकी भी अच्छी किस्मत है कि उसे सहारा देने वाली सहृदय महिला मिल गई। उसे लगने लगा कि वह कितनी भाग्यवान है। धीरे-धीरे उसके आँसू सूख गए, उसको अपने अंदर शक्ति का एहसास हुआ, वह उठ खड़ी हुई।

फिर एकाएक वह माया के पैरों पर झुक गई। कृतज्ञता व्यक्त करने जब वह फिर खड़ी हुई तो माया को लगा कि अब वह पहले वाली रधिया नहीं थी, अब उसके चेहरे पर दयनीयता के स्थान पर आत्मविश्वास की आभा थी।

माया का प्रयास सफल था।

❐❐❐

सुंदरी

वह कहाँ जा रही थी उसे खुद पता नहीं था, मस्तिष्क शून्य था। केवल कदम बढ़ते जा रहे थे। उसके कानों में फैमिली कोर्ट के जज के शब्द गूँज रहे थे- ''कानूनी तौर पर किसी भी व्यक्ति को उसकी मर्जी के खिलाफ बंधन में नहीं बाँधा जा सकता। चाहे वह दाम्पत्यबंधन ही क्यों न हो। यह कोर्ट वादी की तलाक की अर्जी मंजूर करती है। श्रीमती सुंदरी श्रीवास्तव यदि चाहें तो एलिमनी के लिए दरख्वास्त दे सकती हैं।''

न्याय कभी-कभी कठोर हो जाता है। जज के मुँह से निकले कुछ शब्दों ने वर्षों के अंतरंग संबंधों एवं भावनाओं को एकदम नकार दिया।

उसके तलाक का केस काफी चर्चा में था। मीडिया ने भी जन मानस में उसके प्रति सहानुभूति की लहर पैदा कर दी थी। जगह-जगह पोस्टर लग गए थे ''सुंदरी के त्याग को देखते उसको तलाक देना मनुष्यता की हत्या है।'' सुंदरी के वकील ने भी उसे आश्वासन दिया था कि वह अपनी बहस में भावनात्मक पक्ष को उभारेगा और अंतिम विजय उसी की होगी।

कोर्ट में उसके वकील ने कहा-''मीलार्ड! मैं श्रीमती सुंदरी श्रीवास्तव के पक्ष में उन पहलुओं को पेश करना चाहूँगा जिनके चलते सुंदरी की शादी हुई। मेरा दावा है कि अंत में हुजूर ही नहीं कोर्ट में उपस्थित सभी लोग मुतमइन हो जायेंगे कि इन परिस्थितियों में उनके पति का उनसे तलाक माँगना कितना नीच और घृणित कार्य है।''

''इनका नाम तो सुंदरी है पर इनसे असुंदर महिला परिवार में क्या आस पड़ोस में नहीं थी। घर के बाकी सभी लोग सुदर्शन थे। अतः बचपन से ही इसके साथ उपेक्षा का व्यवहार रहा। पढ़ने में ठीक थी। शिक्षक प्रशंसा करते। परंतु वाइवा (viva) में अच्छे अंक न मिलने से मेरिट नहीं आती। उसके व्यवहार से सभी खुश थे परंतु चेहरे की वजह से सब काम बिगड़ जाता। रेसेप्शनिस्ट के पद से अपने व्यवहार और कार्यकुशलता की

वजह से उसे सेक्शन इंचार्ज बना दिया गया (जिससे वह पब्लिक डीलिंग से दूर रहे) वेतन अच्छा था। घर वाले उसका वेतन तो इस्तेमाल करते थे पर स्नेह और सम्मान देते चेहरा आड़े आ जाता था। शादी के लिए भी बहुत लोग आए पर किसी ने पसंद नहीं किया। उसके अच्छे वेतन के लोभ में कुछ युवक मनुहाये पर आगे की जेनेरेशन खराब होने के डर से पीछे हट गए। इन रिजेक्शन का उस पर कोई असर नहीं पड़ता क्योंकि अब उसकी आदत पड़ चुकी थी परिवार वालों के तानों से तंग आकर उसने हॉस्टल में रहना शुरू किया। कुछ दिन तो आशा थी कि परिवार वाले उसे वापस लेने आएंगे। पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। शायद वह भी यही चाहते थे।''

यह सुनते-सुनते सुंदरी कहीं अतीत में जा उतरी।

आफिस के कार्य के बाद इंगेज रहने के लिए उसने एक एन.जी.ओ. ज्वाइन कर लिया जो विकलांगों के लिए कार्य करता था। विकलांगों की ही भलाई क्यों...? शायद वह अपने को सूरत से विकलांग मानती थी और शायद इसीलिए धीरे-धीरे वह अंधे... नहीं नहीं 'दृष्टिबाधित' लोगों के लिए काम करने लगी। हालांकि जिला-विकलांग अधिकारी ने उसे बताया कि दृष्टिबाधित के बीच कार्य करना सबसे मुश्किल कार्य है। परंतु फिर भी वह उनके लिए कार्य करती गई।

एक बार कार्यशाला में उसने देखा कि जहाँ अन्य दृष्टिबाधित उद्यम कर रहे थे, एक सुदर्शन युवक अलग कोने में बैठा ब्रेल लिपि का अभ्यास कर रहा था। गौर वर्ण, उम्र लगभग 25 से 30 की, सभ्रांत परिवार का लग रहा था। अपने कार्य के दौरान सुंदरी की निगाह अंजाने में ही उसकी तरफ उठ जाती। काम खत्म होने के बाद वह उस युवक के पास गई और उसके बारे में पूछा। युवक ने बताया कि एक दुर्घटना में उसके परिवार के लोग खत्म हो गए। दुर्भाग्यवश केवल वही जीवित रहा। सुंदरी ने पूछा, ''जीवित रहने को दुर्भाग्य क्यों मानते हो?'' युवक ने कहा, ''देवी जी हर प्रकार की विकलांगता से अंधा होना बहुत बड़ी त्रासदी है। खास कर जब आप पहले दुनिया देख चुके हों।''

सुंदरी ने नाम पूछा। युवक ने कहा, ''प्रज्ञा-चक्षु।''

सुंदरी को झटका लगा, ''क्या शुरू से ही तुम्हारा नाम प्रज्ञा चक्षु था?''

युवक मुस्कराया, ''नहीं, पर अब यही नाम उचित लगता है।''

''फिर भी तुम्हारा असली नाम क्या है?'' सुंदरी ने पूछा।

''वह नाम मैं भूल चुका हूँ।'' यह कह कर वह अपना सामान लेकर वहाँ से चला गया। सुंदरी को लगा कि उसे यह बात आइंदा नहीं उठानी चाहिए।

अपने एन.जी.ओ. ग्रुप के साथ लौटते में सब गपशप में मशगूल थे परंतु सुंदरी का मन बार-बार उस सुदर्शन दृष्टिहीन युवक की ओर चला जाता।

अगले वीक एंड पर उसका एनजीओ फिर उसी केंद्र में गया। सभी सदस्य अपने कार्य में लग गए। एकाएक सुंदरी ने देखा कि प्रज्ञा चक्षु उसी स्थान पर अकेला बैठा ब्रेल लिपि का अभ्यास कर रहा था। सुंदरी उसके पास गई और पूछा, ''इस लिपि के अभ्यास पर इतना जोर क्यूँ?''

प्रज्ञा चक्षु, ''कौन?''

''मैं सुंदरी श्रीवास्तव। पिछली बार तुमसे मिली थी, पर तुम नाराज हो गए थे।''

वह चुप रहा।

''प्रज्ञा, तुम ब्रेल लिपि सीख कर क्या करना चाहते हो?''

''जीविका ढूँढूगा। सारे जीवन यूँ खैरात की जिंदगी जीने का मेरा कोई इरादा नहीं है।''

सुंदरी को उसका यह स्वाभिमान अच्छा लगा।

इसके बाद वह अपना कार्य समाप्त कर लौट आई। इंटरनेट पर सर्फ करते करते उसे उस युवक का ध्यान आया। दृष्टिहीन होने के बावजूद उसमें निरीहता नहीं थी।

स्वाभिमान मनुष्य को अधोगति से बचाता है।

एकाएक स्क्रीन पर उसने दृष्टि बाधित लोगों को आत्मनिर्भर बनाने वाली संस्था की एक वेब साइट देखी। यह संस्था देहरादून में थी। दृष्टिहीन लोगों को हास्टल में रख कर उन्हें उनके पसंद की जीविका के लिए ट्रेण्ड करना व आत्मनिर्भर बनाना उस संस्थान का लक्ष्य था। उसके बाद व्यक्ति अपने आप अपना भोजन व अन्य सभी कार्य करने में दक्ष हो सकता है। सुंदरी ने सारी जानकारी नोट कर ली।

अगले दिन सुंदरी ने आफिस से पहले ही प्रज्ञा के पास पहुँच कर प्रज्ञा को संस्थान के बारे में बताया।

प्रज्ञा ने निराशा से कहा कि इस पर खर्च भी तो आता होगा।

सुंदरी के बताने पर कि यह व्यवस्था बिल्कुल नि:शुल्क है, उसके चेहरे पर क्षणिक खुशी दिखी पर अगले क्षण निराशा की बदली छा गई, ''लखनऊ से देहरादून का मार्ग व्यय...? मैं वहाँ पहुँचूँगा कैसे....?''

''उसकी चिंता तुम मुझ पर छोड़ दो'' सुंदरी के मुँह से अचानक निकला।

''पर यह तो एहसान होगा।''

सुंदरी को फौरन उसे समझाते हुए झूठ बोलने में कोई हिचक नहीं हुई, ''कोई एहसान नहीं। मैं अपने रिश्तेदार के यहाँ देहरादून जाने को बहुत दिन से सोच रही थी। सोचा तुम्हारी परिचारिका बन कर जाने से मेरा एक तरफ का टिकट बच जाएगा। तुम्हें पहुँचा कर कुछ दिनों के बाद वापस आ जाऊँगी।''

अगले ही दिन सुंदरी ने देहरादून से प्रज्ञा के एडमीशन के बारे में सारी जानकारी ले ली। विकलांग कंसेशन पर देहरादून के दो टिकट बुक करा दिये। और प्रज्ञा को फोन पर जाने का दिन और समय बता दिया। एक रोज कार्यशाला जा कर प्रज्ञा को देहरादून ले जाने की स्वीकृति भी ले ली।

ट्रेन में प्रज्ञा अन्यमनस्क था। कभी सोचता कि यह महिला मेरे लिए इतना परेशान क्यों हो रही है? पर एक तरफ की फ्री यात्रा की बात सोच कर आश्वस्त हो जाता।

इधर सुंदरी सोच रही थी कि उसे इस नवयुवक के प्रति इतनी सहानुभूति क्यों?... दया, करुणा या प्रभु इच्छा मान वह भी अपने मन को समझाने की कोशिश करती।

दोनों को ए.सी. थ्री टायर में नीचे की बर्थ मिली थी। गाड़ी चलने पर छुटपुट बातें होती रहीं। पर प्रज्ञा ज्यादातर चुपचाप गंभीर बना रहा। शायद भविष्य के बारे में अनुमान लगा रहा था। सुंदरी उसकी प्रत्येक आवश्यकता का ध्यान रख रही थी और स्वयं को आश्वस्त कर रही थी कि वह मात्र परिचारिका है।

सुबह हुई। सुंदरी का दिल बहलाने के लिए बाहरी दृश्य थे। प्रज्ञा केवल स्थिर बैठा था। कोई भी आवाज होने या वेंडर के आने पर पथराई आँखें केवल घूम जाती। सुंदरी उसके सामने सीट पर बैठी उसके चेहरे के भाव देख रही थी। गाड़ी रुकती तो उत्सुकता, एकाएक शोर से आक्रोश, और न जाने कितने भाव प्रज्ञा के चेहरे पर आ जा रहे थे। सोच रही थी कि प्रज्ञा की आँखें देख सकतीं तो क्या वह इतनी सहजता से उसके चेहरे को देख सकती थी? प्रज्ञा किसी को अपनी ओर देखे जाने पर अपने चेहरे के भाव संयत करने की कोशिश करता, या फिर महिला दृष्टि से संकुचित होता। पर इस समय ऐसा कुछ नहीं था।

देहरादून आने पर वह उसे सीधे संस्थान ले गई। वहाँ के इंचार्ज भी प्रज्ञा से प्रभावित हुए और तत्काल उसकी व्यवस्था कर दी। उन्होंने सुंदरी से पूछा, ''आप इनकी कौन लगती हैं?'' इस सवाल के लिए सुंदरी तैयार नहीं थी। प्रज्ञा ने ही उत्तर दिया, ''यह एक एन.जी.ओ. कार्यकर्त्री हैं और बहुत लगनशील हैं।''

देहरादून से वापसी के सफर में बार-बार सुंदरी का ध्यान प्रज्ञा की ओर चला जाता। वहाँ के इंचार्ज के प्रश्न पर वह असहज क्यों हो गई? उसे स्वयं समझ में नहीं आ रहा था।

एक साल की ट्रेनिंग के बाद प्रज्ञा ट्रेन से अकेले ही लौटा। सुंदरी स्टेशन पर उसे रिसीव करने आई। एकाएक प्रज्ञा को देख कर वह पहचान नहीं पाई। आत्मविश्वास से परिपूर्ण, सुदर्शन व्यक्तित्व, आँखों पर काला धूप का चश्मा बहुत फब रहा था। केवल हाथ की स्टिक ही उसके दृष्टिहीन होने की चुगली कर रही थी। सुंदरी ने लपक कर प्रज्ञा का स्वागत किया। ''लखनऊ नगरी में आपका स्वागत है प्रज्ञा।''

प्रज्ञा आवाज से पहचान कर बोला, ''अरे सुंदरी जी मेरा आना आपको कैसा पता चला?''

सुंदरी के मुँह से अचानक, ''उन पे बन आए कुछ ऐसी कि बिन आए न बने।''

प्रज्ञा के माथे पर शिकन आई ही थी कि वह संयत हो कर बोली, ''संस्थान के अधीक्षक ने फोन किया था।'' प्रज्ञा मुस्कराने लगा।

साल भर देहरादून संस्था में काम करने के एवज में उसे कुछ धन मिला जिससे प्रज्ञा ने एक इंटेर-ऐक्टिव सॉफ्टवेयर वाला लैपटाप

किश्तों में खरीद लिया। सुंदरी ने उसे एक सॉफ्टवेयर कंपनी में नौकरी दिला दी। अब वह एक अलग कमरे में स्वतंत्र रूप से रहने लगा। कंपनी की स्टाफ बस उसे कंपनी तक ले जाती और वापस छोड़ जाती।

प्रज्ञा ने तीन साल के वकालत पार्ट टाइम कोर्स में दखिला भी ले लिया।

सुंदरी का प्रज्ञा से मिलना लगभग रोज ही होता था। कभी वह प्रज्ञा को अपने कमरे पर ले जाकर खाना खिलाती और कभी प्रज्ञा उसे अपने कमरे पर स्वयं खाना बना कर खिलाता। जब वह तरतीब से सजे कमरे में, कुशलता से खाना बनाता तो सुंदरी आश्चर्य से उसे निहारती रहती।

एक रोज खाते वक्त सुंदरी ने पूछा, ''अब आगे क्या इरादा है? प्रज्ञा ने कहा, ''वकालत करने का।''

सुंदरी ने कहा, ''अरे मैं शादी के बारे में पूछ रही थी।''

प्रज्ञा ने कहा, हाँ, यदि कोई मेरी तरह दृष्टिबाधित लड़की मिल जाय तो संभव है।''

सुंदरी, ''दृष्टिबाधित ही क्यों? ऐसी क्यों नहीं जो तुम्हारी आँख बन सके।''

प्रज्ञा ने कहा, ''आँख वाली कौन लड़की मुझसे शादी करोगी। क्या तुम ऐसी किसी लड़की को जानती हो?'' उसके स्वर में विनोद था।

सुंदरी के मुँह से अचानक निकला, ''मैं ही नहीं तुम भी तो जानते हो पर मानते नहीं।''

प्रज्ञा गंभीर हो गया और बोला, ''यह मजाक का विषय नहीं।''

सुंदरी हँसते हुए बोली, ''मैं मजाक नहीं कर रही हूँ। लड़की तुम्हारे सामने है बुद्धू।''

प्रज्ञा स्तब्ध हो गया। फिर अविश्वास से फुसफुसाया, ''क्या तुम सही कह रही हो?''

सुंदरी, ''हाँ''।

सुंदरी और प्रज्ञा ने रजिस्ट्रार के सामने दस्तखत किए। कार्यशाला अधीक्षक ने गवाही पर दस्तखत कर के नव दंपति को शुभकामनाएँ दीं। विवाह-भोज कार्यशाला के सभी दृष्टि बाधित साक्षी व अधीक्षक के साथ करने के बाद नव दंपति प्रज्ञा के कमरे में आ गए।

शादी के बाद रसोई और लांड्री का सारा भार सुंदरी स्वयं उठाना चाहती थी क्योंकि उसकी नजर में यह स्त्रियोचित कार्य था। प्रज्ञा ने कहा, ''तुम मेरी पूरक हो। मैं तुम्हारी नजर से देखता हूँ यही बहुत है। सारा गृह कार्य हम दोनों मिल कर करेंगे, जिससे मेरा स्वावलंबन न छूटे और तुम्हें मेरी अन्य सहायता के लिए अधिक समय मिले।'' तबसे सुबह का सारा कार्य सुंदरी करती जबकि प्रज्ञा व्यायाम और वकालत की तैयारी में लगता। जितना मैटीरियल ब्रेल लिपि में मिल पाता वह तो प्रज्ञा के लिए आसान था बाकी नोट्स व किताबें सुंदरी उसे पढ़ कर सुना देती। प्रज्ञा की स्मरण शक्ति अद्‌भुत थी।

जब 'लॉ' का पहला साल प्रज्ञा ने पास किया तो दंपति को अपार हर्ष हुआ। प्रज्ञा ने सफलता के क्रेडिट सुंदरी को दिया तो सुंदरी ने उसका हौसला बढ़ाया। दोनों ने पाँच साल बच्चा न पैदा करना तय किया। जिससे प्रज्ञा की पढ़ाई पूरी हो जाए और तब तक परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत हो सकेगी।

वकालत पास करने के बाद जब प्रज्ञा रजिस्ट्रेशन के लिए हाईकोर्ट पहुँचा तो सुंदरी उसके साथ थी। कोर्ट में नजारा अलग ही था। सभी लोग दृष्टिहीन वकील को देखना चाहते थे। लौटते समय तक तो मीडिया भी पहुँच गया। अगले दिन इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया में इसी दंपति की चर्चा थी। दोनों की फोटो भी छपी। फोटो में सुंदरी तो खुश दिख रही थी पर प्रज्ञा अन्यमनस्क दिख रहा था। एचीवमेंट तो प्रज्ञा का था पर उसे यहाँ तक पहुँचाने में मीडिया ने सुंदरी को ही साधुवाद दिया। जर्नलिस्ट की निगाहों में दोनों के जीवन में सुंदरी ही नायिका थी। प्रज्ञा मात्र सहायक पात्र बन कर रह गया। शायद इसीलिए वह अन्यमनस्क था।

दोनों का पारिवारिक जीवन शांत और सुखमय था। एक रोज सुंदरी ने पूछा, ''शादी के समय तुमने यह नहीं सोचा कि मैं कैसी दिखती हूँ।''

प्रज्ञा, ''मेरे लिए तो तुम सृष्टि की सबसे सुंदर रचना हो।''

सुंदरी ने यह शब्द पहले कभी नहीं सुने थे। ऐसे शब्द सुनने के लिए वह वर्षो से तड़प रही थी। वह अंदर तक भीग गई...। तृप्त हो गई। उसने प्रभु को धन्यवाद दिया, इससे ज्यादा उसे कुछ नहीं चाहिए।

एक दिन उसने प्रज्ञा से पूछा, ''क्या तुम फिर से देखना चाहते हो?''

प्रज्ञा ने हँसते हुए कहा, ''अंधे को क्या चाहिए दो आँखें। पर मैं तो

एक से भी काम चला लूँगा।''

सुंदरी, ''हम लोग जिंदगी में आधा-आधा बाँटते हैं। तो क्यों न मैं अपनी एक आँख तुम्हें दे दूँ?''

प्रज्ञा नाराज होते बोला, ''ऐसा दोबारा मत कहना। तुम इतना सब जो मेरे लिए कर चुकी हो वही मेरे लिए काफी है। तुम्हारे साथ मैं अपने को असमर्थ नहीं मानता।''

सुंदरी कुछ नहीं बोली, पर मन ही मन उसने कुछ निश्चय कर लिया।

कुछ दिन बाद वह प्रज्ञा को लेकर आँख के डॉक्टर के पास गई। डॉ0 ने प्रज्ञा को 'कार्निया ट्रांसप्लांट' के लिए पंजीकृत कर लिया। डॉक्टर ने बताया कि मरते समय जो व्यक्ति अपनी आँख दान कर देते हैं। उसी से लोगों में प्रत्यारोपण किया जाता है। जब आपका नंबर आयेगा तो आपको सूचित किया जाएगा। तब तक आप लोग पैसों का प्रबंध कर लें। दोनों घर लौट आए। जिन्दगी फिर गुजरने लगी। दोनों महीने में एक बार दृष्टिबाधित स्कूल अवश्य जाते और भोजन वहीं सबके साथ करते। भोजन प्रज्ञा और सुंदरी की ओर से प्रायोजित होता। कार्यशाला के अधीक्षक भी उन दोनों के परिवार के वरिष्ठ सदस्य बन गए थे।

एक रोज सुंदरी बहुत सबेरे ही जग गयी। उसके मन में एक संकल्प था। सुबह के कार्यकलाप में सुंदरी चुप सी रही। प्रज्ञा ने नोटिस भी किया। यदि देख सकता तो अनुमान लगा लेता कि सुंदरी ने कुछ बड़ा निश्चय कर लिया।

सुंदरी उस रोज काम पर न जाकर सीधे आँख के डॉक्टर के पास गई और बोली, ''मैं अपनी एक आँख अपने अंधे पति को देना चाहती हूँ।'' डॉ0 हैरान हुआ। उसने कहा ऐसा नहीं हो सकता।

सुंदरी ने डॉक्टर के टेबल पर रखे पेपर नाइफ की नोक अपनी बाईं आँख के सामने रख कर बोली, ''यदि मैं स्वयं अपनी आँख निकाल कर आपको दूँ तो?'' डॉक्टर उसके हाथ से नाइफ लेने को उद्यत हुआ, पर सुंदरी की वर्जना से उसको बैठना पड़ा। थोड़ी फेर बाद भर्राए गले से बोला, ''यह तो पागलपन है। तुम एक आँख की ही रह जाओगी।'' सुंदरी पर इसका भी कोई असर न देख कर बोला, ''ठीक है मैं कुछ सोचता हूँ।''

अस्पताल के दो ऑपरेशन थिएटर में अलग-अलग दो ऑपरेशन चल रहे थे। एक में सुंदरी की आँख से कार्निया लेकर दूसरे थिएटर में प्रज्ञा की आँख में ट्रांसप्लांट किया जा रहा था। तय था कि कार्निया देने के बाद सुंदरी की एक आँख नष्ट हो जायेगी। पर वह यह सोच कर प्रसन्न थी कि अब प्रज्ञा फिर से देख सकेगा। सुंदरी ने डॉक्टर को मना कर दिया था कि प्रज्ञा को पता न चले कि कार्निया का डोनर कौन है।

आज का दिन दोनों के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण था। आज प्रज्ञा के आँख की पट्टी खुलने वाली थी।

प्रज्ञा ने जब आँख खोली चारो ओर अंधेरा था। प्रज्ञा सिहर उठा... क्या उसकी आँख की रोशनी वापस नही आई? डॉ0 ने उसकी सिहरन महसूस कर प्रज्ञा से कहा, ''डरो नहीं अभी पूर्ण अंधकार है। रोशनी धीरे-धीरे बढ़ाई जायेगी।'' बढ़ती हुई रोशनी प्रज्ञा महसूस कर रहा था। पूर्ण प्रकाश होने पर प्रज्ञा सब कुछ देख सकता था। यह यकीन नहीं कर पा रहा था। डॉ0 का हाथ पकड़ कर उसने कृतज्ञता ज्ञापित की और चारों ओर कुछ ढूँढ़ते हुए बोला, ''मेरी पत्नी कहाँ है?

डॉ0-''तुम पहले देखने के अभ्यस्त हो लो फिर पत्नी से मिलना। वह दूसरे कमरे में तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है।''

डॉ0 जान रहा था कि सबसे त्रासद घड़ी आने वाली है।

प्रज्ञा ने सुंदरी के कमरे का दरवाजा खोला। सुंदरी खिड़की से बाहर देख रही थी। उसकी पीठ प्रज्ञा की ओर थी। प्रज्ञा ने अनुमान लगाया कि सम्भवत: वह स्त्री सुंदरी ही है। वह उसे देख तो सकेगा पर पहचानेगा तब ही जब वह बोलेगी।

प्रज्ञा ने पूछा, ''क्या तुम ही मेरी पत्नी सुंदरी हो?''

सुंदरी ने उसकी तरफ पीठ किए ही जवाब दिया, ''हाँ! प्रज्ञा क्या तुम भली प्रकार से देख सकते हो?''

''हाँ बिल्कुल साफ-साफ, और मुझे यह कहने में संकोच नहीं कि यह सब सिर्फ तुम्हारी वजह से संभव हो सका। प्लीज मेरी ओर घूमो मैं तुम्हे देखना चाहता हूँ।''

प्रज्ञा के पीछे कार्यशाला के अधीक्षक थे। वह भी इस क्षण के बारे में चिंतित थे। उन्होंने प्रज्ञा के कंधे पर हाथ रख लिया।

सुंदरी धीरे से प्रज्ञा की ओर मुड़ी, ''प्रज्ञा मैं ही तुम्हारी पत्नी सुंदरी

हूँ।''

अधीक्षक अवाक् रह गए। सुंदरी की बाँई आँख नहीं थी। केवल खाली अक्षि-कोटर था। उन्हें समझने में देर नहीं लगी। तभी प्रज्ञा के गले से अजीब सी आवाज निकली। उसका शरीर काँपने लगा।

सुंदरी ने देखा प्रज्ञा के चेहरे का दाहिना हिस्सा उसकी तरफ था। प्रज्ञा के दाहिनी आँख ठीक हो गई थी। दाहिनी प्रोफाइल में प्रज्ञा सामान्य लग रहा था। प्रज्ञा सुदर्शन तो पहले से ही था, पर आँख ठीक होने से आज बहुत आकर्षक लग रहा था। उसकी प्रसन्नता उसकी मुस्कराहट में दिख रही थी। परंतु एकाएक उसका बिगड़ता चेहरा व काँपते शरीर को देख कर सुंदरी सकते में आ गई।

प्रज्ञा ने कुर्सी का सहारा लिया और भर्राई आवाज में कहा, ''क्या यही सुंदरी है? इसकी तो एक आँख भी खराब है।''

अधीक्षक ने कहा, ''सुंदरी ने ही तुम्हें अपनी एक आँख दी है जिससे आज तुम उसे देख रहे हो।''

प्रज्ञा और सुंदरी दोनों ही अचानक आघात (shock) से खड़े नहीं रह सके, बैठ गए। सुंदरी हतप्रभ थी कि आई डोनेशन की बात प्रज्ञा को क्यों पता लगी। वहीं प्रज्ञा सुंदरी द्वारा मिली हुई आँख से जैसे कोई भयानक सपना देख रहा था। उसे झुरझुरी हो रही थी कि वह इतनी बदसूरत महिला के साथ 5 साल कैसे रहा? एक आंख न होने की वजह से वह और भी वीभत्स दिख रही थी। उफ... क्या अब सारी जिंदगी इसी के साथ रहना होगा...। नहीं कदापि नहीं। अंधे होने की वजह से 5 साल तो गुजर गए, अब और नहीं।

परंतु आज वह सुंदरी की आँख से ही देख रहा था। आजतक वह जो कुछ भी कर सका उसमें सुंदरी का बहुत योगदान रहा है, वरना वह अभी तक कार्यशाला में ही पड़ा रहता या फिर सड़क पर भीख माँग रहा होता। क्षण भर के लिए उसके दिल में कृतज्ञता का एहसास आया, पर अगले ही पल सुंदरी का ही बदसूरत और 'काना' चेहरा सामने आने पर उसका मन कठोर हो गया। वह चुपचाप उठ कर बाहर चला गया। हफ्ते भर के अंदर ही उसने फैमिली कोर्ट में तलाक का मुकदमा डाल दिया। उसने खुद ही यह मुकदमा लड़ने का मन बना लिया।

अदालत का निर्णय सुनने के बाद सुंदरी चुपचाप कचहरी से बाहर

निकल आई... वह अपमान और तिरस्कार की जिंदगी जीते-जीते अब निराश हो गई थी। वह चलती ही गई। एकाएक उसे पैरों तले गीली मिट्टी का भान हुआ। एक झटके से वह होश में आ गई। सामने गोमती अपने पूरे वेग से बह रही थी।

तो क्या वह आत्महत्या करने जा रही थी...? क्यों नहीं अब इसकी जिन्दगी में बचा ही क्या था। रूप तो भगवान ने ही नहीं दिया। भावनाओं में बह कर एक आँख ऊपर से गवाँ दी। कल अखबारों में छपेगा कि इतना करने के बाद भी उसे तलाक दे दिया गया...। अब और अभिशप्त जिन्दगी वह नहीं जीना चाहती है। प्रज्ञा चक्षु के साथ बिताए गए 5 सालों के अलावा उसे कभी सुकून नहीं मिला।

...प्रज्ञा चक्षु के साथ गुजरे 5 वर्ष कितने सुखद रहे। कितनी खुश थी वह। उसके चेहरे पर अजीब उल्लास और चमक थी, ऐसा लोग कहने लगे थे।

एकाएक सुंदरी ने सोचा, ''क्या इन 5 सालों के यादों के सहारे वह बाकी जीवन नहीं गुजार सकती? महिलाएं वैधव्य भी तो झेलती हैं। वह सभी आत्महत्या तो नहीं करती। फिर उसके पास तो सामाजिक पहचान है। वह दृष्टिबाधित संस्था की चेयरपर्सन है। उससे दृष्टि-बाधितों को बहुत आशाएँ थी। वह प्रयास कर रही थी कि देहरादून ऐसा संस्थान लखनऊ में भी हो जाय। शासन से यह प्रस्ताव लगभग अनुमोदित हो गया था। केवल वित्तीय स्वीकृति मिलनी बाकी थी। नहीं... नहीं...। सुंदरी को अभी और कार्य करना है, जिसके लिए उसका जीवित रहना अनिवार्य है। वह आत्महत्या नहीं करेगी।''

उसके मन का कुहासा छट चुका था। उसमें आत्मविश्वास अंकुरित हुआ। उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया। उसने गोमती के जल से आचमन किया और वापस मुड़ गई। पर यह क्या... उसके अंदर कोई और जान पल रही थी? मुकदमें के चार महीनों में उसे अपनी शारीरिक स्थिति का भान ही नहीं रहा...। सुंदरी को लगा जैसे नन्हें भ्रूण ने उसे इस निर्णय पर बधाई दी।

सुंदरी ने पेट पर हाथ रखते हुए सोचा कि उसने एक आँख खो कर भी बहुत कुछ पाया। पर प्रज्ञा... उसे दृष्टि तो मिली पर वह न तो प्रज्ञा रह पाया और न ही 'प्रज्ञा चक्षु'।

वापस लौटते में फैमिली कोर्ट के सामने से गुजरी तो उसने देखा प्रज्ञा चक्षु काला चश्मा लगाए रिक्शे पर बैठने जा रहा था। सुंदरी उसके पास रुकी और उसका काला चश्मा हटाते हुए बोली, ''प्रज्ञा अब तुम्हें इसकी जरूरत नहीं रह गई। पहला ही केस तुमने जीत लिया। मुबारक हो।''

प्रज्ञा कुछ नहीं बोला। वह सुंदरी की आँख से ही सुंदरी को देखता रहा।

सुंदरी प्रज्ञा को छोड़कर जब आगे बढ़ी तो उसकी चाल में दृढ़ता और होठों पर मुस्कान थी।

❐❐❐

अनलिखा उपन्यास

कुछ धनी और तथाकथित संभ्रांत व्यक्ति जो यह दिखावा करने में शान समझते हैं कि उनमें भी साहित्यिक समझ है। ऐसे ही लोगों की वजह से ही स्थापित पर जेब से कड़के साहित्यकारों की शाम की चाय पानी की व्यवस्था हो जाती थी। ऐसी ही संध्या टी पार्टी में एक मेजबान ने हरीतिमा (भांग) की दुलकी में, एक लेखक से पूछा, ''भाई तुम करते क्या हो?'' लेखक ने विनम्रता से कहा, ''जी मैं लेखक हूँ।''

मेजबान ने हँसते हुए पूछा, ''वह तो ठीक है। पर तुम काम क्या करते हो।'' लेखक के चेहरे पर असमंजस देख उन्होंने क्लियर किया, ''अरे भाई रोजी रोटी के लिए क्या करते हो।'' इसके बाद उन्होंने वह कहा जो नहीं कहना था, ''अरे भाई ऐसा तो है नहीं कि लेखक होने की वजह से कागज खाकर और स्याही पीकर काम चलाते हो।'' फिर अपने मजाक पर खुद ही हो... हो... कर हँसें।

लेखक ने कोई जवाब नहीं दिया और थोड़ी देर में उठकर चला गया। उसने चाय की प्याली को हाथ भी नहीं लगाया था। यह देख बाकी सभी लेखकों का स्वाभिमान जागा। एक-एक कर सभी चले गए। पर मेजबान की समझ में कुछ नहीं आया। हरीतिमा का सुरूर...।

लिखने को प्रोफेशन क्यों नहीं माना जाता...? इस एहसास से व्यथित और अपने ही ऊपर लज्जित, मुँह लटकाए हुए घर में घुसा ही था कि पत्नी ताड़का की तरह उन पर झपटी, ''कहाँ से आ रहे हो? कौन सा किला उलट के आ रहे हो? कुछ पैसा वैसा भी मिला कि सिर्फ फोकट में गलेबाजी कर, वाह वाह बटोर के, मुफ्त की चाय पीकर ही आ गए। तुमने गोष्ठी में चाय के साथ नाश्ता भी करा होगा, पर यहाँ घर में खाने को अन्न की एक कनकी भी नहीं है। मैं खुद तो पानी पीकर भी सो जाऊँगी पर इन बच्चों का क्या करूँ। रेडियो कहता है बच्चे उतने जनो, जितनों की परवरिश कर सको। इससे तो मैं निपूती ही भली थी।''

लेखक पहले से ही आहत था। बोला, ''निपूती ही क्यों राँड ही भली थी।''

'राँड...' पत्नी स्तब्ध हो गई। भूल गई की खुद उसकी जुबान कितनी नृशंस थी, पति के शब्द तो मात्र प्रतिक्रिया थे। थोड़ी देर तक विस्फरित नेत्रों से देखती रही। फिर जैसे नील-कंठ शिव ने कालकूट गले से बाहर उगल दिया... भर्राई आवाज में बोली, ''विधवा होती तो सफेद साड़ी पहन एक बच्चे को गोद लेकर भीख माँग लेती या पेट भरने को दूसरा भतार कर लेती।'' वह वहीं बैठ कर रोने लगी।

रिश्ते भी कितने अजीब होते हैं। हम जिसके जितना नजदीक होते हैं, क्रोध में उतने ही कठोर वचनों द्वारा अगले को मार्मिक चोट पहुँचाने का प्रयास करते हैं। थोड़े समय के लिए रूठा-राठी उसके बाद में मान मनौव्वल, गिले-शिकवे, आँसुओं या मठोली, द्वारा रिश्ते फिर से सामान्य हो जाते हैं। परन्तु कभी-कभी गुस्से में जिह्वा तलवार से भी अधिक घातक हो जाती है। हृदय और मस्तिष्क दोनों पर चोट करती हैं। हृदय विदीर्ण हो जाता हे, मस्तिष्क संतुलन खो देता है और कभी-कभी हिंस्र होकर घात या आत्म-घात को भी उद्यत हो सकता है। ज्यादातर हत्या या आत्महत्या की घटनाएँ जुबान की वजह से होती हैं। परिवार की रोज-रोज की किचकिच दिलोदिमाग पर इतनी भारी हो जाती है कि एक छोटी सी बात भी law straw बन सकती है।

''रहिमन जिहव्या बावरी, कहि गै सरग पताल।
आप तो कहि भीतर भई, जूती खात कपाल।''

वह कुछ नहीं बोला। कमरे के अंदर आकर चुपचाप बैठ गया। वह अंदर तक आहत हो गया था। स्वाभिमानी का स्वाभिमान यदि आहत हो तो वह अपनी आँखों से ही गिर जाता है। भला आदमी किसी और को त्रास नहीं दे पाता, फिर पत्नी तो अर्धांगिनी होती है। उसके बच्चों की माँ है, अत: वह सारी कुंठा अपने ऊपर ही निकालता है। उसने निश्चय कर लिया। फंदा लेकर खड़ा हुआ... कि एकाएक विचार आया, ''वह स्वयं को तो मुक्त कर रहा है... बच्चों का क्या कुसूर? पत्नी भी गलत नहीं थी।'' केवल जुबान की तीखी थी।'' यह सोचते ही उसके सामने सफेद कपड़ों में लिपटी बच्चों के साथ सड़क पर भीख माँगती पत्नी की तस्वीर छा गई। लोग दानपात्र पर ध्यान न देकर यौवन पात्रों पर ज्यादा गौर कर

रहे थे। उसे ऐसा लगा जैसे वह पानी में डूब रहा है, साँस लेना कठिन हो गया। वह तड़फड़ा कर स्टूल से उतर आया। कलम निकाला और लिखने बैठ गया।

उसको एहसास था कि वह बहुत अच्छा लेखक है। व्यापारिक बुद्धि में कच्चा था, इसलिए लक्ष्मी की कृपा नहीं हो पाई। उसने कई बार अपनी पत्नी से कहा, ''तुम ज्यादा व्यावहारिक हो, इसलिए अगर खुद लिखना नहीं चाहती तो मार्केटिंग का कार्य ही संभाल लो।'' पत्नी इसके लिए तैयार नहीं हुई।

आज उसे अपने ऊपर सरस्वती की अद्‌भुत कृपा का अनुभव हो रहा था। अंतरात्मा कह रही थी की एक अभूतपूर्व कृति कागज पर उतरने के लिए व्याकुल है। उसने लिखना प्रारम्भ किया... वह रात भर लिखता रहा... लिखता ही गया।

...दोनों की मुलाकात एक कवि सम्मेलन में हुई थी। जिस समय वह गोष्ठी में पहुँचा उस समय एक युवती का काव्य-पाठ चल रहा था। जूनियर कवयित्री होने के कारण उसे मंच पर पहले बुलाया गया था। कितना सुरीला गला था। स्वर पर पकड़ बड़ी सुंदर। ज्यादातर महिलाओं को शक्ल और स्वर पर ही दाद मिलती है, कविता के कंटेन्ट पर लोगों का ध्यान कम ही जाता है। परन्तु वह उसकी विधा पर मोहित हो रहा था। उस युवती के बाद मंच पर कई कवयित्रियाँ और कवि आये, पर कोई जम नहीं पाया। तब संचालक ने उसे काव्य-पाठ के लिए मंच पर आमंत्रित किया। वह मन में सोच रहा था कि कहीं उसे भी औरों की तरह हूटिंग का सामना न करना पड़े। पर माइक पर आते ही उसकी नजर मंच पर एक किनारे सकुची पर सद्‌य-प्रशंसा से आश्वस्त उसी युवा कवयित्री पर टिक गई। वह भूल गया कि गोष्ठी में उस कवयित्री के अलावा कई और भी है। वहीं लोगों ने देखा कि वह केवल उसी युवती को देखकर कविता का पाठ कर रहा है।

नायिका के प्रति इतने कोमल भाव कितनी सरलता से उसके कंठ से फूट रहे थे। लोगों के साथ वह भी वाह-वाह कर रही थी, ताली बजा रही थी। परन्तु थोड़ी देर बाद जैसे ही उसे एहसास हुआ कि कवि की सारी तन्मयता उसी पर केंद्रित है, लोग भी इस बात को नोटिस कर रहे हैं, उसका चेहरा सिन्दूरी हो उठा। वह नज़र झुका कर बैठी रही। उसके कानों में कवि के शब्द भी नहीं सुनाई दे रहे थे। वह केवल कवि की

निगाहें अपने ऊपर महसूस करती रहीं। काव्य-पाठ समाप्त होने पर तालियों की गड़गड़ाहट से वह फिर अपने आपे में आई। पास में बैठी सह-कवयित्री ने कवि की तारीफ करते हुए उसकी राय जानना चाही तो वह ठीक से जवाब नहीं दे पाई। स्त्रियाँ मन पढ़ने में माहिर होती हैं। खास कर स्त्री-मन। उन्हें भान हो गया कि 'पुष्प बाण' अपना कार्य कर गया। उसका हाथ धीरे से दबाती हुई बोली, ''ठीक है दावत पर मुझे भूल न जाना।'' और वह वाकई 15 दिन बाद उसको शादी में बुलाना नहीं भूली।

शादी के बाद कुछ दिन तक वह दोनों गोष्ठियों में नहीं देखे गए।

'मिसेज' डिग्री लेने के बाद जब वह मंच पर आईं, उसके चेहरे पर अपूर्व चमक थी। लोगों ने इसे तुष्टि की आभा माना, पर महिलाओं को पता चल गया कि उसका चेहरा मातृत्व से शोभित था।

पौरुषीय अहं के चलते, यह शोभा कुछ महीने ही रह पाई। शादी के बाद जब दोनों मंच पर कविता पाठ करते तो पत्नी को ज्यादा वाह-वाही मिलती। इस पर उसके पति का चेहरा उतर जाता। कई दिन तक उसका मूड बिगड़ा रहता। शादी बचाने के लिए पत्नी ने, गृहस्थी का वास्ता देते हुए रचना-धार्मिता से संन्यास ले लिया। डेढ़ साल के अंतर में दो बच्चे हुए, सो मंच से दूर रहने का बहाना अच्छा था। इस तथ्य का एहसास पति को था कि बेहतर रचनाकार होते हुए भी पत्नी उसके और परिवार के लिए कुर्बानी दे रही थी। एक महिला साहित्यकार विकसित होने से पहले ही मुर्झा गई, पति के अहं को संतोष मिला...।

...वह रात भर लिखता रहा। उपन्यास पूरा करके उसे लगा कि अब उसके परिवार को दारिद्रय से मुक्ति मिल सकती है। बाहर आँगन में आकर उसने देखा भोर का तारा चमक रहा है। वह फिर कमरे में वापस गया...।

उस रात पत्नी ने बच्चों को पड़ोस से प्रसाद में आई पंजीरी खिला कर सुबह भर-पेट खिलाने का आश्वासन दे कर किसी तरह सुला दिया। पति को भी दो तीन बार देखने के लिए झाँका भी पर पति चुपचाप लिखने में व्यस्त था। हमेशा की तरह उसने डिस्टर्ब करना उचित नहीं समझा।

काश वह उस मौन हाहाकार को सुन सकती।

सुबह बची हुई चीनी की अंतिम कप चाय लेकर रूठे पति को

मनाने के लिए मुस्कराते हुए उसने कमरे का दरवाजा बहुत धीरे से खोला... कल का मौन ऐसे टूटा कि पूरे आस-पड़ोस में हाहाकार गूँज उठा। पति का शरीर पंखे से झूल रहा था।

दक्षिण को पैर कर लेखक का पार्थिव शरीर जमीन पर लिटाया गया था। पोस्ट-मार्टम के चीरे के निशान को छुपाने के लिए सिर पर पगड़ी, गले को मालाओं से ढक दिया गया था। सिरहाने दीपक और पैर की तरफ लोबान जल रहा था। पत्नी की आँखे नम नहीं लाल थीं। चेहरे पर अवसाद, दु:ख और पीड़ा पुटी हुई थी। कल की मुड़ी-तुड़ी साड़ी में लिपटी वह करुणा की प्रतिमूर्ति तो लगती थी पर 'बेचारी' बिल्कुल नहीं।

धीरे से किसी ने पुकारा, ''दीदी!''.... उसने सिर उठा कर देखा पति का सुहृद मित्र जो उसे अभी तक भाभी कहता था आज दीदी कह रहा है। भाभी से दीदी। अकेली महिला के लिए भाभी का संबोधन कई बार विद्रूप भी हो सकता है... पर दीदी! उसका दुनिया पर विश्वास बढ़ा। उसकी प्रश्नवाचक निगाह को उत्तर मिला, ''दादा की तमाम रचनाएँ घर में पड़ी होंगी, उन्हें बगैर सोचे समझे किसी को मत दीजिएगा। एक रद्दी का टुकड़ा भी बगैर पूरा पढ़े मत फेकिएगा।'' फिर थोड़ा रुक कर बोला, ''यदि ठीक समझें तो दादा की अपनी ही मृत्यु पर लिखी कविता मुझे दे दे। मैं चाहता हूँ कि 'गीता-पाठ' के स्थान पर उनकी उस रचना का पाठ हो। कई प्रकाशक व साहित्य के गणमान्य लोग मौजूद हैं।''

वह यंत्रवत गई और वह कविता उस मुँह-बोले भाई को लाकर देदी।

वह रचना 60-70 पृष्ठ का खंड-काव्य था, 'मेरी मृत्यु-गीता' (यहाँ गीता से गेय का अर्थ ग्रहण हो)।

भाई ने 'मृत्यु गीता' का पाठ प्रारम्भ किया। लोग सुन कर विस्मित हो रहे थे। क्या इस शख़्स ने स्वयं अपनी मृत्यु का पूर्व दर्शन कर लिया था? जैसे जैसे पाठ आगे बढ़ रहा था, लग रहा था, कि कवि स्वयं इस दृश्य का आँखों देखा वर्णन कर रहा हो। बच्चों की मनोभावनाओं का भी चित्रण था। यथा-

''पड़ोसी बच्चों को अपने घर ले गए, नाश्ते की व्यवस्था की। बच्चे पेट भरने पर खुश थे, पर समझ नहीं पा रहे थे कि पापा के छत से लटकने पर इतना हँगामा क्यूँ? करतब दिखाने के लिए पापा पहले भी

कई दफे उल्टे लटक कर दिखाते थे। तब माँ हँस कर पापा को मना करती, कि तुम्हारी देखा-देखी बच्चे करने की कोशिश में चोट खा जायेंगे। पर आज इसी बात पर सब लोग रो क्यों रहे हैं? इस लकड़ी की सीढ़ी को जमीन पर रख उस पर सफेद चादर क्यों डाल रहे हैं?''

पढ़ने वाले का कंठ अवरुद्ध हो गया वह थोड़ी देर के लिए रुका। आँखें पोंछी, चेहरा उठा कर देखा तो सभी की आँखें नम थीं। उसने संयत होकर फिर पढ़ना शुरू किया।

जब लोगों ने शव यात्रा के लिए टिकठी को उठा लिया, वह ग्रंथ छोड़कर उठ खड़ा हुआ और मृत्यु गीता की अंतिम लाइन 'राम नाम सत्य है गोपाल नाम सत्य है' कहता हुआ शव यात्रा के साथ चल पड़ा।

''भाई, संस्कार विद्युत शव-दाह में कराना। सुना है वहाँ केवल सरकारी फीस ही पड़ती है। लकड़ी और पंडे का झंझट नहीं रहता। तुम जानते हो घर में फूटी कौड़ी नहीं है। यह भी तुम कैसे करोगे यह तुम ही जानों।''

भाई की आँखें एक बार फिर डबडबाईं। केवल सिर ही हिला सका।

शव जाने के बाद भी घर में काफी कार्य रह जाते हैं। पड़ोस की महिलाएं तो सांत्वना देने के लिए आई थीं, पर घर की शुद्धि, सफाई का कार्य तो उसे ही करना था। काम में लगने से पीड़ा कुछ कम हुई। बच्चों की भी चिंता लगी। उनको बुला लिया।

रात भर वह सोई कि जागती रही, उसे खुद नहीं पता चला।

सुबह बच्चे खाने को माँगेंगे, यह सोचकर उसे आज उतनी चिंता नहीं हुई। पति की मृत्यु ने शायद बाकी चिंताओं को सुन्न कर दिया था।

वह सोच ही रही थी कि भाई एक अपरिचित भद्र पुरुष के साथ आया। साथ में खाने पीने का सामान था जिसे उसने बगैर उसकी अनुमति के घर में रखा दिया। साथ आए व्यक्ति ने कई अखबार उसकी तरफ बढ़ाए।

एक में छपा था- ''कवि की मृत्यु से साहित्यिक समाज स्तब्ध।''

दूसरे में- 'मृत्यु-गीता' ने कवि को अमर किया।

तीसरे में - 'भविष्यदृष्टा कवि ने अपनी ही मृत्यु का आँखों देखा

हाल लिखा।'

अंग्रेजी अखबार में- 'Self-Obituary of Late Poet An Instant Hit.'

वह खड़ी नहीं रह सकी बैठ गई। ''हे ईश्वर, तेरे यहाँ देर है अंधेर नहीं। पर इतनी देर...। क्या यह अंधेर नहीं...?'' पहली बार रोई। किसी ने सांत्वना देने का प्रयास नहीं किया। ज्वार उमड़ कर शांत हो गया।

''दीदी! यह सेठ जी दादा की तेरहवीं के बारे में आपसे बातें करने आए हैं।''

भाई थोड़ा रुक कर बोला ''यह दादा के मित्रों में हैं। अंतिम गोष्ठी इन्हीं के यहाँ हुई थी। दादा को यह अपने परिवार का ही मानते थे, अत: सारा प्रबंध यह स्वयं ही करना चाहते हैं।''

''जैसा तुम ठीक समझो।'' उसका संक्षिप्त उत्तर था।

वह उनके जाने का इंतजार कर रही थी कि भाई फिर बोला, ''यह दादा रचित मृत्यु-गीता का तेरहवीं के दिन प्रकाशन करना चाहते हैं।''

एकाएक इतना अनुग्रह क्यों...? उसकी आँखों में ज्वाला देख भाई बोला, ''प्रकाशक भी साथ आया है। प्रकाशक का खर्च सेठ जी करेंगे, पुस्तक से आय का 20 प्रतिशत प्रकाशक का, 20 प्रतिशत सेठ का और बाकी 60 प्रतिशत आपका।''

वह बगैर सोचे ही बोली, ''किसी मसविदा के साथ आए हैं?'' अगले ही क्षण उसे अपनी व्यावहारिक बुद्धि पर स्वयं आश्चर्य हुआ।

प्रकाशक जो की अभी पीछे खड़ा था, आगे आया और अनुबंध-पत्र दिखाया। उसमें लिखा था- ''एक दिन में ही ''मृत्यु-गीता'' की सफलता देख मैं प्रकाशक..., और सेठ... श्रीमती... को उनके स्वर्गीय पति की रचना 'मृत्यु-गीता', जिसका वह अब पूर्ण स्वामित्व रखती है. ...।''

सारी शर्तें वैसे ही थी जैसे बताई गई, केवल उसके दस्तखत बाकी थे। गवाह के तौर पर भाई व किसी अन्य के दस्तखत थे। उसने दस्तखत कर जैसे ही सिर ऊपर उठाया- उसे पति का हँसता चेहरा सामने आ गया। मानो कह रहा हो, ''देखा जब मैं तुम्हारी व्यावहारिक बुद्धि की तारीफ करता था तो तुम नहीं मानती थी।''

उसको जोर से रुलाई आई और वह आँख पर पल्लू रख कर अंदर चली गई।

तेरहवीं के एक दिन पहले प्रकाशक के यहाँ से 'मृत्यु-गीता' की प्रतियाँ छप कर आ गईं। उनमें से आधी बुक-सेलर्स को भेज दी गईं और बाकी तेरहवीं के दिन एक मेज पर सजा कर रख दी गईं और पास में ही 'सहयोग-पात्र' रख दिया गया। तमाम लोग शामिल हुए प्रसाद ग्रहण किया। ज्यादातर साहित्यकार बंधु ही थे। लगभग सभी ने पुस्तक ली।

रात में भाई ने उसके सामने सहयोग पात्र खोला 18 हजार कुछ रूपये निकले। 100 से ज्यादा प्रतियाँ लोग ले जा चुके थे। उसने भाई से सेठ व प्रकाशक को इस आय के बारे में बताने को कहा। भाई ने कहा यह सब परिवार के लिए है। सेठ और प्रकाशक बुकसेलर की ब्रिक्री से अपना हिस्सा लेकर आपको हिसाब देंगे।

चलते समय उसने कहा, ''दादा किसी उपन्यास लिखने का प्रयास कर रहे थे। क्या वह लिख पाये?''

उसे उस काली रात को पति का वह रात भर लिखना याद आया। बोली, ''देखूँगी।''

सुबह उठ कर उसने उनके कागजों को देखना शुरू किया। उसे एक पांडु-लिपि मिली। काँपते हाथो से उसने पहला पन्ना खोला।

''मेरी सब कुछ,

तुम्हारा नाराज होना गलत नहीं है। कागज खाकर या स्याही पीकर जीवन नहीं गुजारा जा सकता। केवल सरस्वती की कृपा से ही जीवन नहीं चल सकता। लक्ष्मी की अनुकंपा भी जरूरी है। इसीलिए शास्त्रों में त्रिदेवी-आराधना का विधान है। इस कमी को पूरा करने का मैंने तुससे आग्रह भी किया था पर तुम मानिनी बनी रहीं। यह भी सत्य है कि इसमें मेरा अहं भी तुष्ट होता था, अतएव मैंने ज्यादा प्रयास भी नहीं किया। स्त्री की जुबान की धार विद्युत है। पर ऐसा कहने वाले भूल जाते हैं कि यह कितनी उत्प्रेरक भी हो सकती है। इसकी चाबुक से कितने लोग महान बन गए। मैं भी अवसाद और एक्शन के चरम पर पहुँच कर यह उपन्यास लिख कर छोड़ रहा हूँ। पूर्ण विश्वास है कि मेरी यह अंतिम कृति घर के दारिद्र दूर कर तुम्हारे बच्चों के जीवन यापन के लिए पर्याप्त होगा, वरन 'भिक्षा-पात्र या भतार' का विकल्प तो है ही।''

आजीवन और मृत्यु-पर्यन्त भी तुम्हारा ही।''

वह आगे नहीं पढ़, चुपचाप पाण्डुलिपि बंद कर दी।

सुबह भाई के साथ प्रकाशक आया। एडवांस का पैसा दिया और पाण्डुलिपि लेकर अनुग्रहीत होता चला गया।

महीने भर के अंदर ही 'मृत्यु-गीता' की प्रतियाँ दुबारा छापी जा रही थीं। घर में भुखमरी से छुटकारा मिलता दिख रहा था। समय के साथ सब कुछ सामान्य होता जा रहा था। बच्चे भी पिता के बारे में कभी-कभी ही पूछते। पर उसके दिल का एक कोना कहीं घायल था और रिस रहा था। हर सफलता उसे और हरा भरा कर देती। रिसाव तेज हो, छटपटाहट बढ़ जाती, पर निरुपाय... जीना तो था ही। बड़ा बेटा स्कूल जाने लगा, बेटी छोटी थी, माँ से ही शिक्षण पा रही थी। गृह कार्य में मदद के लिए बाई भी लग गई थी।

बेटा स्कूल जा चुका था। वह बेटी को पढ़ा रही थी, कि उसे लगा कि कोई आगंतुक बाई से जोर-जोर से बात कर रहा था। उसने बाहर निकल कर जानना चाहा। उसे देख वह आदमी बाई को हटा कर बगैर अनुमति घर के अंदर चला आया और उससे भी चिल्लाने लगा। इस अप्रत्याशित चीख पुकार से वह स्तब्ध हो गई। उनकी समझ में पहले कुछ नहीं आया। धीरे-धीरे उसे समझ में आया कि आगंतुक प्रकाशक का आदमी था और कह रहा था कि उसको धोखा दिया गया। जो पाण्डुलिपि उसने अपने पति की आखिरी रचना, उपन्यास के रूप में प्रकाशित होने को दी थी वह मात्र सादे कागज का बंडल है उन पर कुछ भी नहीं लिखा है। वह उससे पैसा वापस माँग रहा था और कोर्ट में घसीटने की धमकी दे रहा था। वह सन्न रह गई...। यह सही है कि उसने मात्र पहला पन्ना जो उसे संदर्भित था, ही देखा था। पर ऐसा कैसे हो सकता है? पति तो रात भर लिखता ही रहा था। ऐसा तो नहीं असली पाण्डुलिपि प्रकाशक ने खुद ही गायब कर दी हो और उसे नि:सहाय जान उस पर दोषारोपण कर रहा है। शोर सुनकर उसकी बेटी भी आ गई और उससे लिपट कर रोने लगी। उसके दिमाग ने काम करना बंद कर दिया। वह सिर झुकाये बेटी को चिपटाए खड़ी रही।

प्रकाशक का आदमी बोलता ही जा रहा था, कि एकाएक भाई के साथ सेठ जी और प्रकाशक खुले हुए दरवाजे से अंदर आए। सेठ ने आते

ही उस आदमी को डाँटा, ''चुप करो, महिलाओं से बात करने की तमीज भी नहीं है।''

प्रकाशक, ''मैंने तुमको सिर्फ पाण्डुलिपि देने की बात कही थी। तुमने यहाँ बदतमीजी शुरू कर दी।'' फिर उससे मुखातिब होकर विनम्रता से बोला, ''बहन जी! जब तक मैं सेठ जी और भाई को सूचित करूँ, तब तक इसको मैंने आपके पास भेजा था कि दुविधा में असली पाण्डुलिपि की जगह अधूरी किताब आपने दे दी हो तो हम लोगों के आने तक आप ढूँढ़ लेंगी। आपको परेशान करने का कोई इरादा नहीं था। इसको माफ कर दीजिए।''

''पर मेरे पास तो कोई और पाण्डुलिपि है ही नहीं। मैंने खुद देखा था कि उस रात वह लिखते ही रहे।''

भाई ने आगे बढ़कर पाण्डुलिपि उसके हाथ से ली, और पन्ने पलटने लगा। सभी की निगाह भाई पर थी।

भाई के चेहरे पर निराशा थी, पर शीघ्र ही वह विस्मय और फिर हताशा में परिवर्तित हो गई। वह रूँधे गले से बोला। ''हे ईश्वर! नियति का कैसा कुचक्र! दादा ने लिखना शुरू किया और पूरा उपन्यास लिख कर ही उठे पर दुर्भाग्य, उनके कलम की स्याही खत्म हो गई पर वह लिखते ही गए।''

पाण्डुलिपि सेठ और प्रकाशक को दिखाते हुए ''देखिए स्याही धीरे-धीरे हल्की होती गई और अंत में एकदम खत्म हो गई। आगे के पन्नों में जहाँ कलम पर ज्यादा दबाव पड़ा वहाँ पन्ने पर दबाव के कारण कुछ अस्पष्ट शब्द से दिख भी रहे हैं।''

उसने लपक कर भाई के हाथ से पाण्डुलिपि ले ली। वाकई... निब के दबाव से कुछ शब्द आकृति समझ में आ रही थी। उसके दिमाग में कौंधा- पति ने उसके लिए रात भर अथक प्रयत्न किया, बदजुबानी के बाद भी इतना स्नेह! उसे जोर से रोना आया। पर वह रोई नहीं।

''इस उपन्यास को मैं पूरा करूँगी।''

उसकी गंभीर आवाज से सब चौंक गए। लगता था आवाज कहीं दूर से आ रही है।

''मेरे पति चाहते थे कि मैं फिर से लिखना शुरू करूँ। मैं ही बच्चों की वजह से इस तरफ ध्यान नहीं दे पाई। अपनी मृत्यु से वह मुझे प्रेरित

करने के लिए यह प्लाट दे गए हैं, जिससे मजबूरी में मुझे लिखना पड़े। प्रकाशक जी आपका एडवांस मेरे ऊपर उधार है। दो महीने में मैं यह उपन्यास आपको दे दूँगी। यदि दो महीने में इसे पूरा नहीं कर पाई, या आपको मेरा लिखा पसंद न आया तो मैं ब्याज समेत आपका पैसा वापस कर दूँगी।''

यह कह कर वह चुप हो गई।

सबने देखा उसके चेहरे पर दुःख तो था पर लाचारी, और बेचारगी की जगह एक अपूर्व दृढ़ता थी। सेठ, प्रकाशक, प्रकाशक का कारिंदा, यहाँ तक भाई भी उसके इस रूप को देख स्तब्ध थे, कोई कुछ भी नहीं बोल सका। सभी प्रणाम कर बाहर चले आए।

दुःखों की इस अंतिम ठोकर से नारी जाग उठी थी।

एक रोज भोर ही भाई के घर की काल-बेल बजी। इतनी सुबह कौन है, सोचता आँखे मलता भाई बाहर निकला...।

दृढ़ चेहरे पर थकान, लाल आँखें, बेतरतीब केशविन्यास, कहीं दूर देखती हुई दीदी खड़ी थी। वह किसी अनहोनी को सोच घबरा गया। इससे पहले कि भाई कुछ बोल सके दीदी ने एक पांडुलिपि उसको थमा दी।

''मैंने अपना वादा पूरा कर दिया आगे प्रभु की इच्छा।'' कह कर वह चली गई। चाहते हुए भी भाई उसको रोक नहीं सके।

प्रकाशक ने पाण्डुलिपि का मूल्यांकन एक साहित्यकार से कराया। जीवित रचनाकार जीवन की मूलभूत सुविधाओं को नहीं जुटा पाया तो मृत्यु की शरण ली। जाते-जाते परिवार के भरण पोषण के लिए उपन्यास लिखने बैठा, तो दुर्भाग्य... लिखते स्याही खत्म हो गई। यह 'अनलिखा उपन्यास' उसकी पत्नी पूरा करती है... क्या प्लाट है। मूल्यांकनकर्ता ने कृति को उत्कृष्ट माना। पुस्तक की तीन चार 'प्रूफ कापी' समीक्षकों को भेजी गई। उन्होंने भी कृति को बहुत सुंदर बताया व अनुकूल टिप्पणी लिखी। यह टिप्पणी और विवेचना अखबारों में छपी और 'न्यूज' बन गई।

'अनलिखा उपन्यास' कि 5000 प्रतियाँ छपीं। मार्केट में पहले से ही डिमांड मौजूद थी। हजार प्रतियाँ तो तत्काल ही बिक गईं। लेखक में उसने पति का ही नाम रखा था। 'मृत लेखन' की प्रशस्ति से साहित्य जगत् लबरेज था। लेखक की बाकी कविताओं का संग्रह भी छपा।

वाह-वाही हुई, पर इसका भी लाभ 'अनलिखा उपन्यास' को मिला। साल भर में दूसरा संस्करण बाजार में आ गया।

जो लोग जानते थे कि लेखक सच्चाई में मात्र प्लाट ही छोड़ गया था, उस पर उपन्यास का ताना-बाना उसकी पत्नी ने ही बुना था, वह उसकी लेखिका पत्नी के रचना कौशल से अभिभूत थे। सेठ और भाई विशेषकर प्रकाशक ने उससे एक और उपन्यास लिखने को कहा। उसने मना कर दिया। भाई ने समझाया एक नॉवेल और कुछ काव्य-संग्रहों की आय से अभी तो काम चल जाएगा पर आगे...। बच्चे बड़े होंगे। पढ़ाई, लिखाई, मंहगाई के अलावा कुछ अप्रत्याशित आकस्मिक परिस्थितियाँ! क्या इतनी आमदनी इन सब भविष्य की जरूरतों के लिए पर्याप्त हैं? संतोषी होना ठीक है, पर यथार्थ को समझ कर व्यावहारिक होना ही बुद्धिमानी है।

भाई बोला, ''दीदी तुममे इतनी प्रतिभा है। साहित्य जगत को इससे वंचित रखना क्या उचित है? दादा की मृत्यु से साहित्य की क्षति-पूर्ति भी तो तुम्हीं को करनी है। यदि आप ऐसा नहीं करती... तो यह आत्मघात से भी बड़ा...।'' कहते-कहते वह रुक गया।

थोड़ी देर तक वह दूर कहीं देखती रही, फिर बगैर कुछ कहे अंदर चली गई।

भाई कई बार कुशलक्षेम जानने आया। बच्चों ने बताया माँ पूजा कर रही हैं। वह लौट गया। एक दिन जब वह सुबह वहाँ पहुँचा तो उसने भाई को पूजा वाले कमरे में ही बुलवाया।

पूजा घर... वह क्षण भर के लिए ठिठका! यह वही कमरा है जिसमें दादा ने इह-लीला समाप्त की थी। वह चप्पल उतार कर अंदर गया। अंदर रोशनी कम थी। उसकी आँखें कुछ नहीं देख पा रही थीं, परन्तु धूप और अगरबत्ती की धीमी सुगंध ने स्थान की पवित्रता का आभास दिया। उसकी आँखें श्रद्धा से मुँद गईं। जब उसने आँखें खोली, तब तक आँखें अंधेरे की अभ्यस्त हो चुकी थीं। दीदी जमीन पर रखे एक आसन पर बैठी थीं, सामने लिखने की चौकी पर टेबल लैम्प जल रहा था जिसकी रोशनी सामने रखी लेखन सामग्री पर फैल रही थी। पूजाघर में कोई देव प्रतिमा नहीं थी, न ही दादा की माला पड़ी फोटो। दीदी के आसन के सामने पूरब की दीवाल से सटी वेदी पर पंच-ज्योति दीप जल

रहा था। वेदी पर अगरबत्ती पूरे कक्ष में सुगंध बिखेर रही थी। दीपक के मद्धिम प्रकाश में उसने देखा कि वेदी पर 'मृत्यु-गीता' और 'अनलिखा उपन्यास' की एक-एक प्रति रखी थी, पुस्तकों पर माल्यार्पण था।

दीदी उसे देख कर बोली, ''आओ, बड़े सुंदर समय आए हो। अभी-अभी यह गाथा पूरी की। इसके पीछे तुम्हारी यथार्थवादी सलाह का योगदान है। देखो कैसी बन पड़ी है।''

भाई ने पाण्डुलिपि हाथ में ली। उसकी निगाहों को पूजा-घर का मुआयना करते देख दीदी ने पूछा, ''क्या देख रहे हो?''

भाई, ''ऐसा पूजा घर मैंने नहीं देखा। न कोई देव प्रतिमा, न ही दादा का चित्र। मात्र दो पुस्तकें।''

दीदी, ''तुम्हारे दादा अंतिम क्षणों में इसी कमरे में थे और अंतिम रचना भी इसी जगह लिखी। मेरे लिए यही पूजा घर है। जब देवता प्रस्तर-मूर्ति में रह सकता है तो इन पुस्तकों में क्यों नहीं? इनमें तो साक्षात् सरस्वती का वास है, और माला उनके चित्र पर डाली जाती है जो साथ छोड़ गए होते हैं। तुम्हारे दादा मेरे मन में हैं, मुझे मेरे बच्चों में दिखते हैं और वह अपनी रचनाओं में आज भी जीवित हैं।''

''नास्ति येषां यश: काये जरामरणज भयम्''

वह पांडुलिपि लेकर दीदी को प्रणाम कर प्रकाशक के यहाँ चल पड़ा।

❐❐❐

मनोविकार
(FETISHISM)

मजिस्ट्रेट साहब आज सुबह टहलने में अलसा गये। मुँह अंधेरे हमेशा की तरह शैय्या त्याग तो कर दिया परंतु मन 'पादमेकं न गच्छामि' का हठ पकड़ कर बैठ गया। मजिस्ट्रेट साहब टहलने नहीं गये। दुबारा सोना असंभव था, सो पूरब वाली टेरेस पर कुर्सी डाल कर बैठ गये। उनकी नजर क्षितिज की ओर गई। क्षितिज पर शांत हलचल थी। शायद क्षितिज को भुवन-भास्कर के आते हुए रथ की सूचना मिल रही थी। पंछियों का कलरव मानों उनकी धनुष्टंकार थी। शीतल मंद सुगंध मलय ने अंधकार को धकेलना प्रारम्भ कर दिया था। गत साँझ की विजयनी मसि-वर्ण निशा का रंग उड़ने लगा था। अपनी विफलता से पूर्व की ओर उसका चेहरा रक्तिम होने लगा, संसार की 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की प्रार्थना सफल हुई। भावुक मन ने सोचा, सबसे पहले ऊँचे शिखरों पर रश्मिरथी की किरणों की पताका लहराई होगी। उसीके बाद सागर से सद्यस्नात दिवाकर के उदय होते ही सारा विश्व ज्योतिर्मय हो गया। अंधकार पर प्रकाश की विजय और फिर रोशनी पर अंधेरे की जीत का शाश्वत चक्र प्रकृति की परिवर्तनशीलता की याद दिलाता है। जब सूर्य को भी अस्त होना पड़ता है तो मानव की क्या बिसात!

मजिस्ट्रेट साहब सुबह की मार्निंग वाक में इतने लीन हो जाते थे कि उषा काल की इस सुंदरता को निरखने का ध्यान ही नहीं आया। उन्होंने सूर्य को नमन किया। तभी पत्नी ट्रे में चाय का प्याला और ताजा अखबार ले आई और सामने ही बैठ गई। मजिस्ट्रेट साहब एक हाथ में चाय और दूसरे हाथ में न्यूज-पेपर लेकर देखने लगे। सामने बैठी पत्नी की नजर एक हेडलाइन पर पड़ी और वह आश्चर्य से बोल पड़ी ''फिर महिलाओं के अधोवस्त्रों में आग लगाने की वारदात हुई। कौन कर रहा है यह सब?'' मजिस्ट्रेट साहब ने अखबार पलट कर वह खबर डिटेल से पढ़ी- 'पिछले कुछ हफ्तों से शहर की एक कालोनी में महिलाओं के सूखने के

लिए फैलाए गए अधोवस्त्र जले पाये जा रहे हैं।' वह भी हैरान थे अजीब घटना। पत्नी ने फिर पूछा ''कौन कर रहा है यह सब। क्या कोई सिरफिरा इस घटना को अंजाम दे रहा है?'' मजिस्ट्रेट साहब का मन खट्टा हो गया। प्रशासन की यही दिक्कत है, शहर में कोई भी घटना हो, जनता और मीडिया तत्काल प्रशासन से सवाल करने लगती है। हद ही है कि अब बीवी भी शुरू हो गई! उनकी चाय बेस्वाद हो गई।

तभी टेलीफोन की घंटी बज उठी। मजिस्ट्रेट साहब को अस्पताल से 'मृत्यु-पूर्व बयान' रिकार्ड करने के लिए बुलाया गया था। पता चला एक युवती तेजाब डालने से बुरी तरह जख्मी है। उसी का बयान नोट करना है। रेडियो-पेट्रोल कार उनका नीचे इंतजार कर रही थी। वाकई आज की सुबह ठीक नहीं लग रही थी। पत्नी कुछ खाने के बाद ही जाने का इसरार कर रही थी, पर युवती की त्रासद घटना सुनकर ज्यादा जिद न कर तुरन्त नाश्ता पैक कर अर्दली को थमा दिया, ''मौका मिलने पर साहब को नाश्ता करा दें।''

चलते समय पत्नी ने चिंतित आवाज में कहा कि वह भी तेजाब से जली महिला का हाल जानना चाहेंगी। मजिस्ट्रेट साहब उसके चेहरे और वाणी से छलकती चिंता से हतप्रभ थे।

केवल नारी ही नारी के रूप विकृत होने का दर्द समझ सकती है।

नीचे उतरकर उन्होंने देखा कि उनको लेने उस हल्के का दरोगा भी आया था। दरोगा जान रहा था कि मृत्यु-पूर्व बयान लेने के बाद साहब उसी की क्लास लेंगें कि अभी तक अधोवस्त्र जलने का राज क्यों नहीं खुल सका। यदि पुलिस ने तत्परता की होती तो शायद यह युवती जलने से बच सकती थी। इसीलिए सफाई देने वह स्वयं आ गया। साहब को पेट्रोल-कार के बजाय अपनी जीप में बैठा कर चल दिया।

रास्ते में साहब को दरोगा ने बताया कि उसके हल्के के एक मोहल्ले में सूखने के लिये डाले कपड़ों में से केवल महिलाओं के अधोवस्त्र ही जले पाये जाते थे। कुछ वारदातों के बाद महिलाओं ने अधो-वस्त्र घर के बाहर या छत पर डालना बंद कर दिया। पर छुट-पुट वारदात फिर भी होती रहीं। तफतीश पर कोई गवाह या सूत्र न मिलने के कारण जाँच आगे नहीं बढ़ सकी। कुछ रुक कर धीरे से बोला- ''सर, महिलाएँ भी अपने अधोवस्त्रों के बारे में बात करने में संकोच करती हैं।''

साहब गुर्राये, ''तो तुमने महिला पुलिस को इंक्वायरी के लिए क्यों नहीं भेजा? आइंदा यह मत कहना कि महिलाओं से पूछ-ताछ तुम्हीं ने की। यदि मैं इंक्वारी करूँ तो तुम्हे वार्निंग जारी करूंगा।''

दरोगा साहब ने गाड़ी चलाते-चलाते ही दूसरे हाथ से सर को सलाम किया, ''हें हें सर, आप ही तो माई-बाप हैं। हालाँकि, मेरा मन कहता है कि यह किसी सिरफिरे या दिलजले का काम लगता है।''

मजिस्ट्रेट साहब को अपनी पत्नी की कही बात याद आ गई।

''हूँ..., तेजाब की घटना से तो यही लगता है। फिर भी इस मसले में अपने साथ किसी महिला दरोगा को भी साथ ले लो। अब मीडिया के अलावा ऊपर का दबाव भी आएगा। इस पर ध्यान दो।''

अस्पताल पहुँचने पर डॉक्टर और ड्यूटी नर्स साहब को आई.सी.यू. ले गये। वहाँ जा कर उन्होंने देखा एक आकर्षक देह-यष्टि, खुला गेहुँआ रंग की 25-30 वर्ष की युवती पीठ किए लेटी है। नर्स धीरे से उसे सीधा कर बोली, ''देखो मजिस्ट्रेट साहब बयान लेने आये हैं। तुम्हारे साथ जो हुआ, ठीक-ठीक याद कर इन्हें बता दो।''

महिला ने जैसे ही उनकी तरफ चेहरा किया मजिस्ट्रेट साहब को बड़ा धक्का लगा। युवती का एक तरफ चेहरा, गर्दन व वक्ष जल गया था। सौभाग्य से आँख बच गई।

मजिस्ट्रेट साहब ''ओफ...'' कह कर कुर्सी पकड़ कर खड़े रहे। उनका पीला होता चेहरा देख डॉक्टर ने उनकी नब्ज पकड़ कर बोला, ''सर आप ठीक तो हैं? पहले आप पानी पी लीजिए।''

साहब ने पानी पी कर डॉक्टर को धन्यवाद दिया और मरीज की मानसिक स्वास्थ्य संबंधी प्रमाण देने को कहा, जिसके बाद बयान प्रारम्भ हुआ।

मजिस्ट्रेट, ''तुम कैसे जल गई?''

युवती जो अभी तक सिसक रही थी, इस प्रश्न पर फूट-फूट कर रो पड़ी। सब शांत रहे। नर्स उसे सांत्वना देती रही। कुछ देर बाद दु:ख की एक लहर गुजर जाने के बाद युवती ने कहना शुरू किया-

''मैं किराये के मकान में रहती हूँ जो फर्स्ट फ्लोर पर है। घर पर मैं अकेली थी। घर के काम के बाद मैं बाथरूम में नहा रही थी। तभी मुझे बरामदे में किसी के चलने का भास हुआ। मैं जल्दी से कपड़े पहन

कर बाहर निकल कर देखने का प्रयास करने लगी। अभी अधोवस्त्र ही पहन पायी थी कि किसी ने दरवाजा खोल झाँका। मुझे केवल अधो-वस्त्र में देख कर उसकी आँखों में अजब सी चमक आई जो कि क्रोध, नफरत और घृणा से जल रही थी। मैं उसका भयानक चेहरा देख कर भयभीत हो गई मैंने टॉवेल से अपने को ढकना चाहा। तभी एकाएक उसने हाथ में लिए काँच के बर्तन से कुछ पानी के तरह का लिक्विड मेरे ऊपर फेंका। मैंने दाहिनी ओर मुड़ कर बचना चाहा पर तभी मुझे बायें चेहरे, गर्दन व सीने में जोर से जलन महसूस हुई। मैं दर्द और डर से चीखी। किसी तरह कपड़े से शरीर लपेट कर बाहर आई। मेरी चीख सुन कर नीचे वाली आंटी ऊपर आ गई। उनके हाथ में लोटे में दूध था सो उन्होंने वही मेरे ऊपर उड़ेल दिया। मैं गिर पड़ी। उसके बाद मुझे होश नहीं रहा।''

मजिस्ट्रेट, ''क्या तुमने उसका चेहरा ठीक से देखा था? उसे पहचानती हो या देख कर पहचान सकती हो?''

युवती, ''हाँ, वह मेरे घर के चार-पाँच घर बाद रहता है। उस घर मे एक पति-पत्नी रहते हैं। यह 16-17 वर्ष का लड़का उन दोनों में से किसी का भाई है।''

मजिस्ट्रेट- ''क्या उस परिवार से आप लोगों की कोई रंजिश?''

युवती- ''नहीं उस परिवार को हम लोग नहीं जानते इसलिए रंजिश का कोई सवाल ही नहीं।''

मजिस्ट्रेट ने बयान लिखते हुए मन में सोचा- ''क्या जमाना है, लोग अपने पड़ोसियों से भी परिचित नहीं हो पाते।

मजिस्ट्रेट ने लीडिंग प्रश्न किया- ''क्या तुम भी अपने अधो-वस्त्र बाहर खुले में फैलाती थी?''

युवती- ''जी हाँ, पर जबसे अधो-वस्त्रों के जलने की वारदात होने लगी तबसे यह कपड़े मैं कमरे के अंदर ही फैलाती थी।'' फिर कुछ याद करती हुई बोली। ''मगर आज कपड़े कुछ नम रह जाने की वजह से कुछ देर के लिए धूप में यह सोच कर फैलाये थे कि मैं तो सामने ही हूँ।''

मजिस्ट्रेट- ''कुछ और कहना है?''

युवती- ''नहीं।''

इसके बाद मजिस्ट्रेट ने मरीज के दस्तखत और अंगूठा निशान लिया, अपने दस्तखत किये और डॉक्टर से प्रमाण-पत्र लिया कि बयान के दौरान भी मरीज अपने पूरे होशो-हवास में रही।

आई.सी.यू. से निकलते ही मजिस्ट्रेट ने देखा मीडिया पहुँच चुका है ओर 'ऊपर के दबाव' के कारण बड़े कप्तान साहब और ए.डी.एम. साहब भी पहुँच चुके थे और प्रेस के सवालों का जवाब दे रहे थे। मजिस्ट्रेट को बयान लेकर आया देख सब उनकी तरफ भागे। उनके मुंह के सामने माइक की कतार लग गई। सभी अपना माइक उनके मुंह के पास रखना चाह रहे थे।

प्रश्न- ''कुछ पता चला महिला कैसे जली?''

मजिस्ट्रेट- ''किसी ने उसके ऊपर तेजाब डाल दिया।''

प्रश्न- ''वह कौन था, अभी तक पकड़ा क्यों नहीं गया... क्या तमाशा है कोई लॉ एंड ऑर्डर रह ही नहीं गया?''

मजिस्ट्रेट (शांति से) -''जल्द ही पकड़ा जाएगा।''

प्रश्न- ''महिला ने अपने बयान में क्या बताया, एसिड फेंकने वाला कौन था?''

मजिस्ट्रेट-''यह बयान गोपनीय है और अदालत में ही पेश किया जाएगा।''

प्रश्न- ''तब तक तो बहुत देर हो जाएगी।''

मजिस्ट्रेट-''नहीं, पुलिस की तफ्तीश में यह पता चल जाएगा, यकीन मानिए अपराधी जल्दी ही गिरफ्त में होगा।''

सभी पत्रकार हल्के के थाने की ओर रवाना हो गये।

युवती के बयान के आधार पर पड़ोस के घर से 15-16 साल का किशोर गिरफ्तार कर लिया गया। उसके कमरे से तेजाब की बोतल, कई बीकर (कालेज विज्ञान प्रयोगशाला में प्रयुक्त काँच के छोटे मग के आकार का उपकरण), एक बड़ी बोतल में गंधक का तेजाब और मोटे रबर के दस्ताने पाये गये। लड़के को गिरफ्तार करके थाने लाया गया जहाँ से उसे युवती द्वारा शिनाख्त कराने के लिए अस्पताल भेज दिया गया था। आरोपी का बड़ा भाई जो किसी प्राइवेट फर्म में काम करता था, छोटे भाई की गिरफ्तारी सुन कर वह थाने पहुँच चुका था। सारा किस्सा जानने के

बाद वह थानेदार के सामने खड़ा ऐसे काँप रहा था जैसे अपराधी स्वयं ही हो।

थानेदार ने उसे आश्वस्त किया, और बैठने के लिए कहा। बैठने के बाद उसने थानेदार से पूछा, ''सर, मेरे भाई का अब क्या होगा?''

थानेदार- ''उस पर केस चलेगा और यदि अपराधी सिद्ध हो जाता है तो सजा भी होगी। पर यह बाद की बात है। तुम बताओ कि तुम्हारा भाई महिलाओं के अधो-वस्त्र क्यों जलाने लगा।''

भाई इधर उधर खड़े लोगों को देख कर चुप रहा। थानेदार ने सबको बाहर भेज दिया और प्रश्नवाचक मुद्रा में बैठ गया।

''सर, यह मेरा छोटा भाई है जो गाँव से मेरे साथ पढ़ने शहर आया है। अभी 16 वर्ष का है 11वीं कक्षा में पढ़ता है और पढ़ने में तेज भी है। हम लोग सुख से जी रहे थे। अपनी भाभी से बहुत अटैच था, पर एक रोज जब यह बाथरूम में काफी देर से नहा रहा था तो मैं इसे देखने पहुँचा। मैंने खिड़की से झांक कर देखा तो यह अपनी भाभी की ब्रा हाथ में लिए अश्लील तरह से मसल रहा था। मुझे गुस्सा आया। मैं जबरदस्ती दरवाजा ठेल कर अंदर घुस गया। यह घबरा कर खड़ा हो गया। इसके खड़े होती ही इसका किशोर पौरुष पूरी तरह से उत्तेजित अवस्था में नजर आया। मुझे समझ में आया कि वह क्या कर रहा था। अपनी भाभी और वस्त्रों पर ऐसी कुत्सित भावना। मैं शॉक्ड था। मैंने इसकी काफी पिटाई की। इसने कोई प्रतिरोध नहीं किया। केवल आग्नेय आँखों से मुझे देखता रहा। मैं अपनी पत्नी को सचेत करके ऑफिस चला गया। इस घटना के 15 दिन तक यह बड़े ही बिगड़ैल स्वभाव का रहा। मैंने इसे वापस भेजने का निर्णय कर ही लिया था कि एकाएक यह बिल्कुल सामान्य बिहैव करने लगा तो हम लोग आश्वस्त हो गये।''

थानेदार- ''तुमको शक नहीं हुआ कि यही लड़का महिलाओं के अधोवस्त्र एसिड डाल कर जला रहा है?''

''नहीं सर! उस समय तो नहीं पर अब सोचता हूँ कि जबसे जले कपड़े मिलने लगे तभी से यह एकदम शांत हो गया था। हो सकता है कि इस वारदात में भी इसी का हाथ हो।''

थानेदार- ''हो सकता नहीं! वास्तव में कपड़े जलाने वाला अपराधी भी यही है। उसने बगैर किसी सख्ती के ही अपना जुर्म कुबूल

कर लिया है। एसिड से जली महिला ने शिनाख्त में इसे पहचान लिया है। अब केवल अदालती कार्यवाही ही बाकी है।''

पूरा शहर आक्रोश से उबल रहा था। महिला संगठन कभी थाने, कभी पुलिस अधिकारियों का घेराव कर रहे थे। मीडिया रिपोर्ट कर रहा था, उनकी टी.आर.पी. बढ़ रही थी। इसीलिए ऊपर से दबाव आ रहा था। पुलिस ने जल्दी ही आरोपी को मजिस्ट्रेट के सामने प्रस्तुत का दफा 164 (Criminal Panel Code में दफा 164 का बयान मजिस्ट्रेट के सामने कराया जाता है, जिससे आरोपी बाद में मुकर नहीं सकता। पुलिस द्वारा इस प्रक्रिया को Routine से न लागू करने की वजह से तमाम आरोपित छूट जाते हैं।) का बयान कराया।

मजिस्ट्रेट आरोपित लड़के से- ''तुम पर आरोप है कि तुमने पड़ोस की महिला पर एसिड फेंका।''

लड़का चुप रहा। मजिस्ट्रेट ने दोबारा फिर वही प्रश्न दोहराया, पर लड़के ने कोई उत्तर नहीं दिया बस उन्हें बराबर देखता रहा। दरोगा ने उसे पीछे से धक्का दिया- ''साहब की बात का जवाब क्यों नहीं देते हो।''

लड़का एकदम आवेश में आ गया। उसके व्यक्तित्व में एकाएक परिवर्तन आ गया। इसकी आँखों में नफरत की ज्वाला धधक उठी, उनमें मानो खून उतर आया हो। चेहरा क्रोध से सफेद हो गया, कुछ भर्राती आवाज में फुफकारता सा बोला, ''तो उसने वह कपड़े क्यों पहने जिनसे मुझे सख्त नफरत है, इन्हीं कपड़ों की वजह से मेरी बेइज्जती हुई, मैं अपने पिता समान भाई की नजरों में गिर गया। ऐसे कपड़े मुझे जहाँ दिखेंगे जला दूँगा।''

उसकी उत्तेजना को देख दो सिपाहियों ने उसे एतिहातन पकड़ लिया। वह कभी भी आक्रामक हो सकता था। मजिस्ट्रेट साहब भी सहम गये। उन्हें लगा कि एकाएक लड़के में शैतान उतर आया हो।

मजिस्ट्रेट, ''तुम्ही महिलाओं के अधो-वस्त्र जलाते थे?''

''हाँ, एक बार बता तो दिया हाँ। और ऐसा करने से मुझे कोई नहीं रोक सकता है।'' वह फिर फुफकारा।

लगभग डेढ़ महीने बाद यह केस पुनः समाचार कि हेडलाइन बना- 'महिला तेजाब कांड में अपराध के 47 दिन बाद ही फैसला आया।'

मजिस्ट्रेट के सामने किशोर अपराधी के अपराध स्वीकार करने के बावजूद कोर्ट में बचाव पक्ष के वकील ने बहस की, कि लड़के की मानसिक दशा ठीक नहीं है, ऊपर से वह नाबालिग है अतः उसे मानसिक रोगी मान कर छोड़ देना चाहिये। इस तथ्य की पुष्टि के लिए उसने मनोचिकित्सक को पेश किया। मनोचिकित्सक ने बताया कि लड़का 'फेटेसिस्म' नाम के मनोविकार से ग्रसित है, जिसमें पुरुष महिला के वस्त्रों से सेक्सुअल ग्रेटिफिकेशन (यौनिक संतुष्टि) प्राप्त करता है। भाई द्वारा पकड़े जाने और दंडित करने पर इसके अंदर अपराधबोध जागृत हो गया। अपनी बेइज्जती का कारण इन वस्त्रों को मान कर वस्त्रों को जलाने लगा, और जब इसे वह महिला बाथरूम में अधो-वस्त्र में दिखी तो उसने उन वस्त्रों को ही जलाना चाहा महिला पर तो शायद उसका ध्यान ही नहीं गया। उस समय वह वस्त्र महिला के शरीर पर थे इसलिए वह भी जल गई।''

जज साहब ने उसकी नाबालिग उम्र व मनोचिकित्सक के बयान का संज्ञान लेते हुए लड़के को पुलिस कस्टडी में मानसिक अस्पताल भेजने का आदेश दिया, साथ में यह भी कहा कि ठीक होने के दो साल बाद तक इसकी मानसिक दशा को निगरानी में रखा जाय।

मजिस्ट्रेट साहब यह समाचार सुबह टेरेस पर अपनी पत्नी के साथ चाय पीते समय अखबार में देखा। पढ़ने के बाद उन्होंने अपनी पत्नी को बताया कि जज साहब ने किशोर को मानसिक रोगी मानते हुए, उसे मनोरोग अस्पताल में पुलिस कस्टडी में इलाज करने के लिए भर्ती करने का आदेश दिया।

पत्नी- ''लो यह तो मैं पहले ही कह रही थी कि लड़का सिरफिरा है। जज साहब को यह जानने के लिए डॉ0 की जरूरत पड़ी?''

साहब- ''अरे भाई कानूनी प्रक्रिया का पालन तो जज साहब को भी करना पड़ता है।''

पत्नी ने हूँह करते हुए मुँह बिचकाया और ट्रे, कप लेकर चली गई।

❐❐❐

कार्पोरेट गेम्स

शास्त्रों में 'निरभिलाषी' व्यक्ति को पावन माना गया है। यदि विचार करें तो स्पष्ट होगा कि संसार के सभी अधम कार्यों के मूल में उत्कंठ अभिलाषा और आत्मकेंद्रित व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा ही होती है। चाहे वह राजनीति हो, प्रशासन अथवा धर्मगुरुओं के आश्रम। बाहर से साफ सुथरा दिखने वाला कार्पोरेट जगत भी इससे अछूता नहीं है।

कार्पोरेट जगत में वाइस-प्रेसिडेंट स्तर तक तो इतनी मारा-मारी नहीं रहती पर वाइस-प्रेसिडेंट से प्रेसीडेंट स्तर पर पहुँचने के लिए बहुत घमासान होता रहता है। कहावत है 'नथिंग इज फाउल प्ले आफ रीचिंग प्रेसीडेंट (प्रेसिडेंट बनने के घृणित खेल में कुछ भी घृणित नहीं है)। मिथ्यारोप, चरित्र-हनन, पारिवारिक कलंक लगाने से लेकर एक्सीडेंट अथवा हत्या तक की संभावना रहती है। इतना सब होने के बावजूद इस आकर्षक स्थान की चाहत हर प्रतिभागी में पाई जाती है।

एक अरबपति कंपनी में प्रेसिडेंट की जगह रिक्त थी। सुदर्शन कुमार इसके लिये पूर्ण रूप से उपयुक्त माने जाते थे। प्रेसिडेंट की सेवा-निवृत्ति में अभी एक पखवारा बाकी था, मगर सब लोगों ने सुदर्शन कुमार को प्रेसिडेंट कहना शुरू कर दिया था। संभवत: मैनेजमेंट से भी कुछ संकेत मिल रहे थे।

नये पद के अनुरूप सूट सिलाने जब वह अपनी पत्नी श्यामा के साथ शो-रूम पहुँचे तो वहाँ अत्यंत आकर्षक सेक्रेटरी से मुलाकात हो गई। सेक्रेटरी ने बहुत मुस्करा कर सुदर्शन जी का अभिवादन किया। उसने बताया, ''सर आप तो प्रेसिडेंट हो ही रहें हैं, लोग मुझे भी प्रेसिडेंट-सेक्रेटरी कहने लगे हैं।''

सुदर्शन जी ने मुस्कुराते हुआ पूछा, ''क्यों? प्रियंका भी प्रेसिडेंट साहब के साथ दूसरी कंपनी जा रही हैं?''

सुदर्शन ने सेक्रेटरी की मुलाकात पत्नी से कराई। सामान्य शिष्टाचार

के बाद सुदर्शन व्यस्त हो गए। घर लौटते समय पत्नी ने पूछा, ''तुम्हारी सेक्रेटरी तुमसे इतना इठला क्यों रही थी?''

सदुर्शन- ''अरे! तुम्हें याद नहीं यह कामिनी है। एक बार हम दोनों ने इसकी जान बचाई है।''

श्यामा- ''अरे! यह वही महिला है? उस रोज तो कितनी मरियल और बीमार लग रही थी।''

श्यामा के सामने उस दिन का पूरा दृश्य घूम गया।

श्यामा की वर्षगाँठ, पर सुदर्शन आफिस में व्यस्त। एक प्रोजेक्ट उसी दिन पूरा होना था। सुदर्शन का प्रमोशन ड्यू था, सो प्रोजेक्ट बहुत इम्पार्टेण्ट था। सुदर्शन अपनी सेक्रेटरी को प्रोजेक्ट पूरा होने तक आफिस में रुकने को बोल श्यामा को लेने घर आ गया। घर से श्यामा को लेकर आफिस पहुँचा।

प्रोजेक्ट पूरा हो चुका था। आफिस में केवल चौकीदार व कामिनी ही थे। कामिनी ने उठ कर दोनों का अभिवादन किया। सुदर्शन को रिपोर्ट देते हुए उन दोनों को एनीवर्सरी की बधाई देकर कामिनी चलने को मुड़ी ही थी, कि अचानक लड़खड़ाई और गिर कर बेहोश हो गई। सुदर्शन और श्यामा ने उसे सहारा दिया, चौकीदार की सहायता से उसे अपनी कार में लिटा कर अस्पताल में भर्ती कराया।

अस्पताल में कामिनी थोड़ी देर के बाद होश में आ गई। डॉक्टर ने बेहोशी की वजह कमजोरी बताया। कामिनी घर जाना चाहती थी पर डॉक्टर ने चेक-अप के लिए उसे रोक लिया। सुदर्शन ने बिल चुकता किया व आगे होने वाले बिल को कंपनी को भेजने को कह कर श्यामा के साथ चला आया।

रास्ते में श्यामा ने कहा- ''शायद कामिनी प्रग्नेंट है, तभी उसे चक्कर और बेहोशी आ गई।'' सुदर्शन ने हँसते हुए बताया, ''कामिनी की अभी शादी नहीं हुई।'' इस पर श्यामा ने कहा, ''प्रेग्नेंट होने के लिए महिला का शादीशुदा होना या न होना कोई मायने नहीं रखता।''

बात आई गई हो गई।

अगला दिन सुदर्शन के लिए बहुत विशेष था। आज ही उसे प्रेसिडेंट प्रमोट होने का आदेश मिलना था। सुबह पति-पत्नी पड़ोस के शिव मंदिर गए वहाँ से आकर नाश्ते के बाद सुदर्शन आफिस को निकला।

चलते समय श्यामा ने कहा, ''गुड न्यूज फोन पर नहीं तो एसएमएस पर अवश्य देना।''

सुदर्शन मुस्कुराता हुआ टाई ठीक करता हामी में सिर हिलाता उल्लास के साथ गाड़ी में बैठ कर चला गया।

गाड़ी से उतर कर सुदर्शन बगैर किसी तरफ देखे अपने आफिस पहुँचा। सीट पर बैठते ही टेबल पर चेयरमैन का नोट मिला 'प्लीज सी मी' (कृपया मुझसे मिलें)।

सुदर्शन ने सीने पर हाथ रख कर ईश्वर को धन्यवाद दिया, फोन से श्यामा को एसएमएस कर दिया- गोइंग टु टेक आर्डर (आर्डर लेने चला)।'

दरवाजा खोल कर अंदर गया। चेयरमैन ने खड़े-खड़े ही उसे लिफाफा दिया। सदुर्शन ने ''धन्यवाद सर'' कह कर लिफाफा लिया। उसका दिल बल्लियों उछल रहा था। वहीं खड़े-खड़े उसने लिफाफा खोल कर कागज पढ़ा।

'निलंबन-पत्र।'

हेडिंग देख कर सुदर्शन को चक्कर आ गया। वह बगैर पूछे ही कुर्सी पर बैठ गया। माथे का पसीना पोंछते हुए उसने चेयरमैन की ओर देखा। चैयरमैन का चेहरा भाव-शून्य था, बोला ''मैं कम से कम तुम्हारे बारे में ऐसा सोच नहीं सकता था।''

''पर सर ऐसा क्यों?''

चेयरमैन ''पूरा पत्र पढ़ो?''

सुदर्शन ने काँपते हाथों से पत्र पढ़ना शुरू किया-

श्री सुदर्शन जी आप के विरुद्ध कुमारी कामिनी, जो आपकी सेक्रेटरी के पद पर काम कर रही है, ने आप पर आरोप लगाया है कि एक दिन देर शाम तक आपने उन्हें आफिस में रोके रखा और बाद में उससे बलात्कार किया। आपके इस अमानुषिक कृत्य से बेहोश हो गई। तब आप चौकीदार की मदद से उन्हें अपनी गाड़ी में ले जाकर अस्पताल में भर्ती कराकर चुपचाप अपने घर लौट गये। अपराध-बोध से आपने कु. कामिनी के अस्पताल में भर्ती होने की सूचना उनके परिवार वालों को भी नहीं दी।

अभी तक कुमारी कामिनी बदनामी के डर से चुप रही, परंतु अब जब उन्हें ज्ञात हुआ कि आपके दृष्कृत्य से माँ बनने वाली है। उन्होंने आपके विरूद्ध शिकायत की है। अपने गर्भवती होने के साक्ष्य के रूप में उन्होंने अल्ट्रा-साउंड की रिपोर्ट प्रस्तुत की है।

आपके इस घृणित कार्य की वजह से आपको तात्कालिक प्रभाव से निर्लंबित किया जाता है।

पुनश्च- आप पर कोई क्रिमिनल केस होने की अवस्था में, आपके द्वारा किए दृष्कृत्य के बारे में कंपनी की कोई जिम्मेदारी नहीं होगी।

सुदर्शन निलंबन तक तो अपने को समझा सकता था परंतु यह बलात्कार का लांछन। उसने सोचा इससे तो अच्छा था कि आफिस आते समय एक्सीडेंट हो गया होता और उसकी मृत्यु हो गई होती। पर जिंदगी नियति से चलती है, हमारे चाहने से नहीं।

उन्होंने कोई प्रतिवाद नहीं किया, चुपचाप उठ कर जाने को उद्यत हुए, परंतु चेयरमैन ने उसे रोक कर कहा, ''सुदर्शन, प्रेसिडेंट की पोस्ट तो प्रवीन को मिल गई। इन हालात में तुम क्या कंपनी में रह पाओगे? किसी तरह कामिनी से बात कर के देख लो। यदि उसे पुलिस में जाने से रोक सको तो तुम्हारे हक में होगा।'' चेयरमैन के स्वर में सहानुभूति का पुट था।

सुदर्शन कुछ नहीं बोला। वह लड़खड़ाते कदमों से अपने आफिस में आकर बैठ गया। हमेशा की तरह आज कोई उसके लिए चाय लेकर नहीं आया। सभी को बदली हुई स्थिति का अंदाजा था। वह कितनी देर ऐसे बैठा रहा उसे खुद पता नहीं चला। तभी उसका मोबाइल बज उठा, उधर से श्यामा की चिंता भरी आवाज थी, ''सुदर्शन, यह क्या हो रहा है?''

सुदर्शन (मरी आवाज में) ''क्या हो रहा है?''

श्यामा ''आज के अखबार के साथ एक पर्चा (हैंडबिल) आया है। इसमे लिखा है कि तुमने अपनी सेक्रेटरी का बलात्कार किया जिससे वह गर्भवती हो गई। क्या यह सच है?''

''तुम भी इसे सच मानती हो?'' सुदर्शन घायल स्वर में बोला।

''कैसी बात करते हो, मैं क्या तुम्हें जानती नहीं हूँ? मेरा मतलब था कि कहीं यह आरोप का पर्चा तुम्हारे आफिस तो नहीं पहुँच गया। आज

तो निर्णायक दिन है।''

''निर्णय हो चुका श्यामा, बास ने निलंबन-पत्र दे दिया। कामिनी से बात करने को कहा है, वह शायद पुलिस में रिपोर्ट करने जा रही है।''

अब श्यामा के हतप्रभ होने की बारी थी। अभी परसों शाम ही कामिनी कितनी मधुरता से मिली थी। 36 घंटे में ऐसा क्या हो गया? एकाएक वह सुदर्शन के लिए चिंतित हो उठी। उसने मोबाइल बंद करते हुए सुदर्शन को आश्वस्त करते हुए कहा, ''तुम अपने चैंबर में ही रुको। मैं तुम्हें लेने आती हूँ। अब तुम्हारा वहाँ रुकना ठीक नहीं। तुम्हारे विरुद्ध षड्यंत्र रचा गया है, ताकि तुम्हें प्रेसिडेंट बनने से रोका जा सके। कामिनी इस में मोहरा बनी है।''

श्यामा इस आरोप पर विश्वास नहीं करती, यह जान सुदर्शन को बड़ी सांत्वना मिली। कम से कम घर में तो तूफान नहीं मचेगा। श्यामा की स्पष्ट सोच से भी सुदर्शन का आत्मविश्वास कुछ हद तक वापस लौट आया।

सुदर्शन ने खुद उठ कर कॉफी मशीन से कॉफी ली और चैंबर में आ गया। जब वह बैठा तो उसकी पीठ अब सीधी थी। गरम कॉफी ने उसके मस्तिष्क को सक्रिय कर दिया था। जो लोग उसके चैंबर के बाहर गुजरते वे शीशे के पार्टिशन से उसकी ओर देखते तो थे परंतु बगैर किसी प्रतिक्रिया के, जैसे किसी अनजाने को देख रहे हों। तभी प्रवीन उसके चैंबर के आगे से जाता दिखा, सभी लोगों ने उठ कर उसका अभिवादन किया... प्रेसिडेंट का रुतबा ही अलग होता है। प्रवीन ने उसके चैंबर की ओर दृष्टि भी नहीं डाली। सुदर्शन के मस्तिष्क में कौंधा... ''इस खेल के पीछे यही आदमी तो नहीं है? इसी ने कामिनी का इस्तेमाल किया हो। पर... कामिनी कैसे उस पर इतना घिनौना आरोप लगाने को राजी हो गई।''

श्यामा के साथ सुदर्शन घर आ गया। दोनों ने तय पाया कि प्रवीन के बहकावे में आ कर कामिनी ने यह आक्षेप लगाया है। संभवत: उसी दिन को लेकर शिकायत की गई होगी कि जब कामिनी बेहोश हुई थी। श्यामा आश्वस्त हो गई कि कुछ ज्यादा नुकसान नहीं हुआ क्योंकि उस रात तो वह भी उस घटना के समय मौजूद थी। इस विचार से सुदर्शन नार्मल हुआ। तय हुआ कि अगले दिन श्यामा चेयरमैन से मिलेगी और

कामिनी को झूठा साबित करेगी। झूठा आरोप लगाना एक अपराध है पुलिस का भय दिखा कर कामिनी से सारी बातें उलगवा ली जाएंगी। तब प्रवीन का भंडाफोड़ हो जाएगा।

आश्वस्त होने के बाद भी सुदर्शन सोने की दवा लेकर ही सो सका।

अल-सुबह ही चेयरमैन की पत्नी का फोन श्यामा के पास आया। उनको समाचारपत्र में पर्चा मिला था। यह पर्चा भी वैसा ही था जैसा श्यामा को अखबार में मिला था। उन्होंने श्यामा को बताया कि वह स्वयं सुदर्शन पर लगे आरोप की मिथ्या मानती है, और उन्हें पूर्ण विश्वास है कि शीघ्र ही वह निर्दोष साबित होगा। इस फोन ने श्यामा के चेयरमैन से मिलने की योजना को बल मिला। वह दूने विश्वास के साथ आफिस पहुँची।

आफिस में किसी ने उसका स्वागत नहीं किया। प्रवीन प्रेसीडेन्ट ऑफिस में था। श्यामा प्रेसिडेंट की स्टेनो की सीट पर बैठी कामिनी के पास रुकी। ''कैसी हो कामिनी?'', श्यामा का स्वर एकदम संयत था।

कामिनी श्यामा को कनखियाँ से देख रही थी, पर उसे उम्मीद नहीं थी कि श्यामा उससे बोलेगी। वह हड़बड़ा गई। एकदम अपनी कुर्सी से खड़ी होते हकलाते हुए बोली, ''जि... जी ठ ठीक ह हूँ बिल्कुल ठीक हूँ।''

श्यामा उसके उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना चल चुकी थी और मालिक के आफिस में प्रवेश कर गई।

श्यामा को देखकर चेयरमैन के चेहरे पर कोई आश्चर्य के भाव नहीं उभरे। उसने श्यामा का संकोच भरी आत्मीयता से स्वागत किया। पर उसमें गर्मजोशी नहीं थी।

श्यामा ने खड़े-खड़े ही पूछा, ''सर, उस रात सुदर्शन के साथ मैं भी थी। हम दोनों ने अपने साथ ही कामिनी को अस्पताल पहुँचाया था। मेरी उपस्थिति में यह दुर्घटना कैसे घट सकती है? क्या आप भी सुदर्शन पर लगे आरोपों को सही मानते हैं?''

मालिक ने श्यामा को बैठने का संकेत देते हुए नहीं की मुद्रा में सर हिलाया।

''फिर?''

मालिक ''मेरे पास तुम्हारी बात को सिद्ध करने या सुदर्शन पर लगे आरोप को झुठलाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है।''

श्यामा हताश होते हुए बोली, ''यह तो बड़ी गहरी साजिश है।''

चेयरमैन ने पूछा, ''चाय लोगी?''

श्यामा इशारा समझ कर चलने को उठ खड़ी हुई, तो चेयरमैन ने समझाने वाले स्वर में कहा, ''कामिनी को समझा-बुझा कर पुलिस तक जाने से रोको। पुलिस रिपोर्ट से सुदर्शन के साथ कंपनी को भी नुकसान होगा।''

वितरित किए पर्चे (हैंड-बिल्स) का कमाल अगले दिन के समाचार पत्रों में दिखा।... कंपनी में भावी प्रेसिडेंट का अपना सेक्रेटरी से दुर्व्यवहार। सुदर्शन की जगह प्रवीन बने प्रेसिडेंट।... कंपनी के शेयरों में भारी गिरावट।

सुदर्शन इस खबर को पढ़ कर और आहत हुआ। उसकी आँखों में हताशा के आँसू थे। श्यामा ने उसके बालों में हाथ फेरते हुए उसे आश्वस्त किया, ''सब ठीक हो जाएगा।''

सुदर्शन ने लगभग कराहते हुए पूछा, ''कैसे ठीक होगा...?''

''ठीक कैसे नहीं होगा,'' कह कर श्यामा ने अपना पर्स उठाया और सीधे अस्पताल के लिए निकल पड़ी जिसमें उस दिन दोनों ने कामिनी को भर्ती कराया था। वह सीधे अस्पताल के अधीक्षक से मिली। संयोग से अधीक्षक भी महिला थी। उसने आधे मन से श्यामा की कहानी सुनी, और बोली, ''इसमें मैं क्या कर सकती हूँ?'' डॉक्टर के स्वर में तल्खी थी।

''डॉक्टर साहब आपके सीसीटीवी फुटेज में यदि सुदर्शन और कामिनी के साथ मैं भी दिखूंगी तो कामिनी झूठी साबित हो जायेगी।''

डॉक्टर कुछ नरम होते हुए बोले ''पर उसमें तो पुलिस आर्डर की आवश्यकता होगी।''

''मैडम! यदि आपके फुटेज में भी मैं नहीं हूँ तो फुटेज मेरे विरुद्ध जायेगा। इस समय मैं पुलिस में नहीं जा सकती। मेरे पति को वह फुटेज ही निर्दोष साबित कर सकता है। कृपया आप ही मेरी मदद करें।'' यह कह कर श्यामा ने डॉक्टर के सामने हाथ जोड़ दिये, उसकी आँखों में आँसू छलक आये।

डॉक्टर को श्यामा के कथन में सत्यता दिखी। आँसू पोंछने के लिए टिशू-पेपर देते हुए बोली ''देखती हूँ कि मैं क्या कर सकती हूँ।' कह कर वह अपने चैंबर से संलग्न सीसीटीवी कक्ष में गई। श्यामा को भी उसने वहीं बुला दिया, मानीटर पर श्यामा के बताए दिन व समय का फुटेज खोजने लगी।

x x x

आज चेयरमैन ने अपने कमरे में वाइस-प्रेसिडेंट व प्रेसिडेंट की मीटिंग बुलाई थी। प्रवीन के प्रेसिडेंट बनने के बाद यह पहली मीटिंग थी, सो चाय पानी की भी उचित व्यवस्था थी। कामिनी यह जान कर खिल उठी कि उसको भी मीटिंग में उपस्थित रहना है। आखिर प्रेसिडेंट के नोट्स तो उसे ही लेने होंगे। कामिनी ने फौरन वाशरूम जा कर अपना मेक अप एक बार फिर से सँवारा। शीशे में स्वयं को निहारते हुए बोली, ''प्रेसिडेंट की सेक्रेटरी को इतना हॉट तो दिखना ही चाहिए।''

बड़े आत्मविश्वास से वह मीटिंग चैंबर में दाखिल हुई। अंडाकार मेज के शीर्ष पर चेयरमैन बैठे थे, उनके दाहिने प्रेसिडेंट प्रवीन थे। प्रवीन की कुर्सी के पीछे ही कामिनी की सीट थी। कमरे के माहौल में एक प्रशासनिक गरिमा थी। सभी लोग चुस्त अलर्ट। चेयरमैन ही सबसे शांत ओर संयत दिख रहे थे। कामिनी ने देखा चेयरमैन के बाईं ओर सीनियर-वाइसप्रेसीडेंट की सीट थी जहाँ कभी सुदर्शन बैठा करता था। ''सुदर्शन!... बेचारा!..., कामिनी के चेहरे पर मुस्कान आ गई। चेयरमैन की सीट के एकदम सामने की सीट आरोपित व्यक्ति के लिये आरक्षित थी, जिसके भाग्य पर निर्णय लेने हेतु मीटिंग आहूत की गई थी। आज उस सीट पर श्यामा बैठी दिखी।

''तो क्या आज की मीटिंग सुदर्शन पर निर्णय लेगी? सुदर्शन की अनुपस्थिति में श्यामा कटघरे में बैठाई गई है।''... कामिनी ने सोचा।

प्रारम्भिक औपचारिकताओं के बाद चेयरमैन ने कामिनी को संबोधित किया। चेयरमैन के सेक्रेटरी जॉन ने नोट्स लेना शुरू किया।

''कामिनी, तुमने सुदर्शन के बारे में निर्णय क्या लिया?''

कामिनी इसके लिये तैयार नहीं थी। पहले वह सकते में आ गई, परंतु फिर खड़े होकर बड़े अदब से बोली, ''सर, मैं तो बड़ी मुसीबत

में फँस गई। अनब्याही महिला का गर्भपात के लिए डॉक्टर राजी नहीं। वह इसके लिये कोर्ट की स्वीकृति माँग रही है। यदि मुझे कोर्ट जा कर बदनामी ही उठानी है तो मैं इस बच्चे को जन्म दूँगी। जैसे-जैसे यह बच्चा बड़ा होगा वैसे मैं भी बदनाम हूँगी। मगर मेरे साथ वह व्यक्ति भी बदनामी से नहीं बच पायेगा जिसका शिकार मैं हुई हूँ। स्कूल आदि में मैं बच्चे के पिता के स्थान पर उस अन्यायी का नाम लिखवाँऊगी।'' कह कर वह खड़े-खड़े सिसकने लगी।

प्रवीन के चेहरे पर मुसकान आई... अरे! इस लड़की ने तो 'आँगन की तुलसी' बनने का इंतजाम कर लिया। परवरिश की जिम्मेदारी के साथ ही अपने बच्चे को सुदर्शन का उत्तराधिकारी भी घोषित कर दिया... बड़ा लम्बा दाँव मारा।''

चेयरमैन, ''इससे तो कंपनी की भी बदनामी होगी। सारे कारपोरेट बिरादरी ही क्या, शेयर-धारक भी उत्तेजित हैं। एक हफ्ते में ही हमारे शेयर काफी लुढ़क चुके हैं।'' थोड़ा रुक कर ''कामिनी तुम्हारा यही अंतिम निर्णय है?''

कामिनी कुछ बोली नहीं, मात्र सिसकती रही। सभी की सहानुभूति कामिनी के साथ थी।

चेयरमैन ने कुछ निश्चय सा लेते हुए बोले ''ठीक है, शुरू करो।''

एकाएक हाल की लाइट बंद हो गई, सिर्फ एक एलईडी ही कमरे में चलने फिरने लायक प्रकाश दे रहा था।

चेयरमैन के पीछे की दीवार पर स्क्रीन प्रदीप्त हो गया। किसी अस्पताल का दृश्य था। बैकग्राउंड में आवाज कमेंट्री कर रही थी। ''यह... अस्पताल का... तारीख का सीसीटीवी फुटेज है। रात के 9:30 बजे हैं एक स्ट्रेचर पर एक महिला बेहोशी हालत में लाई जाती है।'' वार्डब्वाय के अलावा एक महिला और पुरुष साथ चल रहे थे। पुरुष रिसेप्शन की ओर गया। कैमरा बेहोश महिला पर जूम करता है।

''अरे यह तो कामिनी है'' हाल के अंधेरे में कुछ लोगों की आवाज आई।

पुरुष रिसेप्शन से लौट कर आया तो दिखा- वह सुदर्शन था जो कामिनी को अस्पताल ले गया था। सबकी उत्सुकता बढ़ रही थी कि स्ट्रेचर के साथ चलती महिला का चेहरा सामने आया... वह महिला श्यामा

थी... वह कामिनी के बाल सहला रही थी।

हाल में सभी के मस्तिष्क में हथौड़े की चोट सी लगी... अस्पताल तक श्यामा भी सुदर्शन के साथ थी। इसका मतलब कामिनी का आरोप गलत था।

कामिनी अपनी कुर्सी से एकाएक उठ कर जाने को हुई कि पीछे खड़ी एक तगड़ी महिला ने उसे जबरदस्ती कुर्सी पर बिठा दिया। कामिनी प्रतिवाद करना चाहती थी पर महिला के कंधे पर पुलिस का बिल्ला देख चुपचाप बैठ गई।

स्क्रीन पर कुछ मेडिकल रिपोर्ट्स फ्लैश कर रही थी।

चैयरमैन की आवाज आई, ''कामिनी के अस्पताल के बिल के साथ कामिनी की मेडिकल रिपोर्ट्स भी थी। इस समय जो आप रिपोर्ट आप स्क्रीन पर देख रहे हैं, सिद्ध करती है कि कामिनी उस 'दिन विशेष' को प्रेग्नेंट थीं अस्पताल की रिपोर्ट में साफ लिखा था कि मरीज (कामिनी) गर्भवती है। पौष्टिक आहार की कमी और अधिक श्रम ही बेहोशी का कारण है।''

''इस फुटेज और मेडिकल रिपोर्ट से यह सिद्ध होता है कि कामिनी द्वारा दुर्व्यहार का लांछन सरासर झूठ है। उस रात सुदर्शन के साथ उसकी पत्नी भी थी, और उन दोनों ने ही कामिनी को मानवता के नाते अस्पताल में भर्ती कराया।''

फिर कामिनी को संबोधित करते हुए कहा, कामिनी! तुमने अपने उपकारी पर ही इतना बड़ा आरोप लगा दिया।'' कामिनी बैठे-बैठे ही बोली, ''मैं स्वीकार करती हूँ कि यह साजिश मैंने ही की है।''

चेयरमैन ''कामिनी, इस अपराध के पीछे तुम्हारा ही हाथ है। अब यह सुदर्शन और श्यामा पर निर्भर है कि वह तुम्हारे विरुद्ध आपराधिक मुकदमा दर्ज करते है या नहीं।'' फिर कुछ सोचते हुए कहा, ''परंतु इतनी गहरी साजिश तुम अकेले तो नहीं रच सकती। बताओ कौन है जिसने तुम्हें यह सब करने को कहा। सच बोलने पर शायद तुम्हें माफ भी किया जा सकता है।''

कामिनी ने सिर झुका कर कहना शुरू किया ''प्रवीन सर ने कुछ दिन पहले मुझसे कहा था, पर तब मैं राजी नहीं हुई। सुदर्शन सर ने मेरी जान बचाई थी। इसके अलावा मेरा सोचना था कि सुदर्शन सर के साथ

मैं भी प्रेसिडेंट सेक्रेटरी बन जाऊँगी। परंतु उस शाम जब पता चला कि सुदर्शन सर प्रियंका को उसकी जगह से नहीं हटायेंगे, तो मैं प्रवीन सर का साथ देने को तैयार हो गई। सुदर्शन सर के हटने पर प्रवीन सर का प्रेसिडेंट बनना तय था।''

''प्रवीन सर से मुझे पैसे तो मिले ही थे, मुझे मेरे अनचाहे बच्चे का पिता व बच्चे का सुदर्शन सर की जायदाद में हिस्सा भी मिल रहा था। मैं अपनी मजबूरी और लालच में फँस गई।''

हाल की लाइट जल गई। लोगों ने देखा प्रवीन अपनी कुर्सी पर नही है। उसके सामने की टेबल पर पेपर-वेट के नीचे एक कागज का पन्ना फडफ़ड़ा रहा था।

अगले दिन समाचार-पत्रों के बिजनेस पन्नों में समाचार छपा... 'कंपनी में बड़े नाटकीय ढंग से प्रेसिडेंट का इस्तीफा। सुदर्शन ने नए प्रेसिडेंट के रूप में कार्यभार संभाला।' वहीं दूसरे अखबार की खबर थी 'सुदर्शन के प्रेसिडेंट बनने पर कंपनी के शेयरों में सुधार।'

❐❐❐

किराये की कोख

लेडी डॉ. ने अगला पर्चा देखा- अमिता, 24 वर्ष, पत्नी नवल किशोर। उसे हल्की सी चिढ़ हुई.... महिला के आगे पति का नाम लगाने से ही पत्नी क्यों पहचानी जाती है। फिर निर्विकार भाव से उसने आया को अमिता को अंदर भेजने के लिए कहा। साथ में उसका पति भी आया। छह फिट लंबा, मजबूत गठन, खुलता हुआ रंग, लगता था कि कोई स्पोर्ट्समैन या सेना का अधिकारी है। नवल किशोर को डॉक्टर का यों देखना अजीब नहीं लगा। वह पहली मुलाकात में महिलाओं की इस प्रतिक्रिया का अभ्यस्त था। शायद उसकी पत्नी भी इस तथ्य से परिचित थी।

अमिता का भलीभाँति परीक्षण करने के बाद डॉ0 ने बताया कि अमिता को तीन माह का गर्भ है, और अल्ट्रासाउंड करने का पर्चा दे कर कहा कि यह जाँच करा कर अभी दिखा दें। जब अमिता जाँच करा कर लौटी तब तक डॉक्टरनी की व्यस्तता कम हो गई थी। उसने पूरी सावधानियाँ, दवाई बताई व अगली विजिट पर कुछ जाँचें करा कर आने को कहा। अमिता जब उठने को हुई तो डॉक्टर ने नवल से कहा ''आपको पहले भी कहीं देखा है।''

अमिता के चेहरे पर हल्की से मुस्कान आई। तभी नवल बोला ''जी डॉक्टर साहब, तीन साल पहले आपके ही यहाँ मेरी बहन की डिलीवरी हुई थी।''

अमिता की मुस्कान लुप्त हो गई।

दो वर्ष पहले ही नवल इंटेलिजेंस विंग में चयनित हुआ था। लगन और परिश्रम से वह विश्वसनीय अधिकारी के रूप में जाना जाने लगा था। पहली नजर में विषमता पहचानने की उसकी अद्‌भुत क्षमता थी उसमें।

बाइक पर घर लौटते समय उसने अपनी पत्नी से पूछा- ''तुम्हें इस

प्रसूति क्लीनिक में कुछ अजीब सा नहीं लगा?''

पत्नी जो अपने माँ होने की प्रसन्नता में ऊभ-चूभ हो रही थी, बोली, ''मैं खुफिया थोड़े ही हूँ।'' कह कर वह फिर अपने आनंद में डूब गई।

घर पहुँच कर वह बोला, ''समझ में आ गया।'' पत्नी ने उसकी ओर देखा।

''क्लीनिक में ज्यादातर काम करने वाली महिलाएं पेट से थीं। लगता था कि यह सब की सब ''प्रसूति-क्लीनिक'' का चलता फिरता विज्ञापन हैं।''

''तुम्हारी निगाह जवान औरतों के अंगों को ही क्यों टटोलती रहती है? गए थे अपनी पत्नी की जाँच कराने और देख दूसरी महिलाओं को रहे थे।''

''अरे भाई! खुफिया विभाग में इसी काम का तो मैं वेतन पाता हूँ। जहाँ भी कोई विषमता होती है उसको नोटिस करना पड़ता है।''

''हाँ-हाँ जानती हूँ। पर औरतों को ही क्यों देखते रहते हो? तुम्हारी दृष्टि ही लोलुप है। हुँह... बातें बनाते हैं।'' पत्नी नाराज होकर चली गई।

नवल पत्नी की इस प्रतिक्रिया से भली-भाँति परिचित थे। वह जानते थे कि वह लेडी डॉक्टर की प्रतिक्रिया और उसे रोक कर बात करने की वजह से वह ईर्षित थी, पर गुस्सा किसी और बात पर उतार रही थी।

दो महीने बाद जब वह दंपति परीक्षण कराने हेतु पुनः उस प्रसूति-क्लीनिक में पहुँचा तो उन लोगों को कुछ ज्यादा ही प्रतीक्षा करनी पड़ी। बड़ी व्यस्त लेडी डॉक्टर हैं। अमिता अपने मातृत्व के स्वप्नों में खोई थी परन्तु नवल की सतर्क निगाहें वस्तु स्थिति को परख रही थीं। वह कभी इस बात का भी ध्यान कर लेता था कि अमिता की निगाहें कहीं खुद उस पर तो जासूसी नहीं कर रही थीं। इस बार भी उसको लगा कि उसकी धारणा सत्य है। सभी की सभी कार्यकर्त्रियाँ महिला थीं (जो कि प्रसूति-गृह के लिये अजब नहीं था।) सभी महिलाएं 20-30 वर्ष की थीं और उनमें से अधिकतर महिलाए गर्भ से थीं। यहाँ तक रेसेप्शन पर बैठी आकर्षक महिला का डेस्क के पीछे से उभरा पेट परिलक्षित हो रहा था।

नंबर आने पर वह दोनों डॉक्टर के पास पहुँचे। सभी जाँचें ठीक थीं।

डॉक्टर ने आवश्यक निर्देश देने के बाद एकाएक नवल से उसकी बहन और बच्चे का हाल पूछा। संभवतः डॉक्टर का मकसद था कि यहाँ डिलीवरी होने के बाद बच्चे का टीकाकरण आदि भी तो इसी अस्पताल में होना चाहिए था, पर अमिता ने इसे मात्र नवल से बात करने का बहाना ही समझा। नवल ने बताया कि उसकी बहन बाहर रहती है, मात्र प्रसव के लिए ही मायके आई थी। यह बताने के बाद एकाएक नवल ने डॉक्टर से पूछा, ''डॉक्टर साहब आपकी क्लीनिक की अधिकतर महिलाएं गर्भवती हैं, ऐसा कैसे?''

डॉक्टर ने हँसते हुए कहा, ''मैं अपने कर्मचारियों की डिलीवरी का कोई चार्ज नहीं लेती। तो सभी महिलाएं मेरे यहाँ रहते हुए अपनी फैमिली पूरी कर लेना चाहती हैं। इसलिए हर माह कोई न कोई कर्मचारी महिला मुफ्त डिलिवरी की सुविधा के बाद तीन माह मातृत्व-अवकाश (मैटरनिटी-अवकाश) पर रहती हैं, वह भी पूरी तनख्वाह पर।''

नवल को यह तर्क-सम्मत लगा। साथ ही साथ उसके दिल में डॉक्टर की मानवता के प्रति प्रशंसा भाव भी जगा। अमिता ने इस वार्तालाप को तोड़ने के उद्देश्य से एक बिल्कुल ही अवांछित प्रश्न दाग दिया, ''डॉक्टर साहब! आपके पति भी डॉक्टर हैं?''

डॉक्टर ने अमिता की ओर हैरत से देखा। ''हाँ, वह सर्जन हैं और इसी क्लीनिक में वह भी काम करते हैं'', कहकर कागजात संभालने लगी।

बाहर आने पर अमिता भुनभुनाई, ''शादी शुदा होने पर भी दूसरे मर्दों से कैसे प्रेम से बतियाती हैं?''

नवल कुछ नहीं बोला। उसका संदेह छँटने लगा था।

9 महीने पूरे होने पर डॉक्टर ने बता दिया था कि अब अमिता के लिए 'एनी डे एनी शो' यानि किसी भी समय प्रसव का दर्द उठ सकता है। वह दिन भी आ गया जब अमिता के पेट में दर्द उठा। अजीब स्थिति थी अमिता की। दर्द की लहर आते ही चीखने लगती थी पर उसके तुरंत बाद मुस्कराने लगती। नवल को समझ में नहीं आ रहा था कि वह दर्द पर ध्यान देकर अस्पताल ले जाये या हँसी को सही मान कर निश्चिंत रहे। तभी नवल की माँ ने आकर अमिता को गले से लगा लिया और मुस्कराते हुए नवल से बहू को अस्पताल ले चलने को बोली।

नवल विस्मित होता हुआ बोला ''पर यह तो मुस्करा रही है अम्मा।''

''माँ बनने के दर्द की भी खुशी होती पगले, यह तुम आदमी लोग क्या जानो।'' अम्मा ने भी खुशी से हँसते हुए नवल को बाहर की ओर ठेला।

अमिता परीक्षण के बाद लेबर-रूम में पहुँचा दी गई। माँ, बच्चे की जरूरत का सामान लेकर लेबर रूम के सामने ही बैठ गई। नवल को वेटिंग-लॉबी में बैठने को बोला गया।

नवल थोड़ी देर बैठकर इंतजार करता, थोड़ी देर बाद लॉबी में उठ कर टहलने लगता। दो घंटे गुजर चुके थे, कोई कुछ बता नहीं रहा था... क्या करें? तभी-''सर! एक कप कॉफी पी लीजिए।'' एक आया काफी का कप लिए उसके सामने खड़ी थी। नवल ने काफी ले ली और धीरे-धीरे पीने लगा। आया वहीं खड़ी रही।

''सर, पहला बच्चा है काफी वक्त लगेगा। हो सकता है 18 से 24 घंटे भी लग सकते हैं। माँ जी तो पास में हैं ही, जरूरत होगी तो आपको बुला लेगी। आप चाहे तो घर जा सकते है।''

नवल ने सिर हिला कर बताया कि वह वहीं इंतजार करेगा। आया सहानुभूति की दृष्टि डालती हुई चली गई।

एकाएक नवल को ध्यान आया कि जब अमिता पहली बार आई थी, तब यह आया पेट से थी। अभी दो महीने पहले ही उसकी डिलिवरी हुई थी, वह इतना जल्दी अपना दुधमुँहा बच्चा छोड़ कर ड्यूटी पर कैसे आ गई? डॉक्टर ने तो कहा था कि वह अपनी कर्मचारियों को तीन महीने की पूरी मैटरनिटी लीव देती हैं। कहीं ऐसा तो नहीं कि इसके बच्चे को कुछ हो..., ''नहीं! नहीं यह मैं क्या अशुभ सोचने लगा।''

लगभग रात 11 बजे यह कैफेटेरिया से अपने और माँ के लिए कुछ खाने का सामान लाया। माँ ने लेबर रूम के सामने से हटने को मना कर दिया और वहीं बैठे-बैठे दो बिस्कुट खा व चाय पीकर फिर वहीं ध्यानस्थ हो गई। लॉबी में टूँगता हुआ नवल सोच रहा था कि महिलाओं में कितना धैर्य होता है, बच्चो के लिए कितना कष्ट सहती हैं।

वह इसी सोच में खोया था कि वह आया फिर दिखाई दी। नवल ने कहा, ''सिस्टर, क्या एक कप काफी और मिल सकती है?''

आया ने सिर हिला कर आश्वस्त किया और कुछ देर में ही काफी लेकर आ गई। क्लीनिक में इंतजार करते रिश्तेदारों को चाय पानी की नि:शुल्क व्यवस्था थी।

कॉफी लेते हुए उसने आया से कहा ''आपके तो अभी-अभी बच्चा हुआ था। इतनी जल्दी आप फिर काम पर कैसे आ गई?''

आया की आँखों से आँसू बहने को हुए। वह किसी प्रकार उन्हें पोंछ कर जाने लगी, पर नवल उसके सामने आ कर खड़ा हो गया। बोला, ''आपने मेरी बात का जवाब नहीं दिया।''

आया ने सुबकते हुए कहा, ''गरीबी भी एक बड़ी मजबूरी होती है साहब। पेट के लिए दिल और दिमाग को मारना पड़ता है।''

''पर डॉक्टर तो कहती थीं कि वह सभी तो तीन महीने की पूरी तनख्वाह पर अवकाश देती हैं। फिर आप अपने दूध पीते बच्चे को 8-10 घंटे के लिए कैसे छोड़ पाती हैं?''

आया का शोक सहानुभूति पाकर छलक गया। वह वहीं जमीन पर बैठ कर फूट फूट कर रोने लगी। नवल ने उसे चुप करने की किसी प्रकार की कोशिश नहीं की। दु:ख का लावा बह जाने के साथ वह शांत हुई।

नवल ''आपका बच्चा नहीं रहा क्या....?''

''नहीं-नहीं,'' आया एक दम बिलबिला उठी। ''मेरा बच्चा जीवित है पर उसे और किसी अमीर दंपत्ति को दे दिया गया है।'' वह फिर फफक पड़ी।

नवल ने अंजाने में ही आया का हाथ पकड़ लिया, आया सहानुभूति का स्पर्श पहचानती थी उसने प्रतिवाद नहीं किया। वह बोला, ''आपका बच्चा कैसे और किसने किसी और को दे दिया और क्यों दे दिया?''

''पैसे के लिए... यहाँ सब पैसे के लिए ही बच्चे जनती हैं। पर मेरा तो वह पहला बच्चा था। बाकी के तो दो-तीन बच्चे हैं, उन्हें उतना फर्क नहीं पड़ता। पर मेरा तो यह पहला ही था। मैं क्या करूँ, मैं उसे भूल ही नहीं पाती। दवाओं ने लाख मेरे आँचल का दूध सूखा दिया हो, पर मातृत्व की हूक कैसे मिटे। मैं क्या करूँ?'' कह कर वह फिर बिलख पड़ी।

''मैं बहुत ही गरीब परिवार से हूँ। कभी-कभी तो भूखे पेट ही सोना पड़ता था। डॉक्टरनी साहब के यहाँ काम मिल गया। अच्छा पैसा देती हैं।

मेरे कोई बच्चा नहीं था। एक रोज डॉक्टरनी ने एक अमीर दंपति से मेरी भेंट कराई। उन्होंने बताया कि उनकी पत्नी दिल की मरीज है और प्रसव होने में उसकी जान भी जा सकती है। इसलिए यह चाहते हैं कि तुम इन दोनों के बच्चे को अपने पेट में पालो। गर्भावस्था व उसके बाद एक साल तक तुम्हारे पूरे परिवार का खर्चा यह खुद उठाएंगे, और एक लाख ऊपर से बच्चा होने पर देंगे।''

''एक लाख रुपया... मुझे उसके बाद कुछ भी सुनाई नहीं पड़ा। मैं सन्न हो गई थी। तभी सिठानी उठ कर मेरे पास आई और मेरे हाथ में 500 का नोट देते हुए बोली, ''जवाब के लिए कोई जल्दी नहीं, घर में बात करके बताना। मैं परसों फिर आऊँगी।''

''मैं एक लाख रुपये के लिए अपनी एक आँख या एक हाथ भी दे सकती थी। जब मैंने पति से बताया तो उसने फौरन ही पूछा कि मैंने हाँ कर दी कि नहीं?''

''बाद में हम दोनों ने तय किया कि यदि सेठ मेरे आदमी को नौकरी भी दे दे तो मैं खुशी से उसका बच्चा अपने पेट में पाल दूँगी।''

''सारी बात तय होने के बाद सेठानी का बच्चा डॉक्टरनी ने छोटे से ऑपरेशन से मेरे पेट में रख दिया। उन्होंने मुझे खाने पीने का एक चार्ट दिया जिसकी पूरी व्यवस्था सेठ ने कर दी। मेरे आदमी को नौकरी मिल गई। मैं बड़ी खुश थी। बाद में पता चला कि मेरी तरह बाकी सब भी अपने पेट में किसी न किसी बड़े आदमी का बच्चा पाल रही थीं। यहाँ तक कि रिसेप्शन वाली मेम साहब भी।''

नवल इतनी सारी सूचनाएँ आत्मसात कर रहा था तभी लेबर-रूम से उसका बुलावा आया। नर्स ने बताया बच्चा निकालने के लिए एक छोटा सा चीरा नीचे लगाना पड़ेगा। पहले बच्चे में ज्यादातर चीरा लगाना पड़ता है। नवल ने बगैर सोचे रजामंदी पर दस्तखत कर दिये।

थोड़ी ही देर में नर्स ने आकर बधाई दी कि स्वस्थ पुत्री का जन्म हुआ है। माँ ने नवल को गले लगा कर 'असीसा'।

दो दिन बाद अमिता बच्ची के साथ घर आ गई। सभी बड़े खुश थे। जब-जब नवल, अमिता को बच्ची को दूध पिलाते या दुलराते देखता, उसके मन में बार-बार उस आया का विचार आता, जो अपने बच्चे के लिए तड़प रही थी। नवल अन्यमनस्क हो जाता।

नवल ने आफिस आकर 'सेरोगेसी' या 'किराये की कोख' पर कानून ढूँढ़ने की कोशिश की। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि कानून में इसका अभी तक कोई प्रावधान नहीं हुआ था। इन्टरनेट से पता चला कि वर्तमान 'सेरोगेसी' मात्र भारत में ही लगभग एक अरब रु0 का व्यवसाय बन चुका है। यह 'व्यवसाय' मात्र 'इंडियन मेडिकल एसोसियेशन' द्वारा बनाये मार्ग-दर्शन (गाइड-लाइंस) पर ही चल रहा है। इसके अलावा कोई अन्य नियामक कानून अभी तक लागू नहीं है।

हफ्ते भर बाद जब अमिता फिर चेक-अप कराने क्लीनिक गई तो उस आया ने बड़ी मदद की। हमदर्दी कैसा जुड़ाव पैदा कर देती है।

चलते समय नवल ने जान लिया कि आया और सेठ के बीच कोई लिखित समझौता नहीं हुआ था, जो कि होना बहुत आवश्यक था।

बगैर लिखित समझौते के सेठ आया की मर्जी के बगैर उसके द्वारा जना बच्चा नहीं ले सकता था। हालांकि, डॉक्टरनी इस समझौते में कतई शामिल नहीं थी, फिर भी उसकी क्लीनिक में सेरोगेसी हुई थी, तो उसका भी कुछ उत्तरदायित्व तो बनता ही था। यही सोच कर नवल दोपहर बाद, जब डॉक्टर कम व्यस्त होती थीं, बगैर पूर्व सूचना के मिलने चला गया।

उसका कार्ड देख कर डॉक्टर के माथे पर बल पड़े परंतु नवल को देखते ही वह आश्वस्त से ज्यादा प्रसन्न हुई। नवल थोड़ी देर तक डॉक्टर को गंभीरता से देखता रहा फिर भाव रहित पेशेवर अंदाज में उसने प्रश्न भी कर दिया ''क्या आपके पास इसकी वैधानिक स्वीकृति है।''

डॉक्टर के चेहरे की मुस्कान गायब हो गई, उसकी जगह विशेषज्ञ की गरिमा आ गई। बोली, ''जी हाँ।''

नवल ''आपकी क्लीनिक में सभी नियमों का पालन तो होता ही होगा?''

''अभी तक तो कोई वैधानिक नियम बने ही नहीं, मात्र एम.सी.आई. (मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया) का मार्गदर्शन ही हमको सुलभ है। यदि कोई नियम हाल में ही बन गया हो तो उसका संज्ञान मुझे नहीं है।''

''मगर आपके यहाँ जैविक जनक (बॉयोलॉजिकल पेरेंट्स) और धात्री-माँ (सेरोगेट-मदर) के बीच कोई लिखित समझौता नहीं किया जाता।''

डॉक्टर, ''हाँ यह अभी तक तो करने की जरूरत नहीं पड़ी और न ही कोई दुविधा सामने आई।''

नवल उस आया का जिक्र करते-करते रुक गया। उसे लगा कि उस गरीब आया का नुकसान हो जाएगा। वह तो सहानुभूति पा कर अपनी पीड़ा उससे बाँट कर हल्की हो गई थी। उसकी व्यथा में उत्पीड़न की व्यथा अथवा शिकायत बिल्कुल नहीं थी। वह एकाएक नरम होते हुए मुलायम आवाज में बोला, ''देखिए डॉक्टर साहब, मेरा आपको या आपकी क्लीनिक को नुकसान पहुँचाने का इरादा बिल्कुल नहीं है। मैं केवल क्रियाकलाप से परिचित होना चाहता हूँ।''

डॉक्टर ने आश्वस्त होकर बताना शुरू किया ''नवल जी, समाज में संतानोत्पत्ति में अक्षम दंपतियों की संख्या हमारे आपके अनुमान से कहीं ज्यादा है। संतानहीन होने की पीड़ा कोई अन्य व्यक्ति नहीं समझ सकता है। यह भी सत्य है कि संभ्रांत परिवारों में शिशु मृत्यु-दर घटने के साथ ही जन्म-दर भी घटने लगी है। कुछ दंपति पूरी तरह से सक्षम होते हुए भी महिलाएं गर्भ धारण नहीं कर पाती या गर्भपात का शिकार होती रहती हैं। ऐसे लोगों के लिये सेरोगेसी या किराये की कोख ही एक मात्र उपाय है।''

हम लोग कई विशेषज्ञों के साथ एक बहुत ही गरीब गाँव में प्रतिमाह मेडिकल कैंप करते हैं और नि:शुल्क दवाएँ भी देते हैं। वहाँ मैंने यह अनुभव किया कि निम्न आय-वर्ग की महिलाओं को सेरोगेसी के लिए प्रेरित किया जाय तो सफलता दर अधिक होगी और इन परिवारों का कल्याण भी हो जाएगा। वहीं से मैंने इन महिलाओं को अपने नर्सिंग होम में आया के रूप में रख लिया। चारो वक़्त पौष्टिक भोजन के अलावा दूसरी जगह से तीन गुना वेतन यह मेरे यहाँ पाती हैं। जब यह शारीरिक रूप से गर्भ धारण के उपयुक्त हो जाती हैं तब ही इनकी कोख किराये पर ली जाती है। इस प्रक्रिया में काफी धन व्यय होता है, जो जैविक-जनक द्वारा उपलब्ध कराया जाता है।

नवल ने टोह लेने के लिए प्रश्न किया, ''इस धन का कितना हिस्सा गरीब धात्री-माँ (सेरोगेट मदर) को प्राप्त होता है।''

''गर्भ धारण से लेकर प्रसव के बाद एक साल तक धात्री के पूरे परिवार के भरण-पोषण के अलावा लगभग एक दो लाख रुपया तो मिल

ही जाता है। इसके ऊपर भी कभी-कभी धात्री मोल-भाव कर लेती हैं।

''रुपया तो इन महिलाओं के पति जुए-दारू में ही उड़ा देते होंगे? गरीब परिवार के पास क्या बचता होगा?'' नवल ने जिज्ञासा प्रकट की।

''नहीं आफिसर, यहीं पर तो प्राकृतिक विरोधाभास परिलक्षित होता है। जो परिवार संतान पोषण के लिए समर्थ हैं उनके यहाँ संतान उत्पन्न करने की क्षमता की कमी हैं, वहीं अल्प आय वर्ग में ऐसी कोई परेशानी नहीं है। वहाँ 'जनन-दर' अधिक है। उनमें नि:संतान होना कोई समस्या ही नहीं है।'' कुछ सोचते हुए, ''नवल जी, कभी आपने किसी गरीब दंपत्ति को नि:संतान देखा है?''

नवल कुछ सोचता हुआ बोला, ''शायद नहीं।''

डॉक्टर ''संभवत: ईश्वर ने यह समस्या समर्थ लोगों के लिए सृजित की है। पुरातन काल में ऐसे दंपतियों के लिए 'नियोग और गोद लेने' जैसी प्रथाएँ थी, पर अब विज्ञान ने अपनी स्वयं की संतान प्राप्त करने का नया मार्ग खोल दिया है।''

नवल ने हँसते हुए कहा, ''मेरी माँ भागवत की कथा में बताती थीं कि भगवत् कृपा से देवकी का गर्भ वसुदेव की दूसरी पत्नी रोहिणी में प्रस्थापित हो गया था। क्या वह भी सेरोगेसी थी?''

''यदि इसे कोरी गल्प या कवि की कल्पना होना न माने तो यही संभावना रह जाती है।'' फिर एकदम से विषय परिवर्तित करते हुए डॉक्टर ने नवल से पूछा, ''आफिसर, क्या आप सेरोगेसी से संबंधित अभिलेख (रिकार्ड) देखना चाहेंगे?''

नवल के हाँ कहने पर डॉक्टर ने घंटी बजा कर एक आया से कहा ''इन सर को दिखाने के लिए सेरोगेसी रजिस्टर जल्दी से ले आओ।''

नवल ने वह रजिस्टर देखा। बहुत सुचारु रुप से हर दंपत्ति के लिए दो पृष्ठ नियत थे। दंपति का पता अनुमानित वार्षिक आय, धात्री के नाम और पते के साथ उसका वजन व पूरी मेडिकल रिपोर्ट दर्ज थी। प्रसव का समय, शिशु का लिंग, वजन आदि का ब्योरा। प्रतिमाह धात्री व शिशु का मेडिकल चेक अप, धात्री द्वारा शिशु को जैविक माँ-बाप को दिये जाने का दिनांक व समय। दोनों पक्षों द्वारा पूर्ण संतोष का प्रमाण-पत्र भी संलग्न था जिस पर साक्ष्य के रूप में दोनों पक्षों के सदस्य का हस्ताक्षर आदि भी था। नवल ने इस तथ्य का भी संज्ञान लिया कि कहीं जन्मे शिशु

अधिकतर बालक ही तो नहीं थे। पर काफी गौर करने पर भी ऐसी कोई बात सामने नहीं आई। इसके अलावा शिशु के एक साल तक टीकाकरण आदि का लेखा था, जिस पर उसने अधिक ध्यान नहीं दिया।

वह पन्ने पलट ही रहा था कि एक नाम पर वह रुक गया... जाना पहचाना नाम, पुत्र का जन्म, छह साल पहले की तारीख! उसके माथे पर पसीना आ गया। डॉक्टर भाँप न सके इसलिए उसने उठ कर बेसिन में आँखें व चेहरा धोने का नाटक किया। फिर धीरे से वापस आ कर बैठ गया, और डॉक्टर से बोला ''कितने नर्सिंग होम ऐसे होंगे जो इतने सलीके से कार्य करते हैं। समाज में अब डॉक्टरों की छवि अच्छी नहीं रही।''

डॉक्टर- ''अच्छे बुरे लोग हर व्यवसाय में होते हैं। सब अपने संस्कार के अनुसार कार्य करते हैं। अच्छे लोग पृष्ठभूमि में रह जाते हैं, बुराई समाचारों में छा जाती है।''

बाइक से वापस जाते समय ठंडी हवा ने उसके उद्वेग को कम किया।

...जब वह दूसरे शहर में कोचिंग कर रह था तब उसकी माँ समान भाभी अम्मा के पास आकर रही थीं। इसी क्लीनिक में उन्हें शादी के 15 साल बाद पुत्र हुआ था। आज उसे रजिस्टर में अपनी भाभी का नाम माधुरी पत्नी विमल किशोर उपाध्याय निवासी गाँधीनगर... मिला। अपने परिवार में ही सेरोगेसी और उसे भान भी नहीं...! वह अंदर तक हिल गया था।

उसने ऑफिस पहुँच कर लिखना शुरू किया- यह सत्य है कि इस शहर में भी सेरोगेसी द्वारा बच्चे जन्म ले रहे हैं। इसमें काफी धन का आदान-प्रदान होता है, फिर भी यह सूनी गोदों को संतान सुख तो देता ही है। उत्पीड़न व शोषण की भी उतनी ही संभावना इस प्रक्रिया में भी है जितना अन्य आर्थिक-विनिमय में। इसके लिए एक समुचित कानून का होना अत्यंत आवश्यक है। अभी तक यह प्रक्रिया इंडियन मेडिकल ऐसोसिएशन की गाइडलाइन्स पर ही चल रही है। 'एसिस्टेड रीप्रोडक्टिव टेक्नोलॉजी अधिनियम' 2012 से लोकसभा में लंबित है। इसे अभी तक प्रस्तुत नहीं किया जा सका है। जब तक यह बिल लोकसभा में पारित होकर कानून नहीं बन जाता, तब तक 'सेरोगेसी या किराए की कोख' पर कोई वैधानिक नियंत्रण संभव नहीं है।

❐❐❐

शिखंडी

(महाभारत का उपहासित किन्तु संवेदनशील पात्र)

(हरिवंश राय 'बच्चन' ने अपनी जीवनी में लिखा कि प्रत्येक मानव में स्त्री और पुरुष दोनों के गुण होते हैं। प्रत्येक नर में स्त्री, प्रत्येक स्त्री में पुरुष का भाव व तत्त्व होता है। इन्हीं पुरुष और स्त्री भाव के सम्मिश्रण के विभिन्न अनुपात से पुरुष या स्त्री के स्वभाव का निर्माण होता है। पुरुष भाव दृढ़, कठोर, अधिक व्यावहारिक होते हैं। वहीं स्त्री भाव कोमल, भावुक, करुणा से पूरित व दिमाग से ज्यादा दिल से कार्य करने वाले होते हैं। बच्चन जी के अनुसार खुद उनमें और अमिताभ में स्त्री गुणों की प्रचुरता थी वहीं तेजी बच्चन में पुरुष गुणों अधिकता थी। यही कारण 'बच्चन' जी और अमिताभ ने कला और साहित्य में स्थान बनाया, वहीं कोयले से लेकर कौन सी कार खरीदनी है, यह तेजी जी ही तय करती थीं।

चिकित्सा-शास्त्र का विद्यार्थी होने के कारण मैं इसे अधिक स्पष्टता से समझ सकता हूँ कि मनुष्य के स्वभाव को निश्चित करने में दो हार्मोन्स- टेस्टोस्ट्रान (पुरुष) और ईस्ट्रोजेन (स्त्री) हारमोन्स, की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। पुरुषों में टेस्टोस्ट्रॉन हारमोन वृषण (टेस्टिस) व ईस्टोजेन स्त्री के अंडाशय (ओवरी) में बनता है। यही दोनों हारमोन लिंग-भेद के लक्षण का कारण हैं। परंतु मानव की एड्रीनल ग्रंथि, जो गुर्दे के ऊपरी हिस्से पर स्थित होती है, स्त्री और पुरुष दोनों प्रकार के हारमोन स्राव करती हैं जिससे प्रत्येक स्त्री और पुरुष में उभय-लिंगी हारमोन वातावरण (Harmonal Milleu) सृजित करते हैं। दोनों के हारमोन प्रत्येक स्त्री में पुरुष एवं प्रत्येक पुरुष में स्त्री तत्त्व होने का कारण बनते हैं। इसी वजह से ही संभवत: हमारे शास्त्रों में 'अर्ध-नारीश्वर' की परिकल्पना की गई है। शायद बच्चन जी का इशारा भी इसी तथ्य की ओर होगा।

मानव मस्तिष्क भी अद्‌भुत है। तत्काल मुझे ध्यान आया कि जब गाँधी जी पहली बार लोकमान्य तिलक जी से मिले तो तिलक जी को वह संकोची स्वभाव वाले और थोड़े से 'जनाने' लगे थे। इतिहास गवाह है कि उनके जैसा 'मर्द' सदियों में नहीं हुआ। उनमें भी संभवत:

'स्त्री-भाव' की अधिकता होगी जिससे वह अपने समय के सबसे बड़े मानवतावादी बने, अहिंसा उनका अस्त्र था जिससे उन्होंने उस महाशक्ति को परास्त किया जिसके साम्राज्य में कभी 'सूरज नहीं डूबता था।'

आधुनिक विज्ञान में जिसे मस्तिष्क का अवचेतन कहते हैं, संभवत: भारतीय दर्शन में इसको ही 'मन' कहते हैं। इसी अवचेतन या मन के सहारे मानव क्षण भर में अरबों मील की दूरी तय कर सकता है। उसकी यह 'मानस यात्रा' उसे भूत और भविष्य में अबाध आने-जाने की क्षमता प्रदान करती है। यह किसी भी काल या देश में जाकर अपनी कल्पना के सहारे ऐसा वातावरण रच सकता है जैसे वह घटना चलचित्र की भाँति आँखों के सामने घट रही हो।

मुझे आश्चर्य नहीं हुआ जब मेरा मन मुझे पाँच सहस्राब्दी पीछे त्रेतायुग के अंतिम चरण महाभारत काल में ले जा पहुँचा...।

द्रुपद का ज्येष्ठ पुत्र पंचाल देश का युवराज आज अन्यमनस्क था। आज उसका राज्यसभा में जाने का मन नहीं किया, अत: उपवन में आ गया। उसका भावुक मन विचार कर रहा था-

सम्राट द्रुपद का ज्येष्ठ पुत्र जिसके जन्म लेते ही उसका मुंडन संस्कार कर दिया गया। परंतु पूरा मुंडन नहीं किया गया। उसके 'गर्भ-केशों' की 'शिखा' इस प्रतिज्ञा के साथ छोड़ दी गई थी कि एक दिन यह पंचाल कुमार अपने शत्रु राज्य हस्तिनापुर के शीर्ष-पुरुष भीष्म का वध करेगा। हस्तिनापुर द्वारा किए गए अपमान का प्रतिशोध लेगा। तभी से उसका नाम शिखंड (मुंडन संस्कार में छोड़ी गई चोटी) धारी इति 'शिखंडी' प्रचलित हुआ। इसके बारे में प्रचलित किया गया कि काशी राज की पुत्री 'अम्बा' है जिसने भीष्म के वध हेतु हवनाग्नि में शरीर त्यागा था।

वह जैसे-जैसे बड़ा हुआ उसका शरीर भी बलिष्ठ होता गया, हाँ अपने भाई धृष्टद्युम्न जैसी उसकी देह-यष्टि नहीं थी। पर धृष्टद्युम्न के बराबर शरीर तो पंचाल में किसी का नहीं था। फिर उसे ही क्यों कम आँका जाता था? उसे केवल युद्ध व्यूह में रथी का स्थान मिलता था। हाँ, यह बात भी सत्य है कि उसकी रुचि आखेट, अखाड़े, गदा में न होकर चित्रकारी, गायन व नटराज की आराधना में अधिक थी। अस्त्रों में उसे धनुष-बाण अच्छे लगते, क्योंकि शत्रु पर दूर से ही संधान किया जा सकता था। आहत की पीड़ा और कष्ट से परिचित होने का अवसर कम

था। परंतु फिर भी इससे उसे अपने कथित भ्राता धृष्टद्युम्न से ईर्ष्या नहीं होती थी। होगी भी क्यों? उसकी कोमल प्रवृत्तियों के कारण ही द्रुपद ने यज्ञ द्वारा द्रोणाचार्य की मृत्यु हेतु धृष्टद्युम्न व हस्तिनापुर से प्रतिशोध हेतु याज्ञसेना नाम की कन्या प्राप्त की जो, 'द्रौपदी' के नाम से कौरवों और उनके राज्य के विनाश का कारण बनीं। उन दोनों के जन्म के बारे में उसने यही बातें जानी। वह जब गुरुकुल से पढ़ कर लौटा तभी उसे द्रौपदी व धृष्टद्युम्न के बारे में पता चला। भाई धृष्टद्युम्न के अंदर मानों हमेशा ज्वालामुखी धधकता रहता। उसका वर्ण भी निरंतर प्रतिशोध में जलने से धूसर हो गया था। उसे किसी ने मुस्कराते हुए नहीं देखा। और द्रौपदी.. . शायद उसे भी जन्म से ही प्रतिशोध का विष घुट्टी में पिलाया गया। वह अत्यंत आकर्षक और सुंदर होते हुए भी श्याम वर्ण की थी। आज शिखंडी के दिल में यही विचार आ रहे थे कि किस प्रकार बच्चों के जन्मदाता स्वयं ही अपने द्वेष के कारण अपने बच्चों से उनका बचपन छीन कर प्रतिशोध की भट्ठी में झोंक देते हैं।

एकाएक उसका ध्यान फिर राजसभा की ओर गया जहाँ पांडवों के पक्ष में कौरवों से युद्ध की तैयारी चल रही थी। परंतु वहाँ वीर-रस की जगह रौद्र और वीभत्सता का वातावरण हो गया था। भीम दु:शासन के सीने को फोड़ कर रक्त पीने की प्रतिज्ञा दुहरा रहा था। सभा विचार रही थी कि सशस्त्र द्रोणाचार्य का वध असंभव है तो क्यों न उस पर धृष्टद्युम्न तब प्रहार करे जब वह निहत्था हो। शिखंडी इससे ज्यादा न सुन सका और उपवन में आ बैठा। पर सभा छोड़ते समय सभी के चेहरे पर उपेक्षा की मुस्कान उससे छिप न सकी। वह आहत हो गया। पता नहीं लोग उसका अपमान क्यों करते हैं? पीठ पीछे उसका उपहास करते हैं। पर उसे उन पर क्रोध नहीं आता। व्यक्ति निरंतर मिलने वाली पीड़ा का अभ्यस्त हो जाता, हाँ उसे यदि क्रोध आता केवल भीष्म पर। भीष्म का नाम सुनते ही उसके शरीर में दावानल धधक उठता। हाथ बार-बार धनुष पर चला जाता, क्योंकि उसकी पीड़ा का कारण भी तो भीष्म ही थे- कहते हैं जब भीष्म को गुप्तचरों ने बताया कि उनके वध हेतु पंचाल में एक बालक ने जन्म लिया है, तो वह हँस कर कहते- ''क्या द्रुपद के यहाँ साक्षात् अम्बा ने जन्म लिया है...? और यदि ऐसा है तो वह पुरुष न होकर 'किंवा-पुरुष' (हिजड़ा) ही होगा।'' यह कह कर भीष्म ठठा कर हँस पड़े।

उसी दिन से उसे अर्ध-पुरुष माना जाने लगा। और 'शिखंडी' नाम 'किंवा-पुरुषों' का पर्याय बन गया। यहाँ तक कि स्वयं उसके श्वसुर हिरण्यवर्मा को उसके पौरुष के बारे में संदेह हो गया! किस प्रकार उसकी पत्नी ने अपने पिता को आश्वस्त किया। यह सोच कर उसे बड़ी ग्लानि होती। भीष्म का यह हल्का विनोद उसके जीवन को अभिशप्त कर गया। संभव है कि यदि कभी भीष्म का उससे सामना हो तो वह बगैर उकसावे के उस पर प्रहार कर देगा। परिणाम चाहे कुछ भी हो।

यह सत्य है कि उसमें कोमल भावों की अधिकता थी। पर ऐसा नहीं कि वह वीर नहीं था, हाँ वह क्रूर भी नहीं था। वह भीम की भाँति उद्दंड और झगड़ालू नहीं था। भीम तो एकदम बिगड़ैल पशु था। शिखंडी को दूसरे के उत्पीड़न या पर-पीड़ा में आनंद नहीं आता था। अपने भाई जैसा हमेशा धधकता नहीं रहता। पर यही कोमलता का भाव तो हमेशा अर्जुन के चेहरे पर भी रहता। किसी ने अर्जुन को झगड़ते या कटु वचन, भाषण करते नहीं देखा। केवल कर्ण का जिक्र आते ही वह भी उसी प्रकार आक्रामक हो उठता था जैसे कि शिखंडी भीष्म के नाम से। और कृष्ण! वह तो हमेशा मुस्कराते ही रहते है। कितनी आकर्षक है कृष्ण की मुस्कान! वह बालक, वृद्ध, युवा सभी के प्रिय थे। द्रुपद ऐसे वृद्ध भी खड़े होकर उनका स्वागत करते हैं। ऐसा लगता है कि वह क्रोध कर ही नहीं सकते। पर जिन्होंने धर्मराज के राजसूय यज्ञ में उनका रौद्र रूप देखा हो वही जान सकता है। किस प्रकार मुस्कराते कृष्ण अकस्मात् क्रोधित हो उठे। एकाएक उनका आकार कितना विशाल लगने लगा, आँखों से ज्वाला निकल रही थी, होंठ तनाव से खिंच गए थे। साक्षात् काल का स्वरूप लग रहे थे कृष्ण। सभी की आँखें भय से बंद हो गयीं। जो देख रहे थे वह भी नहीं समझ पाये कि किस लाघव से उसके हाथ में चक्र आया और कब शिशुपाल का गला कट गया। ऐसा था कृष्ण का स्वरूप। कोमल और कठोर भावों का अद्भुत् मिश्रण होने से ही उनका व्यक्तित्व सम्पूर्ण माना जाता था और लोग उन्हें ईश्वर या अवतारी पुरुष मानते थे।

हाँ, उस यज्ञ के समय वह द्रुपद की तरफ से भेंट लेकर इंद्रप्रस्थ गया था। उसे स्वयं आश्चर्य हो रहा था कि आजीवन हस्तिनापुर से बैर पालते हुए भी उसी के एक हिस्से इंद्रप्रस्थ का आधिपत्य पिता क्यों स्वीकार कर रहे हैं। बाद में पता चला कि कृष्ण ने समझाया कि इंद्रप्रस्थ हस्तिनापुर का हिस्सा न होकर उसका प्रतिद्वंद्वी राज्य है। देर सबेर

दुर्योधन की अति-महत्वाकांक्षा दोनों राज्यों के बीच युद्ध का कारण बनेगी। तब आपको अपने जामाता अर्जुन का ही साथ देना होगा, तो क्यों न अभी से उसके पक्ष में खड़े हों। पर उसी यज्ञ में द्रौपदी की वाणी ने आने वाले जघन्य कृत्यों की नींव रख दी।

द्रौपदी का स्मरण आते ही उसका हृदय दरक सा गया। क्या द्रौपदी की तरह कोई और भी अभागन होगी? बचपन से ही नफरत प्रतिशोध उसके रक्त में घोला गया। वही विष यज्ञ में उसकी जिह्वा से फूट पड़ा।

हस्तिनापुर को परास्त करने के लिए उसे कृष्ण से विवाह प्रस्ताव करने को कहा गया, जैसे वह पुत्री न होकर मात्र राजनीति का मोहरा हो। द्रौपदी कितनी लज्जित कितनी अपमानित हुई होगी जब कृष्ण ने उसका विवाह प्रस्ताव ठुकराया। कृष्ण ने द्रौपदी को समझाया कि हस्तिनापुर को परास्त करने के लिए उसे विश्व के सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर से विवाह करना होगा, और वह स्वयं इसे पूर्ण करने की व्यवस्था करेगा।

पर क्या मात्र इस आश्वासन से उस समय की अप्रतिम सुंदरियों में एक द्रौपदी, जिसकी हाँ के लिए बड़े-बड़े सम्राट सब कुछ न्योछावर करने को प्रस्तुत थे, ने इस अस्वीकृति का दाह कैसे झेला होगा?

फिर उसका स्वयंवर! मतलब उसकी अपनी कोई इच्छा नहीं? कोई भी अपने पराक्रम से उसे विजित कर सकता था। वह घोषित 'वीर्य-शुल्का' हो गई। स्वयंवर-सभा में जब कर्ण अपना शौर्य प्रकट करने उठा तो शिखंडी का सिर लज्जा, अपराध-बोध से झुक गया। परंतु पंचाली ने सिंह गर्जना के साथ कर्ण को प्रतियोगिता के लिए वर्जित कर दिया। सब भयभीत हुए कि दुर्योधन अब कुछ वितंडा खड़ा कर सकता है। परंतु कृष्ण की वर्जना ने सभी को रोक दिया। और फिर... एक भिक्षु ब्राह्मण ने प्रतियोगिता में द्रौपदी को जीत कर उसका वरण कर लिया। यह सत्य है कि उस भिक्षु व उसके परिवार ने अपने शौर्य से उपस्थित सभी नरेशों को भागने पर मजबूर कर दिया। परंतु महलों की रानी कुटिया में कैसे रहेगी, सोच कर शिखंडी व्यग्र था। वहीं उसके भाई और पिता शूर-वीर दामाद पा कर उत्साहित थे। उन्हें अपने प्रतिशोध के लिये एक 'ब्रह्मास्त्र' मिल गया था। स्वार्थ के लालच में लोग कैसे पाषाण-हृदय हो जाते हैं।

गुप्तचरों ने बताया कि द्रौपदी जिस कुटी में गई वहीं श्री कृष्ण का भी रथ गया। अवश्य जामाता परिवार से कृष्ण का कोई सूत्र होगा। धृष्टद्युम्न के साथ वह भी उस कुटिया में पहुँचा। सबकी खुशी का

ठिकाना न रहा जब पता चला कि उनका जामाता स्वयं अर्जुन है। पर अगले ही क्षण उसकी खुशी आक्रोश में बदल गई, पंच-सरित् प्रदेश की राजकुमारी पांचाली के अब पाँच पति होंगे।

कैसी अनहोनी! स्त्री पर कैसा अत्याचार! बाकी पांडव क्या अलग से विवाह करने को सक्षम नहीं? भीम तो पहले से ही राक्षसी से ब्याह कर चुका है। तो क्या उसकी बहन भीम की उप-पत्नी होगी? फिर भी, कृष्ण ने सबको समझा लिया। पर शिखंडी के चेहरे का क्रोध शांत नहीं हुआ। वह बहन का सुख क्षुद्र राजनीति के ऊपर मानता था। ऐसे में कृष्ण ने द्रौपदी के कान में कहा, ''शिखंडी को स्वयं तुम ही समझाओ वरना हमेशा शांत रहने वाला तुम्हारा अग्रज कुछ अनहोनी न कर डाले।''

पिता के प्रतिशोध से बद्ध, सब कुछ सहन करने को प्रस्तुत द्रौपदी ने उसे अलग बुला कर समझाया, ''भाई, युधिष्ठिर को वरण किए बिना मैं साम्राज्ञी नहीं बन सकती। केवल मँझले भाई भार्या बन कर मैं अपना लक्ष्य नहीं पा सकती। कुंती माँ की बात मान कर मैं पाँचों पांडवों को एक सूत्र में बाँध सकूँगी।''

''पर बहना इस प्रकार तुम मात्र पाँचों की संपत्ति रहोगी, विधिवत ब्याहता का दर्जा तुम न पाओगी।'' शिखंडी ने पीड़ित स्वर में समझाने का प्रयास किया।

पर द्रौपदी आँख के इशारे से अपना मंतव्य जता कर अपनी सास के पार्श्व में नमित नयन खड़ी हो गई।

शिखंडी किसी अनहोनी आपदा से चिंतित वापस आ गया।

शिखंडी की यह चिंता एक दिन सत्य साबित हो गई। संदेश वाहक ने बताया कि धर्मराज द्यूत में सारा राजपाट, अपने चारों भाइयों समेत स्वयं को हार गये। सभा स्तब्ध थी। द्रुपद ने देखा कि दूत कुछ और कहना चाहता है सो उसे निर्भय हो कर आगे बताने को कहा।

''और फिर वह हुआ स्वामी, जो कल्पना से परे था। युधिष्ठिर ने द्रुपद सुता को दाँव पर लगाया और हार गये।'' धृष्टद्युम्न आपे से बाहर होते हुए बोला, ''युधिष्ठिर ने अपनी पत्नी को दाँव पर क्यों नहीं लगाया? द्रोपदी ही क्यों?''

''क्योंकि द्रौपदी पाँचो भाइयों की संपत्ति थी पत्नी नहीं।'' लोगो ने देखा यह गर्जना शिखंडी की थी, जो हमेशा शांत रहने के लिए कुख्यात

था।

उपवन में बैठे-बैठे कुमार शिखंडी एक-एक करके द्रौपदी की वेदना से गुजर रहा था। कैसे दु:शासन ने एक वस्त्र में लिपटी रजस्वला पांचाली को केश से पकड़ कर घसीटा होगा। उसने कैसे अपने वस्त्र सम्भाले होंगे, कैसे स्वयं का संतुलन संभाला और किस प्रकार अपने मान को समेटने का प्रयास किया होगा। भरे राजमार्ग में जन साधारण ने तो इंद्रप्रस्थ की साम्राज्ञी को अपमानित होते देख आँखें मूँद लीं पर भरी राजसभा में जहाँ सभी उसके परिचित थे। देवर, जेठ, गुरु, राजगुरु, महामंत्री और श्वसुर... श्वसुर तो शायद अंधे थे, वह कुलवधू के देह-यष्टि-दर्शन की लालसा पूरी न कर सके पर पितामह.?.... वह केवल आँख मूँद कर रह गए। इतने सबके बावजूद द्रौपदी को सबसे अधिक चुभ रही थी- सूतपुत्र कर्ण की आँखें जिनमें विद्रूप मुस्कान के साथ क्रूर संतुष्टि थी।

और उसके बाद... आह! शिखंडी सिर पकड़ कर बैठ गया। दुर्योधन का साध्वी को निर्वस्त्र कर जंघा पर बैठने का आदेश...! वह तो कृष्ण की कृपा, चमत्कार या माया जो भी हो, पर द्रौपदी की लाज बच गई। ईश्वर उसे ही ऐसा भोगने को क्यों बार-बार विवश करते हैं। संत इसे पाप का घड़ा भरने की प्रक्रिया कहेंगे, पर यह मात्र उसकी बहन के अपमान से ही भरना है?

इस क्षण उसने अनुभव किया कि भीम की रक्त पीने और जंघा तोड़ने की प्रतिज्ञा अनुचित नहीं थी। वह उठ कर वापस युद्ध चर्चा करती सभा में पहुँच गया।

युद्ध की रणनीति तय हो चुकी थी अगले दिन उसके अनुज धृष्टद्युम्न को सेनापति बनाने के निर्णय के साथ युद्ध सभा समाप्त हो गई।

अगले दिन कब अर्जुन को विषाद हुआ कब गीता प्रवचन हुआ यह तो उसे मालूम नहीं। हाँ! भीष्म ने पांडवों की विजय की सभी आशायें धूल-धूसरित कर दीं। 'गीता-ज्ञान' के बावजूद अर्जुन भीष्म के सामने आते ही उतना प्रचंड न रह पाता। उसकी आँखों में क्रोध की जगह श्रद्धा का भाव आ जाता। ऐसे में गांडीव ऐसी शर-वर्षा कैसे कर पाता जिसके लिए वह विख्यात था? कृष्ण सब देख रहे थे। और एक दिन भीष्म के शौर्य ने कृष्ण को शस्त्र उठाने को मजबूर कर दिया। नवें रोज की समाप्ति

पर सुना सूर्यास्त के बाद पांडव कृष्ण को आगे कर कुरु-शिविर में पितामह से मिलने गये... क्यों? भीष्म तो पांडवों को न मारने का आश्वासन भी दे चुके थे... फिर इस गुप्त मंत्रणा का क्या मंतव्य था। कुछ भी हो कृष्ण ने अवश्य कोई मोहिनी चलाई होगी।

दसवें दिन सुबह एका-एक शिखंडी को सेनापति बनाया गया। अर्जुन स्वयं उसके अंग-रक्षक होंगे और सेनापति का केवल एक लक्ष्य होगा-देवव्रत भीष्म!

शिखंडी यदि कायर होता तो इतना बड़ा दायित्व कभी स्वीकार न करता। वह क्षत्रिय था, उसने यह भार सहर्ष स्वीकार कर लिया। शिखंडी कई बार भीष्म के सामने आया, उसने उन पर आक्रमण भी किया। हर बार उसके वार को बचा कर भीष्म दूसरी ओर चल देते। शिखंडी के वार का कोई उत्तर देना तो दूर, उसकी तरफ दृष्टिपात भी नहीं करते। भीष्म की अनदेखी से वह अपमानित महसूस करने लगा। उसे अब क्रोध आने लगा था। उसी क्रोध में उसने पार्थ की ओर देखा। कृष्ण ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा और आश्वस्त किया। अगले ही क्षण कृष्ण ने अर्जुन के रथ को कुछ ऐसे संचालित किया कि सारी बाधाओं को चीरकर कुछ ही क्षणों में शिखंडी और भीष्म आमने-सामने थे।

भीष्म को देखते ही शिखंडी के क्रोध को मानो हवा मिल गई। उसे याद आया कि भीष्म के कारण ही उसे आज भी किंवापुरुष कहा जाता था। उसने कान तक खींच कर बाण भीष्म को मारा। उसे ज्ञात था कि भीष्म उसे काट सकते थे। पर यह क्या... भीष्म ने कोई प्रतिकार नहीं किया। कृष्ण ने भीष्म मार्ग अवरुद्ध कर रखा था। वह बाण भीष्म के सीने पर लगा। आश्चर्य भीष्म को तनिक भी पीड़ा नहीं हुई। उन्होंने शिखंडी पर प्रति-वार नहीं किया। वह मात्र शिखंडी की तरफ रथ पर पीठ कर बैठ गये। शिखंडी उनके इस व्यवहार का औचित्य पर विचार कर ही रहा था कि पीछे के रथ से एक भयानक बाण भीष्म को भेद गया। शिखंडी ने मुड़कर देखा, यह बाण अर्जुन का था। अर्जुन के मुख पर विषाद था फिर भी वह लगातार पितामह पर बाण पर बाण झोंक रहा था। कृष्ण की मुद्रा प्रसन्न थी। शिखंडी स्तब्ध रह गया।

थोड़ी देर में भीष्म बाणों से आहत हो रथ के नीचे गिर पड़े। शिखंडी तत्काल रथ से पितामह को सहारा देने के लिए कूदा- पर यह क्या... भीष्म धरती पर नहीं गिरे। वह पीठ में लगे बाणों के बल गिरे, और

शर-शैय्या पर लेट गये। शिखंडी उन्हें प्रणाम कर पैर की तरफ खड़ा हो गया। भीष्म से उसका सारा वैर भाव आँसुओं में बह चुका था। घृणा की जगह आदर ने ली ली थी। युद्ध समाप्त हो चुका था अर्जुन पितामह के चरणों में झुका था। कृष्ण भी प्रणाम कर आदर से खड़े थे। धीरे-धीरे दोनों पक्षों के योद्धा वैर भूल कर पितामह को प्रणाम कर रहे थे। सभी की आँखों में अश्रु थे।

भीष्म-पर्व समाप्त हो गया। युद्ध की परिणिति तय हो गई थी।

भीष्म के पराभव के शोक ज्वार से उबरने के बाद अर्जुन अपने शिविर में जाकर युद्ध वेषभूषा में ही शय्या पर गिर गया। धीरे-धीरे शिखंडी को कल की गुप्त मंत्रणा और स्वयं को मुख्य सेनापति बनाने के भेद का भान हुआ। संभवतः कल रात भीष्म ने पांडवों को विजय का आशीर्वाद दे दिया हो, और अपने पराभव की युक्ति बताई होगी। उन्होंने ही कहा हो कि शिखंडी को सेनापति बना कर मेरे सामने कर दो। अम्बा का अवतार होने के कारण उसे पुरुष रूप में अर्ध-नारी मानता हूँ। उसके सामने मैं शस्त्र त्याग दूँगा। अम्बा का प्रतिशोध पूरा हो जाएगा... पर गांडीव से अशक्त धनुष मुझ निहत्थे को पराभूत नहीं कर पाएंगे, अतः अर्जुन को शिखंडी के पीछे से मुझ पर वार करना होगा। सशस्त्र रहते मुझ कोई परास्त करे, ऐसी सामर्थ्य किसी में नहीं है।

उसे कृष्ण पर बड़ा क्रोध आया जिसने, ऐसे घृणित कार्य के लिए उसे चिह्नित किया। उसकी किंवापुरुष की छवि पर मोहर लगा दी।

शिखंडी अपराध बोध और विषाद की पीड़ा से कराह उठा...। उसकी कराह इतनी मार्मिक थी कि मैं भी कराह उठा, मेरी कल्पना मुझे लेकर फिर 21वीं सदी में लौट आई।

पर मस्तिष्क में बच्चन जी का अर्ध-नारीश्वर वाला विचार घूम रहा था। क्या शिखंडी जैसा कि उसे निरूपित किया गया वैसा न होकर हम सब जैसा साधारण पुरुष हो जो स्त्री भाव प्रधान हो। बलिष्ठ काया होते हुए भी कोमल भावों की अधिकता से उन युद्ध-उन्मादी क्षत्रियों के बीच उसे स्त्रैण माना जाता हो। यदि शिखंडी कवि होता तो शायद उसे भी 'पन्त' जी की तरह 'सुकुमार भावों का कवि' कहा जाता। पर क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होना उसके लिए अभिशाप बन गया।

प्राचीन काल से ही 'नर' होने का मतलब बलिष्ठ, वज्रादपि कठोर,

कोमल भावनाओं से रहित माना जाता रहा है। कोमल भावों से युक्त पुरुष नायक नहीं हो सकता। वह तो केवल कवि, संगीतज्ञ, चित्रकार ही हो सकते हैं। पर अर्जुन जिसे साक्षार 'नर' माना जाता है, कोमल भावों की वजह से रचनाकारों ने उस पर भी, चाहे एक वर्ष ही सही, पर 'बृहन्नला' के रूप में क्लैवता थोप दी। रुद्र होते हुए भी आशुतोष होने के कारण शिव को देवी पार्वती के साथ कोमल भाव नृत्य, गायन, वाद्य-प्रवीण, कृष्ण को राधा के साथ 'अर्ध-नारीश्वर' बनना पड़ा?

सम्पूर्ण मानव होने के लिए स्त्री और पुरुष दोनों भावों का उचित सम्मिश्रण होना परम आवश्यक है। प्रकृति ने इसीलिए प्रत्येक स्त्री और पुरुष को 'अर्ध-नारीश्वर' भाव में ही सृजित किया। इन्हीं विचारों में डूबा मैं कब घर पहुँच गया कुछ भान ही नहीं रहा। तत्परता से पत्नी ने चाय बना कर पेश की। फिर भी मुझे अन्यमनस्क देख कर ''जाड़े की शाम घर आते ही पत्नी के हाथ की गरम चाय मिलने पर एक धन्यवाद की मुस्कान तो बनती है?'' पत्नी ने कहा।

मैं अपने ख्याल में ही डूबा था। प्रत्येक मनुष्य में स्त्री और पुरुष हार्मोन होने का तथ्य और बच्चन जी की बात की बात की सत्यता परखने के उद्देश्य से बगैर किसी भूमिका के मैंने पत्नी से पूछा, ''क्या मुझमें भी कुछ स्त्री गुण तुम्हें दिखते हैं?''

पत्नी ने मेरी मूँछों को देखा फिर सीने की ओर देखते हुए विनोद से बोली, ''फिलहाल अभी तक तो नहीं।''

मुस्कराते हुए मैं चाय का आनंद लेने लगा।

❐❐❐

उसने ही विश्वास नहीं किया...

साठवें दशक के अंतिम वर्षों में एक डॉक्टर एम.बी.बी.एस. पास कर इंटर्न के रूप में ट्रेनिंग कर रहा था। डॉक्टरी पास करने के बाद नए डॉक्टर अपने को बड़ा भारी चिकित्सक मानने लगते हैं। परंतु वार्ड में घुसते ही उन्हें अपनी अनुभवहीनता का एहसास होने लगता है। उन्हें समझ में आने लगता है कि निदान (डायग्नोसिस) और उपचार ही चिकित्सा की अंतिम सीमा नहीं होती। अस्पताल में भर्ती मरीज का विश्वास जीते बगैर उनके डाइग्नोसिस करना, उनका इतना विश्वास जीतना कि यह जानते हुए भी कि आप ट्रेनी डॉक्टर हैं, आपको अपने शरीर का परीक्षण करने दें। जो मरीज गाँव के झोलाझाप डॉक्टरों को फीस देकर दिखाता है, वही मेडिकल कॉलेज के क्वालीफाइड डॉक्टरों को इसलिए दिखाने को तैयार नहीं होता क्योंकि वह ट्रेनी डॉक्टर है और देखने में बिल्कुल बच्चा लगता है। व्यावहारिक रूप से यदि देखें मरीज की यह झिझक बहुत ही स्वस्थ प्रतिक्रिया जो ट्रेनी डॉक्टरों के गुरुर को कम करने में सहायक होती है और उन्हें प्रेक्टिकल कार्य सीखने को उत्प्रेरित करती है।

यह प्रैक्टिकल कार्य उन्हें वार्ड के अनुभवी वार्ड-ब्वाय व आया लोग सिखाते हैं। सीनियर डॉक्टरों के पास इतना समय ही नहीं होता। इंजेक्शन व ड्रिप लगाना, मरीज की निजता व लज्जा का ध्यान रखते हुए उनके परीक्षण करने की विधा उन्हें सीनियर स्टाफ नर्से व कंपाउंडर लोग ही सिखाते हैं। इसीलिए प्रायः देखा गया है कि मेडिकल कॉलेज के सीनियर कर्मचारी डॉक्टरों के बहुत मुंहलगे हो जाते हैं। क्यों न हों वह डॉक्टरों के ट्रेनिंग के दिनों के उस्ताद ठहरे।

ऐसी ही एक आया इंटर्न डॉक्टर को लेडीज वार्ड में मिली। पहले ही दिन उसने डॉक्टर से पूछा, ''आज आपको बड़ा अजीब लग रहा होगा। एकदम अंजाना, नया माहौल।''

डॉक्टर जो हाथ में सीनियर द्वारा दिये गये काम की लिस्ट लिए यह

भी नहीं तय कर पा रहा कि कौन सा काम कहाँ से शुरू करें। ऐसे मौके पर कोई हितैषी स्वर सुन कर उनका दिल भीग गया, पर वह कुछ बोला नहीं। बोलता भी क्या? न हाँ कर सकता था न ही न।

आया ने कहा, ''मन लगा कर काम करिएगा तो धीरे-धीरे सब सीख जाएँगें। चलिये मरीजों की ड्रेसिंग से शुरू करिए।'' और वह ड्रेसिंग ट्राली लेकर आ गयी। उसने डॉक्टर को डॉक्टरी तरीके से हाथ धोना सिखाया। पर्दे का ध्यान रखते हुए महिला मरीज की ड्रेसिंग करने में मदद की। उसने ड्रेसिंग के समय डॉक्टर को असहज देख कर बताया कि आप वार्ड में सिर्फ डॉक्टर हैं और मरीज सिर्फ एक मरीज। यह बिलकुल ध्यान न दें कि मरीज स्त्री है या पुरुष। आपका संकोच छूट जाएगा व मरीज भी सहज रहेगा। डॉक्टर को 'सुश्रुत की सौगंध' याद आ गई जिसमें कहा है कि 'तुम्हें स्त्री और पुरुषों में फर्क नहीं करना है।'

डॉक्टर ने महसूस किया कि यह आया वार्ड की अन्य आयाओं से अलग थी। पहनावा, व्यवहार, मरीजों से बर्ताव सभी में एक संतुलन व गरिमा थी जो अन्य में नहीं थी। सभी नर्से उसे बुआ कहती थीं, डॉक्टर लोग भी उसे सम्मान देते थे। डॉक्टर में यह जिज्ञासा थी कि वह सबसे अलग कैसे है? पर डॉक्टर की यह जिज्ञासा ही रही, पूछने का साहस व मौका ही नहीं था। ऊपर से महिला के निजी जीवन के बारे में उत्सुकता तब भी शिष्टता व सभ्यता के प्रतिकूल मानी जाती थी।

हफ्ते भर में डॉक्टर ने काम करना सीख लिया। वह नर्सों व कर्मचारियों के बीच 'दिल लगा कर सीखने का उत्सुक वर्कर' के रूप में जाना जाने लगा। अच्छा काम करने वाले सभी को प्रिय होते हैं।

जब ट्रेनी डॉक्टर की नाइट ड्यूटी लगती है तो उसे एक बार फिर दिक्कत का सामना करना पड़ता है। हर विभाग में नाइट ड्यूटी के लिए सीनियर डॉक्टरों के विश्राम कक्ष तो नियत होते हैं, परंतु बेचारे ट्रेनी डॉक्टर के लिए ऐसा कोई प्रबंध नहीं होता। ऊपर से सीनियर्स गंभीर मरीजों की लगातार देखभाल के लिए हर आधे घंटे में चेक करते रहने का निर्देश कर देते हैं, इसलिए इंटर्न के विश्राम का अवसर ही नहीं मिल पाता। नाइट ड्यूटी के अगले दिन मात्र एक घंटे अंदर ही फ्रेश हो कर पुनः वार्ड में उपस्थित होना होता है। दिन-रात काम करने का यह अभ्यास आगे चलकर डॉक्टर को इमरजेंसी में अनवरत काम करने की शक्ति देता है। परंतु कभी-कभी जब भगवान की दया से वार्डों में कोई

सीरिअस मरीज नहीं होता तो उसे विश्राम के लिए इधर-उधर जगह ढूँढ़नी पड़ती है। यह जगह कोई ड्रेसिंग रूम या किसी खाली वार्ड का बिस्तर भी हो सकता है। वह जहाँ भी रहे सभी वार्ड सिस्टर्स को यह सूचना रहती कि जरूरत पड़ने पर उसे कहाँ से बुलाया जाय।

मरीज सीरिअस होने पर उसे रात भर मरीज के पास बैठना होता है। कभी-कभी नर्सें तरस खा कर रात में चाय बनाते वक्त डॉक्टर को बुलाकर एक कप चाय पिला देती हैं। यह एक बड़ी रिलीफ होती है। (नर्सों के लिए रात की ड्यूटी पर मेडिकल कॉलेज में चाय बनाने का सामान नर्सिंग प्रशासन द्वारा मुहैया कराया जाता है।)

चाय के समय ड्यूटी रूम में आया और वार्ड ब्वाय भी एकत्र हो जाते हैं। जाड़े के दिनों में सभी कर्मचारी ड्यूटी रूम में हीटर के पास ही जुटे रहते हैं। कभी-कभी तो चाय का दौर दो तीन बार भी चल जाता है।

ऐसी ही एक जाड़े की रात में नाइट शिफ्ट में जब सभी मरीज आराम की नींद सो रहे थे सिस्टर..., कर्मचारी व इंटर्न डॉक्टर जाड़े व नींद से बचने के लिए ड्यूटी रूम में एकत्र थे। डॉक्टर को ट्रेनिंग में आए काफी समय बीत गया था। अब वह अस्पताल के माहौल में सिर्फ घुलमिल ही नहीं गया था बल्कि सेवा कर्मियों के साथ एक प्रकार की पारिवारिक भावना भी विकसित हो चुकी थी। इसलिए उसका संकोच छूट गया था। वह भी इस रात्रि गोष्ठी में शामिल था। इधर उधर की चर्चा के बाद उसने उक्त आया से पूछ ही लिया ''आप अन्य कर्मचारियों से एकदम अलग कैसे हैं। आपका शालीन व्यवहार इंगित करता है कि आप किसी अच्छे परिवार से है, तो यहाँ कैसे?''

सभी चुप...! डॉक्टर को एहसास हुआ कि उसको इतना निजी प्रश्न नहीं पूछना चाहिए था। गहन चुप्पी को स्वयं आया ने तोड़ा ''डॉक्टर भइया, यह सवाल पिछले चार वर्षों से सभी डॉक्टरों के मन में उठता है पर केवल आपका ही दिल इतना साफ है कि आपने सीधे मुझसे ही पूछ लिया।''

फिर चाय के बर्तन समेटने हुए बोली, ''मैं आठवीं पास हूँ। मेरा अपना खुद का सुखी परिवार था। माँ-बाप 1947 के बँटवारे में मारे गए। केवल मैं ही जीवित आ पायी। रिफ्यूजी परिवारों में आपस में तब बहुत एका हुआ करता था सो मेरी शादी भी आराम से खाते पीते परिवार में हो गई। मैं बहुत सुखी थी। पति फैक्ट्री में सुपरवाइजर हो गया था, एक

बेटी भी हो गई थी। पर कभी-कभी ज्यादा खुशी को शायद नजर लग जाती है। मेरे साथ भी वही हुआ। जैसे देश के बँटवारे के समय मैं जिस हाल में थी, भगवान ने एक बार फिर उसी हाल में धकेल दिया। मैं अकेले तो सब झेल लेती पर इस बार मेरे साथ मेरी छह साल की मासूम बेटी। बँटवारे के समय मेरा कष्ट देखने को मेरे माता पिता जीवित ही नहीं थे, परन्तु मैं अपनी बेटी के साथ और भी असहाय महसूस कर रही थी। कुछ दिन तक पड़ोसियों ने मदद की पर ज्यादा दिन तक जवान स्त्री को कोई महिला अपने घर मे नहीं रहने देना चाहती। हम माँ बेटी दाने-दाने को मुहताज हो गए। वह तो भला हो बड़ी मैट्रन साहब का कि कचहरी में उनकी नजर मुझ पर पड़ गयी। उन्हें दया आ गई। रुक कर उन्होंने मेरी कहानी सुनी। भूख से बिलखती मेरी बेटी को पर्स से निकाल कर बिस्कुट दिये, और मुझे अपने साथ अपने बंगले ले आयीं।''

''मैट्रन साहब के यहाँ मुझे रोटी और सर पर छत तो नसीब हो गई पर मुफ्तखोरी...! पेट में अन्न पड़ने के बाद थोड़ा स्वाभिमान जागा या बेटी के भविष्य की चिंता, पता नही। मैंने मैट्रन जी से कोई काम दिलाने को कहा। मैट्रन ने मुझे आया के काम पर लगवा दिया। नौकरी के पहले कुछ महीने उन्होंने मुझसे ऐसे ही वार्ड का काम लिया। बाद में जब इन सिस्टर्स ने मेरी तारीफ की तब ही मुझे पहले औजी और बाद में पूरा काम करने की नौकरी मिल गई। तब से मेरी रोजी रोटी मरीजों की सेवा है। तनख्वाह से कुछ बच रहता है तो वह बेटी की पढ़ाई, किताब व ड्रेस में लग जाता है। बेटी मैट्रन साहब का हाथ बँटा देती है। उन्हीं के सरवेंट क्वार्टर में हम लोग रह रहे हैं।''

डॉक्टर को अपने प्रश्न का उत्तर तो मिल चुका था पर फौरन ही उसने दूसरा प्रश्न किया, ''पर ऐसा क्या हो गया कि आपको सड़क पर आना पड़ गया?''

''यह गाथा आप सिस्टर जी से पूछ लीजिएगा। मैं खुद न बता पाऊँगी।'' कह कर आया चाय के बर्तन लेकर चली गई।

डॉक्टर सोचने लगा कि ऐसा क्या हो सकता है जो वह स्वयं मुझे नहीं बता सकती। इनकी कहानी पर तो 'वक़्त' जैसी फिल्म बन सकती है। तभी नाइट सुपरवाजर अपने नाइट राउंड पर आई, वार्ड का हाल पूछा, और आया को अपने साथ लेकर राउंड पर चली गई।

नाइट सुपरवाइजर के जाने के बाद सिस्टर जब पुनः आश्वस्त होकर

बैठी तो डॉक्टर ने सिस्टर से पूछा कि आया के साथ ऐसा क्या हुआ तो सिस्टर ने बड़े संकोच से बताया, ''इन्हें इनके पति ने छोड़ दिया।''

डॉक्टर ने पूछा- ''क्यों? यह तो बहुत भली लगती हैं।''

सिस्टर- ''हाँ! उसमें इनकी गलती नहीं थी।''

डॉक्टर- ''फिर क्यों छोड़ा।''

सिस्टर ने झुँझलाते हुए कहा, ''सारी बात मैं ही आपको नहीं बता सकती। किसी रोज आप ही नाइट सुपर सिस्टर से पूछ लीजिए।''

डॉक्टर मन में सोचते हुए सोने की जगह तलाश करने चल पड़ा। ऐसी क्या बात है जो यह सिस्टर जानते हुए भी नहीं बता सकती पर नाइट सुपर बता सकती है।

कुछ हफ्तों के बाद एक रात की इमरजेंसी में नाइट सुपरवाइजर ने ऐसा वाकया बताया वह अविश्वसनीय था। डॉक्टर को समझ में आया क्यों कम उम्र वाली सिस्टर बताने में संकोच कर रही थी।

नाइट सुपरवाइजर जो काफी सीनियर थी और लगभग रिटायरमेंट के नजदीक थी उन्होंने जो किस्सा बताया वह शब्दशः नहीं बताया जा सकता परंतु फिर भी वह कुछ इस प्रकार है- पर किस्से के पहले जहाँ यह दुर्घटना घटी उसे समझना अत्यंत आवश्यक है।

कानपुर के पश्चिम में पनकी गाँव में हनुमान जी का एक बहुत प्रतिष्ठित मंदिर है जो 'पनकी के हनुमान मंदिर' के नाम से मशहूर है। यह मंदिर राजकीय राजमार्ग 25 के समीप स्थित है जो आगरा और झाँसी जैसे महत्त्वपूर्ण शहरों को जोड़ती है पर यह रोड कानपुर में 'पनकी रोड' के नाम से जानी जाती हैं। ऐसी है पनकी के हनुमान जी की महिमा। इस सड़क के किनारे बहुत बड़े आयुध कारखाने हैं, जिसकी वजह से इस इलाके में तमाम बस्तियाँ बन गई हैं। कुछ सरकारी, कुछ अतिक्रमण से। ऐसी ही बस्तियों में कारखानें में काम करने वालों का आवास था। कुछ सपरिवार रहते थे तो कुछ छड़े (अकेले, बगैर परिवार के)।

इस इलाके के पास ही एक नाला बहता था जिसे 'गंदा-नाला' के नाम से जाना जाता था। आस पड़ोस में भी बहुत झाड़-झंखाड़ होने की वजह से इस इलाके में मच्छरों का बड़ा आतंक था। मच्छर भगाने के लिए तब क्वायल या ओडोमस उपलब्ध नहीं था। केवल नीम की पत्ती का धुवाँ ही उपलब्ध था, वह भी थोड़ी देर तक प्रभावी रहता। कानपुर

में बिजली तो थी और श्रमिकों के घर में कनेक्शन भी था पर पंखे श्रमिक तो दूर सुपरवाइजर्स के यहाँ नहीं होते थे। जाड़े में तो कोई अधिक समस्या नहीं होती पर गर्मी में कमरे के अंदर सो पाना असंभव था। सभी लोग कमरे के बाहर पड़ी खुली जगह में ही लेटते। खुली हवा के झोंकों से मच्छरों की तादाद में कुछ तो कमी आ ही जाती। वरना चादर का कवच बना कर लोग किसी तरह सो लेते। ताज्जुब कि मई, जून की गर्मियों के 9 महीने के बाद फरवरी-मार्च में भी कॉलोनी में बच्चे पैदा होते थे। मतलब, भगवान् सहारे सभी धर्म संपादित होते रहते।

दूसरी तरफ श्रमिकों एवं उद्योगों की नगरी कानपुर में कम्युनिस्ट पार्टी का वर्चस्व बढ़ने लगा था, जिससे आए दिन जुलूस, धरना, प्रदर्शन और कारखानों में 'लॉक-आउट' आम बात हो चली थी। रोजगार नगरी में श्रमिकों में बेरोजगारी भी पसरने लगी थी। कुछ बेरोजगार लोग अन्य धंधों में लग जाते, कुछ घर वापस लौट जाते परंतु कुछ दुस्साहसी अपराध की दुनिया में पहुँच जाते। नतीजा- उद्योग नगरी कानपुर अब अपराध नगरी में परिवर्तित होने लगी थी। राहजनी, लूटमार, चोरी आदि की घटनाएँ इतनी आम हो गई थी कि लोग इनका संज्ञान तभी लेते जब घटना उनके साथ या उनके टोले-मोहल्ले में घटित होती। जाहिर है कि ऐसे वातावरण में आयुध फैक्ट्री के समीप बसी श्रमिक बस्ती जिसका हम जिक्र कर कर रहे हैं, भी ऐसी घटनाओं से महफूज नहीं थी।

फैक्ट्रियों में आठ-आठ घंटे की पारी में श्रमिक काम करते थे। सुबह आठ से चार, सायं चार से रात्रि बारह व रात्रि बारह से फिर सुबह आठ की शिफ्ट चलती। जाड़े में तो रात बारह बजे ड्यूटी से लौटने को दरवाजा खटखटाना पड़ता, परंतु गर्मियों में सभी लोग बाहर ही सोते थे। पत्नियाँ पतियों का खाना टिफिन में लगा कर चारपाई के पास स्टूल पर रख देती। पति ड्यूटी से लौट कर टिफिन का खाना खाकर बगैर किसी की नींद खराब किए पहले से लगी अपनी चारपाई पर सो जाता। बड़ी सुव्यवस्थित ढंग से जिंदगी गुजर रही थी, कि एक चोर की शनि दृष्टि एक घर पर पड़ गई।

रात्रि की पहली नींद सबसे गहरी होती है। चोर लोग इसी का फायदा उठाते है। सुपरवाइजर के यहाँ चोरी के इरादे से एक चोर दबे पाँव आया। पत्नी बाहर ही मसहरी लगा कर सो रही थी। पड़ोस में ही पति के मसहरी लगे बिस्तरे के पास ही स्टूल पर टिफिन रखा था। चोर शायद

भूखा था, सो उसने चुपके से पहले टिफिन का खाना खाया और बाद में मकान में घुसने के लिए गृहस्वामिनी के गले में माला की तरह पड़ी चाभी को निकालना चाहा। टिफिन की आवाज से पत्नी की नींद तो खुली तो, परंतु वह तत्काल ही आश्वस्त होकर फिर गहरी नींद में लौट गई की पति भोजन कर चुका। गले में चाभी पर हाथ लगते ही उसकी नींद फिर खुली परंतु अबकी बार वह समझी कि उसका पति शौच आदि के लिए चाभी मांग रहा है, सो उसने स्वयं ही चाभी निकाल कर दे दी और बोली, ''खाना खा लिया?''

गृहस्वामिनी की आवाज सुन कर पहले तो चोर एकदम सन्न हो गया। परंतु जब पत्नी के अस्फुट शब्दों का अर्थ उसकी समझ में आया कि वह तो उसे अपना पति समझ रही है, तो उसके मन में चोरी से अधिक घिनौना विचार आया, ''यदि यह नींद में मुझे अपना पति समझ ही रही है तो क्यों न पति धर्म का निर्वाह भी कर लूँ,'' और वह धीरे से उसकी मसहरी में घुस गया। पत्नी ने नींद में उसे अपना पति मान सरक कर जगह भी दे दी। चोर की हिम्मत बढ़ी और वह पति-धर्म निर्वहन करने लगा।

पत्नी ने नींद में भी सहयोग किया। नींद की तंद्रा से श्रृंगार में परिवर्तित होने के बीच कुछ क्षणों के लिए वह जब पूर्ण चेतन हुई तो उसे ख्याल आया कि मेरा पति तो सिख था मोना कैसे हो गया...। उसके मन में भीषण विस्फोट हुआ। क्रोध में नारी अबला नहीं रह जाती, वह अत्यंत हिंस्र हो जाती है। उसमें अपार बल आ जाता है। उसने चीखते हुए अजगरी की भाँति चोर को दोनों हाथों और पैरों से उसी अवस्था में दबोच लिया। चोर ने पूरी शक्ति से छूटने की कोशिश की, परंतु उस 'अबला-प्रबल' की अजगरी जकड़ से मुक्त नहीं हो सका। पड़ोसी भी जाग गए। उन्होंने चोर ही समझ कर मसहरी हटाई परंतु हालत देख कर वह भी पूरा माजरा समझ गए। सबने मिल कर चोर को घसीट लिया और पिटाई शुरू हो गई। किसी महिला ने पत्नी पर चादर डाली। इतने में ही उसका पति भी आ गया उसने भी धुनाई की। अच्छा खासा हंगामा हो गया।

स्थानीय पुलिस चौकी के दरोगा जो नाइट-राउंड के लिए मोटर साइकिल से निकले थे वह भी हंगामा सुन कर आ गए। उन्होंने चोर की जम कर धुनाई की और थाने ले गए। क्योंकि, चोरी तो हुई नहीं अतएव बलात्कार की एफआईआर दर्ज हुई। उसके बाद तो हर दिन थाने में

पुलिसिया पूछताछ, वकील के अश्लीलता से मुस्कुराते हुए किए गये प्रश्न, लोगों की पीछा करती कुत्सित निगाहों द्वारा पीड़िता का बलात्कार होने लगा। इस दुर्व्यवहार की रिपोर्ट वह कहाँ करे? कोई बताने वाला नहीं था।

यहाँ तक कि मेडिकल के लिए जब उसे महिला अस्पताल ले जाया गया, जहाँ उसे महिलाओं से सहानुभूति मिलने की उम्मीद थी, वहाँ भी खुसफुसाहट, व्यंग्य भरी मुस्कान। पूछने पर डॉक्टर को जब उसने शर्मनाक घटना बयान की तो सभी के चेहरे पर मुस्कान छा गई। एक चंचल परिचारिका ने इठलाते हुए छींटाकशी की। ''अरे क्या पता खुद ही यार को बुलाया हो, भेद खुलने पर 'त्रिया-चरित्र' कर रही है। तभी तो बलात्कार का निशान भी नहीं है शरीर पर।''

इस घटना के बाद से पति जिसने उसकी रक्षा और भले बुरे समय साथ निबाहने की सौगंध पवित्र 'ग्रंथ साहब' के सामने ली थी, भी उससे अन्यमनस्क ही नहीं, विमुख हो चला था। केवल खाने और सोने के लिए ही घर आता था, बाकी समय पीकर बाहर ही पड़ा रहता था। पत्नी, पति की मानसिक दशा का अनुमान कर सकती थी, इसलिए वह और व्यथित होती। तीन साल की छोटी बेटी माँ-बाप की परेशानी न समझ कर कभी बाहर जाने की जिद करती तो माँ उसे पिटाई करके ही बाहर जाने से रोक पाती।

कैसे एक घटना ने जिसमें उसका कोई कुसूर नहीं था, उसकी जिंदगी नर्क बना दी।

उसका पूरे शहर में पति व बच्ची के अलावा कोई अन्य संबंधी भी नहीं था। उसके माँ-बाप पूरे परिवार के साथ मुल्क तकसीम होने के दंगों में काट दिए गए थे। उसे व उसके ममेरे भाई को मृत समझ कर छोड़ दिया था। एक शरणार्थी सिख परिवार के लड़के (उसका मौजूदा पति) से शादी कराने के बाद ममेरा भाई एक्सीडेंट में मर चुका था। पति छोड़ उसके पास कोई और ठौर नहीं था। बेटी की वजह से वह आत्महत्या भी नहीं कर सकती थी। बेबसी ने उसे पूरी तौर से घेर रखा था।

साल दो साल बाद मुकदमा शुरू हुआ। पीड़िता की तरफ से मात्र सरकारी वकील, जो केवल सरकारी ही था, खड़ा हुआ। जबकि आरोपित की तरफ से कर्मचारी यूनियन ने बढ़िया वकील खड़ा किया था। आखिर आरोपित लॉक-आउट मिल का श्रमिक था और यूनियन का सदस्य होने

के कारण पूरी यूनियन उसके पीछे खड़ी थी। वहीं सरकारी वकील बगैर सुविधा शुल्क के मेहनत करना वक्त की बर्बादी मानता था।

उस समय का कानून आज के कानून से एकदम भिन्न था। आज बलात्कार के आरोपित को अपने निर्दोष साबित करना पड़ता है, वहीं उस समय के कानून में पीड़िता को साबित करना पड़ता कि उसके साथ बलात्कार हुआ है। इसके लिए गवाहों की भी आवश्यकता होती थी जो अधिकतर मामलों में नहीं मिलते थे, बलात्कार ऐसी घटनाएँ सरेआम तो होती नहीं। उस समय के कानून में ज्यादातर सजा उन्हीं केसों में हो पाती थी जिनमें महिलाएँ अवयस्क हो अथवा शरीर पर इतनी चोटें हो कि यह निर्विवाद रूप से साबित किया जा सके कि महिला ने अपनी अस्मिता बचाने की भरपूर कोशिश की। धमका कर या धोखे से किए गए बलात्कार में कोई चोट न पाये जाने पर केस अमूमन इस बात पर छूट जाता था कि यह वाकया महिला की रजामंदी से हुआ था, परंतु पकड़े जाने पर महिला पुरुष पर झूठा आरोप लगा रही है। अदालत में भी ऐसे अश्लील प्रश्न पूछे जाते जो कि महिलाओं के लिये संभवत: बलात्कार से अधिक अपमानजनक होते थे। बलात्कार तो शायद अकेले निर्जन स्थान पर हुआ हो परंतु अदालत में यह 'वाचिक बलात्कार (वर्बल रेप)' भरी कोर्ट में सबके सामने होता। ज्यादातर महिलाएँ इसी में टूट जाती थीं और फूट-फूट कर रोने लगतीं और आगे बयान भी नहीं दे पातीं। उनके इस मौन निष्कर्ष 'मौन स्वीकृति लक्षणम्' मान लिया जाता था और बलात्कारी बेदाग छूट जाता था। प्रश्न केवल एक बलात्कारी के छूटने का नहीं था, बलात्कारी कानूनी खामी समझ लेने के बाद निर्द्वन्द्व हो कर समाज में यही अपराध उसी पीड़िता पर अथवा किसी अन्य शिकार पर करने को प्रोत्साहित होता था। इसीलिए बलात्कारियों की संख्या महामारियों के कीटाणुओं की तरह बढ़ती जाती थी। संभवत: इसी वजह से बलात्कार की शिकार हुई महिलाओं को घर वाले समझा बुझा कर शांत कर देते थे और कोई रिपोर्ट भी नहीं हो पाती थी। अब कानून बदलने और समाज का पीड़िता के प्रति दृष्टिकोण बदलने लगा है। त्वरित पुलिस जाँच व न्यायालय से त्वरित निर्णय मिलने की वजह से पीड़िता व उसके परिवार वाले अब अपराध की रिपोर्ट लिखाने लगे हैं। इससे ऐसा प्रतीत होता कि अब बलात्कार अधिक होने लगे, जबकि वास्तविक इससे एकदम उलट है।

यही सारे कष्ट इस महिला को झेलने पड़े। बचाव में जब इसने कहा कि टिफिन खाने की आवाज में मैंने समझा मेरा पति लौटा है तो बचाव पक्ष के वकील ने इसे पुरानी यारी बता कर दोष सिद्ध कर दिया कि महिला ने कामांध हो कर पति का खाना भी यार को ही खिला दिया। आरोपित ने अपने बयान में भी पुराने संबंध का होना बताया और यह भी कहा कि इस 'सेवा' के लिये महिला उसे आर्थिक सहायता भी देती थी जिससे इस बेरोजगारी में भी वह जीवन यापन कर सका। आरोपित के इस झूठ से न्यायाधीश क्या, पीड़िता के पति को भी संदेह हो गया। फौजदारी मुकदमें में जहाँ संदेह पैदा हो जाता है आरोपित की छूटने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। संदेह का कीड़ा इतना जहरीला होता है कि दिल और दिमाग को घुन की तरह छेद देता है, विवेक को तो एकदम ही नष्ट कर देता है। संदेह का यही असर उसके पति पर भी हुआ। उसने पीड़िता से सभी संबंध तोड़ लिये। यहाँ तक कि अपने बयान में भी पीड़िता की तरफ से बोलने के बजाय वह चुप ही रहा। नतीजा-आरोपित साफ तो छूट ही गया परंतु पीड़िता अपनी बेटी के साथ दर-दर ठोकरें खाने के लिए मजबूर हो गई।

ऐसे में ही एक दिन भूख से बिलबिलाती माँ बेटी पर मैट्रन की नजर पड़ी तो वह उन्हें अपने साथ ले आई। कुछ दिन उसने मैट्रन के घर काम किया, बाद में मैट्रन ने उसे वार्ड-आया की जगह 'औजी' (प्रतिस्थानी) के रूप में अस्पताल में लगा दिया। मैट्रन जी की ही मेहरबानी से अब वह स्थायी कर्मचारी हो चुकी है।

इस दुखद घटना को बताने में स्वयं नाइट सुपर भी भावुक हो गई, बोली, ''आदमियों की गलती की सजा औरत को क्यों दी जाती है?''

इंटर्न डॉक्टर कुछ कहने ही जा रहा था कि वह आया आ गई। डॉक्टर को एकदम से चुप होते देख कर बोली, ''मैं थोड़ी देर बाद भी आ सकती हूँ।''

''नहीं, तुम आओ और बैठो, तुम्हारी ही बात हो रही थी। डॉक्टर साहब को भी तुमसे पूरी सहानुभूति है।'' नाइट सुपर ने कहा।

इंटर्न डॉक्टर, जिसने अभी-अभी डॉक्टरी पास की थी, के मस्तिष्क में मेडिको-लीगल का ज्ञान ताजा था। आया से बोला, ''आपके साथ वास्तव में अन्याय हुआ। यदि उस व्यक्ति ने यह बयान दिया कि सब

कुछ आपकी रजामंदी से हुआ तो भी वह दोषी साबित होता है। यह जानते हुए भी कि महिला किसी दूसरे की पत्नी है, कोई पुरुष संबंध बनाता है तो वह 'इंफीडेलिटी या दुष्कर्म' का दोषी होता है जिसमें सिर्फ पुरुष ही दोषी माना जाता है और इसके लिए सजा का प्रावधान है। आपका वकील यदि दबाव बनाता तो उस आदमी पर दूसरा मुकदमा चल सकता था जिसमें उसको सजा अवश्य होती।''

आया बोली ''डॉक्टर साहब! आप तो भले आदमी हैं, पर सभी ऐसे नहीं होते। अधिकतर लोग महिला को खिलौना या मनोरंजन की वस्तु ही मानते हैं। इस पूरी त्रासदी में मुझे सबसे ज्यादा कष्ट तो अपने पति के व्यवहार से हुआ। बँटवारे के दौरान मेरे पति ने अपनी माँ और बहन के साथ अत्याचार होते देखा था। उसे अपनी माँ और बहन से हमदर्दी थी। हमेशा कहता था बँटवारे में महिलाओं की कोई गलती नहीं थी। उनके साथ हुए जुल्मों को याद करके आज भी उसका खून खौल उठता है। मैं सोचती थी कि ऐसी परिस्थितियों का एहसास होने की वजह से वह मेरा दुख-दर्द भी समझेगा, मुझसे सहानुभूति रखेगा... हुआ एकदम उलट। उसने ही विश्वास नहीं किया...। अत्याचारी का गुस्सा भी उसने मुझ पर उतारा, मुझ से ही नफरत करने लगा...।'' कह कर उसने पल्लू से नम आँखों को पोछा।

इंटर्न डॉक्टर भारी मन से उठ कर बाहर चला आया। उसके मस्तिष्क में घूम रहा था कि पुरुष प्रधान समाज के 'अंधे कानून' की वजह से अहल्या पुनः दूषित व शापित हुई। वहीं, इन्द्र बगैर किसी ग्लानि या दंड के समाज में उच्छृंखलता करने के लिए एक बार फिर स्वतंत्र छोड़ दिया गया।

❐❐❐

मन की बात

वह उम्र के उस पड़ाव पर था जिस पर हर चीज झूम के आती है। नींद आती है तो इतनी कि कभी-कभी पूरी बाल्टी पानी डालने पर ही खुलती है। जिसमें धीरे से चला ही नहीं जाता। हमेशा दौड़ कर ही चलता था। उसकी चाल के झोंके से एक दो चीजों का गिरना तय था। बुजुर्ग उसे हालाडोला (भूकंप) पुकारने लगे थे। यदि कभी चारा काटने की मशीन पे लग जाता तो दो मजदूरों के बराबर वह अकेला चारा काट डालता। कभी खाने पर आता तो दो चार आदमियों की खुराक कम पड़ जाती। माँ कहती, ''अब बस कर। नहीं नजर लग जाएगी।'' कभी दुलार में माँ के पास सट कर बैठता तो माँ उसका हाथ थाम कर कहती, ''बबुआ तोहार हाथ इत्ता गरम काहे है।'' बेटा कहता, ''यह मेरी खून की गर्मी है। बड़े होने के बाद लोग भूल जाते हैं कि कभी उन पर भी जवानी चढ़ी थी।''

उसके तन में अजब सी अकड़न, बेचैनी और कसमसाहट थी। इस बेचैनी के चलते उसे बछड़ों को सिरे से पकड़ कर धकेलने में मजा आता था। वह बछड़े जिनके अभी-अभी सींग निकलने शुरू हुए थे, उनको भी इस जोर आजमाइश में आनंद आता था। एक रोज वह पछाहीं गाय, जिसकी देहयष्टि कुछ सांड जैसी थी, के बछड़े से भिड़ गया। बछड़े की भी चढ़ती जवानी थी, वह अन्य देसी बछड़ों से ज्यादा ताकतवर निकला। वह पट्ठा हमारे नायक को धकेल कर दीवार तक ले गया और रगेदने लगा। लोगों ने देख लिया तो नायक बच गया। बछड़े ने उसे यौवन की पहली सीख दी... भिड़ने के पहले प्रतिद्वंद्वी को तोल लेना चाहिए।

हमारा यह किशोर नायक ऐसे सुदूर ग्रामीण इलाके का निवासी था जहाँ अभी तक दूरदर्शन नहीं पहुँचा था। वहाँ मोदी जी की 'मन की बात' स्थानीय पंचायत घर, स्कूल या चौपाल में सुनी जाती है। सभी लोग प्रधानमंत्री के मन की बात सुनते। कुछ सहमत होते तो कुछ असहमत। जरूरी नहीं कि स्वाति की हर बूँद सीपी में गिर कर मोती ही बने।

विषधर के मुँह में तो वह बूँद गरल ही बनेगी। कुछ ऐसे भी हैं जो न तो सीपी होते हैं न ही भुजंग। हमारा नायक भी मोदी जी की मन की बात सुनता। उसके मन में भी बहुत सी बातें थी, जिन्हें वह किसी को बताना चाहता था। वह बातें उसके दिल में तब और उफान मारती जब वह अकेला होता। उसको अपने चारो ओर नर ही नर दिखाई देते थी जिनसे मन की बात शेयर करने में उसकी तनिक भी रुचि नहीं थी।

मन की बातों का उफान पूनम के ज्वार की तरह उसके दिल और दिमाग को तहस-नहस करे, इसके पहले ही ईश्वर की कृपा से उसे मन का मीत दिख गया। पड़ोस की एक कन्या जो उससे एक आधा साल छोटी या बड़ी होगी (लड़कियों की उम्र का अंदाजा लगाना मुश्किल है) छोटी... या बड़ी...? के चक्कर में न पड़ कर उसने समवयस्क मान कर समझौता कर लिया। हमारे नायक की निगाहों में चढ़ी यह मुहल्ले की एकमात्र कन्या की एक आँख में टेंटर था और बारहों-मासी नजले की वजह से बिचारी की हमेशा थोड़ी-थोड़ी नाक बहती रहती थी, जिसे वह बार-बार सुड़क कर कंट्रोल में रखती। आप ऐसी लड़की को सुंदर न माने तो यह आपकी 'नजरों का कुसूर।' नायक को तो वह हर हाल में 'कामिनी' ही लगती थी। नायक ने अपने मन की बात के लिए इसी सुंदरी का संधान किया। उसका सदैव यही प्रयत्न रहता कि मन की बात की गोष्ठी में वह 'कामिनी' के पास ही बैठे। हालाँकि उसकी लगातार नाक सुड़कने की ध्वनि से मोदी जी की बात सुनने से व्यवधान पड़ता था, किन्तु आजकल तो उसके हृदय में अपने मन की बात ही डेरा डाले थी। लगता था कि वह बड़ी तन्मयता से प्रधानमंत्री का भाषण सुन रहा है, जबकि वास्तविकता में उसका ध्यान नाक की सुड़-सुड़ पर केन्द्रित होता, और कनखियों से कन्या दर्शन चालू रहता।

'अल-निनो' की मारी सावन की दोपहर को सुहानी पुरवइया की जगह गरम हवा और चटक धूप का कहर था। सारा मोहल्ला भाँय-भाँय कर रहा था। सभी लोग गर्मी से बचने के लिए घरों में दुबके थे। ऐसी एक दोपहर को व्यथित मन से वह घर से बाहर निकला। उसने आँखों के ऊपर हाथ की छाया कर देखा कि कोई मानवाकृति भरी दोपहर में घर वापस आ रही थी। आकृति के पास आते ही उसकी बाँछे खिल गईं... वह सुड़-सुड़ सुंदरी थी। हाथ में लोटा देख कर उसे इतनी गर्मी में कन्या के 'वन गमन' आशय समझ में आ गया। उसने मन ही मन उसके पिता

को धन्यवाद दिया कि मोदी की बातों में आकर उन्होंने अभी हर घर में 'स्वच्छालय' का निर्माण नहीं कराया है। वरना ऐसा स्वर्णिम एकान्त अवसर उसे कैसे मिलता।

उस गर्म दोपहर की बेला में मात्र गलियों के कुछ कुत्ते किसी मदमाती सुरभि का पीछा करते हाँफते घूम रहे थे। कामिनी सामने के घने पीपल की छाँह में कुछ सुस्ताने को रुकी कि वह लपक कर उसके पास पहुँच गया। कामिनी उसके एकाएक प्रकट होने से चौंक कर संभली ही थी कि नायक ने उसके बाएँ हाथ को 'अवायड' करते हुए दाहिना हाथ अपने हाथ में लेकर इतने दिनों से ऊफनती मन की बात उगल दी। नायक को लगा कि वह लड़की अब उसे अपनी टेंटर वाली आँख से देखने लगी। उसकी सुड़-सुड़ एकदम बंद हो गई... नतीजा ऊपर के होंठ पर आने लगा। नायक की आशा के विपरीत उसका चेहरा अजब ढंग से टेढ़ा हुआ और वह जोरों से चीखती हुई लोटा वहीं फेंक कर घर भाग गई।

यह सब स्लो-मोशन में होने के बजाय इतनी द्रुत-गति से घटित हुआ कि हमारा अनुभवहीन नायक हतप्रभ हो गया... और... और फिर थोड़ी देर में हंगामा हो गया। पिता और ताऊ डाँट कम रहे थे, मार ज्यादा रहे थे। यह भी सत्य कि हर लात और घूँसा पड़ने पर उसके मुँह से 'हुँह' की आवाज तो आती पर, उस समय नायक की मनोदशा कुछ ऐसी थी कि उसे पिटने का दर्द महसूस नहीं हो पा रहा था। लात-घूँसे के बाद जब पिता ने छड़ी उठाई। आठ दस प्रहारों के बात ताऊ ने रोका, ''अरे, अब क्या लड़के को मार ही डालोगे?'' तब कहीं हमारा नायक बचा। माँ उसे घसीट कर अंदर ले जाने लगी तो ताऊ ने आश्चर्य से कहा, ''ताज्जुब हैं इतना पिटने के बाद भी यह रोया नहीं, बल्कि इसकी देह तो और फूल गई।''

ताऊ क्या जाने, इस उम्र में 'मर्द' को दर्द नहीं होता।

इस दर्द भरी अनुभूति के बाद कुछ दिन चित्त शांत रहने के बाद फिर से उसके अन्दर मन की बात घुमड़ने लगी। नतीजा... एक दिन उसकी नींद ब्रह्म-मुहूर्त में ही खुल गई। सब सो रहे थे। वह धीरे से मुख्य द्वार खोलकर बाहर आ गया। पूरब की ओर ढाल पर जहाँ निरंतर मूत्र विसर्जन से गीली-सूखी वैतरणी बन चुकी थी, उसने जल-त्याग किया। पास में बँधे गाय-भैंस जग कर पागुर कर थे। मानव विसर्जन और पशु विसर्जन की मिली जुली गंध सुबह की मलय वायु में घुल रही थी।

मक्खियाँ, जो गोबर और मानवबर में कोई भेद नहीं करती, का आगमन इस बेला तक नहीं हुआ था। सो नायक उघारे बदन कुएं की जगत पर अनमने भाव से बैठा था। होनी देखिये, अपनी टैंटर सुंदरी की आँख भी उसी समय खुली, वह भी ताजी हवा खाने बाहर निकली। उसकी निगाह नायक के खुले धड़ पर पड़ती है। पीठ पर छड़ी के लाल नीले निशान पर दृष्टि पड़ते ही उसका कोमल हृदय द्रवित हो उठा। वह पिछले कई दिनों से अपने किये पर पछता रही थी। पछताना भी चाहिये। उसकी जैसी सुंदरी के लिए भगवान ने एक कद्रदान भेजा, उसने ही मौका गवाँ दिया। वह यंत्र-चालित सी नायक के पास पहुँची। उसने बड़ी नरमी से पीठ के निशान को छुआ। उसके कोमल स्पर्श से एक तरफ नायक के पूरी शरीर में बिजली सी दौड़ गई, वहीं पूरे सहन में भूचाल आ गया।

हुआ यह कि सुड़-सुड़ सुंदरी के साथ ही नायक की ताई भी बाहर निकली। उन्होंने देखा कि नायक तो निर्लिप्त भाव से बैठा है, और वह लड़की उसके शरीर को सहला रही है। ताई बाज की तेजाई से आई और चीखते हुए लड़की का हाथ पकड़ कर घसीटते हुए उसके घर उलाहना लेकर पहुँच गई। एक बार फिर हंगामा हुआ। अबकी बार हंगामा कन्या के घर पर था। पिट कन्या रही थी, चोट नायक को लग रही थी।

नायक के परिवार ने एक मत से तय किया कि फूस को आग से अलग कर दिया जाए। नायक को भाई के पास शहर पढ़ने भेज दिया जाय। पर... केवल एक ही परेशानी थी, अपना नायक उस डिवीजन में हाईस्कूल पास हुआ था जिसे पहले 'गाँधी डिवीजन' और आजकल एसी 1 विद II टियर कहा जाता है। फिर भी, भाई इन्कम टैक्स में बाबू था, सो नायक को शहर में अच्छे कॉलेज में दाखिला मिल गया।

कॉलेज की ड्रेस बन गई। मुसीबत केवल जूता पहनने पर आई। स्वतंत्रता के आदी पैर जूते की बंदिश के विरुद्ध विद्रोह कर उठे। धीरे-धीरे जब पैर आदी हो गए तो अच्छी 'साइत' विचार कर कालेज ड्रेस में सजा वह कॉलेज पहुँचा। लगता था किसी कलारासी अरबी घोड़े की जीन किसी टट्टू पर कस दी गई। गेट पर पुराने गीतों के शौकीन चौकीदार के मोबाइल पर गाना बज रहा था - 'साला मैं तो साहब बन गया।'

क्लास में प्रवेश करते ही सब बच्चे स्वत: हँसने लगे। टीचर के घूरने पर बच्चे चुप हुए। टीचर ने पूछा, ''क्या नाम है और अभिभावक

क्या करते हैं?

नायक प्रसन्न हो गया इसका उत्तर उसे रटा कर भेजा गया था ''सर, मेरा नाम... पुत्र... यहाँ अपने भाई के साथ रहता हूँ।'' वाक्य पूरा कर उसने राहत की साँस ली। उसे मालूम ही नहीं था कि शिक्षिका को मैडम कह कर संबोधित करते हैं, सर नहीं।

उसकी वेषभूषा देख कर शिक्षिका ने अगला प्रश्न किया, ''तुम्हारे भाई क्या करते हैं?''

''इन्कम टैक्स में बाबू हैं।''

इन्कम टैक्स शब्द का जैसा प्रभाव होना चाहिए, वैसा ही हुआ?''

टीचर का स्वर मुलायम हो गया। उसको सबसे आगे की दरवाजे के पास वाली सीट मिल गई। टीचर व उसके पति मशहूर कोचिंग चलाते थे, जिसे इन्कम टैक्स का नोटिस मिल चुका था।

कहावत है 'जाकी जैसी भावना, वाहि वही मिलि जाय।' टीचर को इन्कम-टैक्स में पकड़ और ग्रामीण नायक को विपरीत परिस्थितियों में सहारा मिल चुका था। विज्ञान में इसी को 'सिम्बायसिस' या 'सह-अस्तित्व' कहते हैं।

गाँव से आया नायक शहर की प्रत्येक नई चीज को परख रहा था। इन सब बातों से थोड़ा बहुत अभ्यस्त होने पर उसकी ड्रेस उसकी काया के अनुरूप लगने लगी थी। उसने अपने आस पास के वातावरण पर ध्यान देना प्रारम्भ किया। निष्कर्ष... शहरी कन्याएँ ग्रामीण बालाओं से अधिक आकर्षक होती हैं।

एक दिन कक्षा में अंग्रेजी की क्लास चल रही थी। परकटी टीचर सिर हिला-हिला कर पढ़ा रही थी। नायक का ध्यान विषय पर न होकर टीचर की देह-यष्टि पर था। उसने मन ही मन अपने से काफी बड़ी टीचर की तुलना गाँव की टेंटर सुंदरी से करी तो, उसको अपने ऊपर हँसी आ गई। हँसी हल्की सी आवाज के साथ चेहरे पर भी आ गई। टीचर ने ताड़ लिया कि नायक भटक रहा है। इस टीचर को इन्कम-टैक्स विभाग से कोई नोटिस नहीं मिला था। सो नायक को सारे पीरियड खड़े रहना पड़ा...। उसने दूसरी सीख ग्रहण की - सुंदर टीचर को निहारते समय कभी-कभी श्याम-पट (ब्लैकबोर्ड) पर भी निगाह डाल लेनी चाहिए।

गेम्स का पीरियड, कन्याएँ फील्ड में गेंद खेल रही थी। लड़के अपनी जिम्मेदारी पूरी मुस्तैदी से निबाह रहे थे। वे पूरे मनोयोग से लड़कियों पर ध्यान कर रहे थे। मजाल है कि कोई ऐक्शन जिसमें जरा सा भी अंगप्रदर्शन हो, उनकी आँखों से चूक जाय। हर लड़का ऐसे क्षण को कैद करने मे लगा था। जिस प्रकार फिल्मों के कुछ चुने हुए दृश्यों के स्टिल फोटोग्राफ बना कर पोस्टर पर चस्पा कर दिये जाते हैं, वैसा ही प्रयास करने में सभी लड़के व्यस्त थे। हमारा नायक भी इसी व्यापार में व्यस्त था। लो, अचानक एक बाला द्वारा फेंकी गेंद फील्ड के एक पेड़ पर अटक गई। खेल रुक गया। बालकों को भी रुकावट के लिए खेद था। कन्याएँ दुखी हो गई। सभी लड़के निष्क्रिय बने रहे। केवल हमारा नायक 'परित्राणाय' के परोपकारी भाव से, चपला चकित करने वाली गति से पेड़ पर चढ़ कर पक्षिराज को लजाने वाली स्पीड से गेंद उतार कर कन्याओं के सामने खड़ा हो गया। कन्याएँ उसे धन्यवाद दे रही थीं। उसका यह कृत्य लड़कों को ऐसा लग रहा था जैसे नायक कालिय-दह से गेंद ले आया हो। क्लास का दादा जिसका भाव मोदी राज के प्याज के भाँति ऊँचा और तासीर सहपाठियों की आँख में आँसू लाने वाली थी। वह भी इस घटना को घटित होते देख रहा था। दादा के मुँह से दिलजली आवाज में निकला, ''साला गोपियों के बीच बाँसुरी बजा रहा है।'' चमचों ने जान लिया अब नायक पिटने वाला है। कहानी में खलनायक का प्रवेश हो चुका था।

अगले दिन खलनायक ने फील्ड में अंजान बनते हुए एक लड़की को धक्का दे दिया। लड़की की किताबें बिखर गई। पीछे से आता हुआ नायक किताबें उठा कर लड़की को वापस कर ही रहा था कि उसके हाथ पर किसी ने जोर से प्रहार किया। किताबें हाथ से छुट गई। नायक ने घूम कर देखा, खलनायक की आँखों से शोले निकल रहे थे, ''साले, हीरो बनता है।'' कहने के साथ उसने एक मुक्का नायक के सीने पर जड़ दिया। फिर क्या था नायक पर घूँसों की वर्षा होने लगी। फिल्मों की फेदफुल हिरोइनों से उलट वह लड़की तत्काल झंझट स्थल से खिसक ली... लड़कियाँ वाकई में बहुत प्रेक्टिकल होती हैं। चौकीदार के मोबाइल पर गाना चल रहा था- 'दे दनादना।''

10-12 घूँसे खाने के बाद नायक को समझ में आया कि हिंसा का जवाब हिंसा से देना अब उसका कर्त्तव्य बनता है। पीटने वाले उसके

दाहिने हाथ से सावधान थे। पर वह भूल गए थे कि हमारा नायक लबड़हत्था या लेफ्टी था। उसका बायाँ हाथ उठा, एक लड़का धूल चाट गया। दाहिने हाथ ने दूसरे को सितारे दिखा दिया। बाएं हाथ को दोबारा मौका ही नहीं मिला। सारा मैदान खाली था। विलेन एंड पार्टी गधे के सिर पर सींग के मानिंद ओझल थी।

नायक ने सिकंदर महान् की तरह कक्षा में प्रवेश किया। कन्याओं ने तालियों से स्वागत किया। हमारा नायक कन्याओं का हीरो बन चुका था।

आगे की कथा जानने के लिए कॉलेज में मंचित एक अंग्रेजी के नाटक का जिक्र आवश्यक है। इस नाटक में एक पात्र एक घुटने पर बैठ अपनी महिला मित्र का हाथ थाम कर अपने दिल की बात कहता है। इस दृश्य ने हमारे नायक को विशेष रूप से प्रभावित करने के साथ ही गाइड भी किया। उसने इस रूमानी दृश्य को अपने मस्तिष्क में 'नोटेड फार फ्यूचर' का ठप्पा लगा कर ग्रहण किया।

एक रविवार को मोदी जी की 'मन की बात' गोष्ठी के बाद चौकीदार का मोबाइल में 'दिल से दिल की बात कही ना जाय' बज रहा था, नायक के दिल में भी मन की बात घुमड़ रही थी, जिसे दबाने के लिए उसने पानी पीने की ठानी। वह वाटर कूलर से पानी पी कर वह पलटा ही था कि उसे अपनी एक सहपाठी कूलर की ओर आती दृष्टिगोचर हुई। मन में मन की बात और दिमाग में नाटक के घुटने पर बैठे उस पात्र के अलावा वह सब कुछ भूल गया। वह एक घुटने पर बैठने की जगह दोनों घुटनों पर बैठ गया। फिर नाटक के ही अंदाज में, गीले हाथों से ही कन्या का हाथ पकड़ कर उसने अपनी पूरी बात कन्या पर उड़ेल दी। मन हल्का होते ही नायक को गाँव का वाकये की याद आ गई। उसने घबरा कर कन्या की ओर देखा... कन्या मुस्करा रही थी।. ... नायक का दिल उछल कर उसके मुँह में आ गया। उसे विश्वास हो गया अब 'मन की बात' के बाद 'चाय पर चर्चा' के चांस हैं।

❐❐❐

वसीयत

श्रीवास्तव साहब की फोटो पर माला पड़ी हुई थी, सामने एक दीपक जल रहा था और अगरबत्ती सुलग रही थी। दो पेडस्टल फैन ऐसे कोण से लगे थे कि हवा दीप-शिखा को आंदोलित किये बिना सामने बैठे शोकाकुल जनों को लग सके। उसने सोचा कि एसी होते हुए भी पेडस्टल फैन का खटराग क्यों...? परंतु तत्काल उसकी पैनी बुद्धि ने वजह भी ढूँढ निकाली - एसी से अगरबत्ती का धुवाँ हाल में ही घूमता रहेगा। कुछ लोगों को धुवें से एलर्जी हो सकती है। पर शायद नहीं। एसी चलाना ऐसे शोकाकुल माहौल में आचार विरुद्ध (अन-एथिकल) माना जाएगा। शोक हो या न हो, दुनियादारी भी कोई चीज है। यह सोच कर उसके चेहरे पर मुस्कुराहट आई जिसे उसने बलात् होंठों पर झलकने के पहले ही आत्मसात कर लिया। परंतु आँखों में तो उसका अक्स आ ही गया होगा, उसने फिर बगैर मुस्कुराये हुए सोचा। मन भी कितना चंचल है। जितना रोको उतना ही बेकाबू होता जाता हैं फिर एकाएक उसने आँख खोल कर चारो ओर देखा सभी लोग शांत मुद्रा में बैठे थे। तभी पंडित जी ने गंभीर ऊँची आवाज में 'ओम्' का उच्चारण किया और स्तब्धता भंग हो गई। सभी लोग उठने लगे और श्रीवास्तव साहब की पत्नी और पुत्र को धैर्य धारण की सलाह दे कर जाने लगे... जैसे वह न कहते तो परिवार वाले अधीर बने रहते।

सब लोग जब विदा हो गये तो काला कोट पहने वकील साहब को हल्की सी खाँसी आ गई... भला हो जो एसी बंद था, वर्ना वकील साहब का क्या हश्र होता। पर यह क्या, सभी लोग वकील साहब की ओर मुखातिब हो गए। वकील साहब सभी के ध्यान-बिन्दु बनने के बाद बोले, ''यहीं पढ़ दूँ या किसी अन्य कमरे में चलेंगे?'' तब उसकी समझ में आया कि वकील साहब को खाँसी आई नहीं थी वह तो ध्यान आकर्षित करने का सभ्य तरीका था... कितना सीखना है उसे अभी।

सब लोग एक छोटे कमरे में आ गए जहाँ एसी पहले से चल रहा था, वकील साहब ने अपनी फाइल खोली, ''हे भगवान्! पंडित जी के

गरुड़-पुराण के बाद अब वकील साहब भी कुछ ज्ञान देंगें...।'' तभी वकील साहब की आवाज आई, ''श्रीवास्तव साहब ने यह वसीयत पाँच-छह महीने पहले ही लिखवा ली थी। शायद उनको अपने अंत का आभास हो गया था। इस पर दो गवाहों के हस्ताक्षर भी हैं। गवाहों में एक उनके परम मित्र अस्थाना साहब हैं। यह वसीयत बाकायदा रजिस्टर्ड भी है। आप में से जो चाहे वह देख भी सकता है।''

किसी को उज्र नहीं था। सभी को मालूम था कि श्रीवास्तव साहब हर काम कितने करीने से करते थे।

वकील साहब ने गला साफ करके पढ़ना प्रारम्भ किया ''मैं फला-फला पुत्र सो एंड सो आज दिनाँक... को अपने पूरे होशो हवास में अपनी वसीयत करता हूँ ताकि मेरी मृत्यु के बाद परिवार में कोई बदमिजाजी न उत्पन्न हो।''

इसके बाद श्रीवास्तव साहब ने अपनी संपत्ति का जो ब्योरा दिया वह सुन कर सभी की आँखें चौड़ी हो गईं, और कुछ के मुँह में पानी भी आ गया। सभी सोच रहे थे कि वह इतनी बड़ी पोस्ट से भी नहीं रिटायर हुए थे जितनी कि उनकी संपत्ति थी, पर हाँ थे तो रेवेन्यू विभाग में।

उनका यह मकान जिसमें वह सेवानिवृत्ति के बाद रहते थे बाहर से साढ़े बारह सौ फिट का साधारण सा मकान दिखता था जो बाहर से मात्र सीमेंट से पुता था। अंदर प्रवेश करने के बाद ही उसके वैभव का अंदाजा लग पाता। महंगा पेंट, फाल्स सीलिंग, डिजाइनर प्रकाश व्यवस्था, हर कमरे में एसी और बाथरूम तो ऐसे कि एक बार घुसो तो बाहर निकलने का मन ही न करे। यह थी श्रीवास्तव साहब की यथार्थ सोच।

वकील साहब का संलाप चालू था, ''हालाँकि मेरा परिवार बहुत बड़ा नहीं है, इसमें मेरी पत्नी के अलावा एक पुत्री और पुत्र है जिनका विवाह हो चुका है और अच्छी जीविका अर्जित कर रहे हैं। तीसरी पीढ़ी में पौत्र-पौत्री, नाती-नातिनें भी है, परंतु वह सभी नाबालिग हैं। अपने बाबा/नाना को पता नहीं बड़े होने के बाद याद रख पाएंगे या नहीं इसलिए मैं उनमें से प्रत्येक बालक को पाँच लाख रुपया, प्रत्येक बालिका के नाम दस लाख रुपये की व्यवस्था करता हूँ। यह पैसा उनके अभिभावकों द्वारा फिक्सड-डिपॉजिट में रखा जाएगा और उनकी शादी पर ही उनको मेरी तरफ से भेंट किया जायेगा।''

''मेरे घर में जितने भी सेवक सेविकाएं हैं जिन्होंने वर्षों से परिवार के सदस्यों के भाँति ही हम दोनों की सेवा की है। इन सभी से मैं अत्यंत प्रसन्न हूँ, उनके नाम एक-एक लाख रुपया देता हूँ जो कि पाँच साल की एफडी के रूप में मेरी पत्नी के पास रहेंगे। यह उन प्राप्तकर्ताओं पर निर्भर करेगा कि वह पाँच साल बाद उसको कैश कराते हैं या फिर से जमा कर देते हैं यह लाभ उन्हें उसी स्थिति में मिलेगा यदि वह पाँच साल तक इस घर में सेवा में रहेंगे, अन्यथा नहीं।''

''...वेरी स्मार्ट'', उसने सोचा, ''बुड्ढे ने पाँच साल तक के लिए तो नौकरों को बाँध ही दिया। बुढ़िया के ऐश हैं।

इसके बाद वकील साहब ने संपत्ति का ब्योरा पढ़ना प्रारम्भ किया। उससे पता चला कि श्रीवास्तव साहब कितने प्रबुद्ध थे। रेवेन्यू विभाग धरती माँ का कितना हिस्सा किसके पास है, इसका ब्योरा रखता है और उनके स्वामित्व निर्धारित करता है। धरती के लाल होने के नाते वह धरती माँ का आर्थिक महत्त्व जानते थे। सो वह जहाँ भी तैनात हुए धरती माँ का कुछ हिस्सा अपने नाम करते रहे और शहर के बाहर स्थानांतरण होने पर उस धरती को सोने में बदलते रहे। उसने मन में अनुमान लगाया कि यदि 500 रुपये के मूल्य से उन्होंने स्वर्ण संग्रहण प्रारम्भ किया होगा तो आज तो सोना रु0 30,000 को छू रहा है।

श्रीवास्तव साहब ने लिखा कि उनके सभी बच्चे सब प्रकार से आत्मनिर्भर हैं इसलिए वह अपना सारा बैंक का धन, स्वर्ण, शहर के मकानात, शेयर और एफडी अपनी पत्नी के नाम करते हैं जो कि जीवन पर्यंत उसकी स्वामिनी रहेंगी। यह मेरी पत्नी पर निर्भर करता है कि वह मरणोपरांत वसीयत द्वारा या अपने जीवन काल में ही जितनी संपत्ति अपने वंशज अथवा अन्य किसी को भी, देने की हकदार होंगी। वह चाहे तो धर्म कार्य हेतु संपत्ति किसी भी संस्थान का दान भी करने को स्वतंत्र है।

...बुढ़िया 'करोड पत्नी' हो गई! पता नहीं उसकी कितनी लंबी उमर होगी... अभी तो ठीक ठाक ही दिखती है... अगर ज्यादा दिन चली तो पता नहीं किसको सारी दौलत सौंप दे।

वकील साहब ने वसीयत बंद कर पुत्र को सौंप दी जिसने बड़े आदर से अपनी माँ को दे दिया। माँ निर्विकार थीं, पता नहीं उसने यह

सब पूरी तरह से समझा भी या नहीं। वकील साहब चलने को हुए कि ''चाचा जी एक कप चाय पीने के बाद ही जायें।'' परिवार की बहू सिर पर आँचल करे बड़ी विनम्रता से खड़ी थी। ट्रे में चाय व श्रीवास्तव साहब के पसंदीदा बिस्कुट थे।

वकील साहब ने भरे गले से कहा, ''बहू ऐसे में चाय गले से उतरेगी?''

बहू ने सिर झुका कर कहा, ''आप पापा जी के समय कभी बगैर चाय पिये गये क्या? आज उनके न रहने पर अगर आप ऐसे चले गये तो उन्हें कष्ट होगा। और फिर अब तो आपका ही सहारा है हम लोगों को।''

वकील साहब के साथ सबकी आँखें छलछला आईं। वकील साहब ने बगैर किसी प्रतिवाद के चाय पी। चलते समय बहू के सिर हाथ रख कर गद्‌गद् स्वर में बोले, ''सुखी रहो बहू, ऐसी बहू ईश्वर सब परिवारों को दे।''

माँ को छोड़ सभी वकील साहब को बाहर तक छोड़ने गये। चलते समय वकील साहब ने सभी के चेहरों को अनुभवी निगाहों से पढ़ने की कोशिश की, पर उन्हें किसी के चेहरे पर असंतोष नहीं दिखा। वरना बाकी घरों में तो इतने में परिवार टूट जाते हैं कि मुझे तो बुड्‌ढे ने कुछ दिया नहीं - भाड़ में जाये परिवार।

मृत्यु चाहे कितनी भी बलवान क्यों हो, वह जीवन प्रवाह को नहीं रोक सकती। शोकाकुल परिवार भी धीरे-धीरे पटरी पर लौटने लगता है, जिसकी शुरुवात होती है पेट से। सो खान-पान की व्यवस्था प्रारम्भ हो गई। घर के 'लखपती' हुए सेवक अब अधिक ऊर्जा और तत्परता से काम कर रहे थे, फिर भी प्रबंधन की आवश्यता तो थी ही। यह भार घर की बहू ने ले लिया था। क्या खाना बनेगा, अम्मा को क्या पसंद है, बच्चों को ख्याल से लेकर ननद, नंदोई का सम्मान सभी तो वही संभाल रही थी। सभी, यहाँ तक स्वयं उसका पति उसके इस परिवर्तन से विस्मित था और निहाल हो रहा था। कहाँ इतनी नाजुक और फैशनेबल महिला और कहाँ यह जिम्मेदार गृहणी। इस परिवर्तन के पीछे शायद श्रीवास्तव के वाक्य ''बहू कुल की मर्यादा तुम्हीं से है।'' का योगदान रहा होगा।

रोटी के बाद रोजी जीवन का दूसरा सबसे बड़ा सत्य है। दो चार

दिन के बाद दामाद जाने की तैयारी करने लगा। माँ की सबसे ज्यादा चिंता बेटी को ही होती है। उसने भाई से पूछा, ''माँ का क्या होगा?''

बेटे ने गंभीरता से कहा, ''यहाँ पूरी व्यवस्था तो है ही। नौकर भी परिवारी जनों की तरह ही हैं, सो माँ जैसे पहले रहती थी वैसे ही रह लेंगी। मेरे साथ तो वह घर और शहर छोड़कर जाना ही नहीं चाहती।''

तभी बहू रास्ते का टिफिन लेकर आई और ननद से बोली, ''क्या बात चल रही है?'' नंदरानी ने बताया, ''भइया कह रहे थे कि माँ उनके साथ यह घर और मकान छोड़कर जाना नहीं चाहती। नौकर पुराने हैं सब जानते हैं सो माँ जैसे रहती थी वैसे ही रहेंगी। हम लोग बीच-बीच में आकर खोज-खबर लेते रहेंगे।''

''ऐसा कैसे हो सकता है? इतने बड़े आघात के बाद, इतनी जल्दी हम माँ को अकेले छोड़कर कैसे जा सकते हैं।'' सभी के तैयारी करते हाथ रुक गए। कुछ रुक कर बहू फिर बोली, ''आप लोग जाइये मैं अकेली माँ के साथ रहकर उनका ध्यान रखूंगी।''

सब लोग चौंक गए। उसके पति ने चौंक कर उसे देखा। सभी को अपनी आँख और कान पर विश्वास नही हो रहा था। वह बहू जो एक पल भी अकेले ससुराल में नहीं रहना चाहती थी, एकाएक बदल कैसे गई।

पापा जी ने मुझसे कहा, ''बहू कुल की मर्यादा तुम्हीं से है। सो मैं माँ को ऐसी हालत में अकेली छोड़कर नहीं जा सकती।'' पति ने धीरे से पूछा, ''बच्चों और उनकी पढ़ाई का क्या होगा? मैं उन्हें ऑफिस कार्य के साथ कैसे सम्हालूंगा?''

बहू, ''सुबह बच्चों को आया नाश्ता करा कर हमेशा की तरह तैयार कर देगी। स्कूल से बच्चे दीदी (ननद जी) के बच्चों के साथ इनके घर चले जाएँगे, शाम को दीदी इनका होम-वर्क अपने बच्चों के साथ करा देंगी। आफिस से लौटते समय आप बच्चों को वापस अपने साथ घर ले आइयेगा। दीदी के बच्चों को भी भाई बहनों की कंपनी मिल जाएगी। वीक-एन्ड्स पर आप बच्चों के साथ यहाँ आ जाना। कभी मैं मम्मी जी के साथ वहाँ घूम लूँगी।''

माँ ने जब सुना कि उनकी बहू उनके साथ ही रुक रही है, उन्होंने भावुक होकर प्यार से उसे गले लगा लिया। समय के साथ धीरे-धीरे

चीजें सामान्य होने लगी थीं। एक शाम को बहू ने कृत्रिम रोष दिखाते हुए सास से कहा ''आप दिन भर घर में ही बैठी रहती हैं। यह ठीक नहीं है। कल से सुबह-सुबह आप मेरे साथ मार्निंग वाक पर चलिएगा।'' सासु जी यह साधिकार आग्रह टाल नहीं सकी।

दूसरे दिन से सास-बहू की जुगल जोड़ी की मॉर्निंग वाक पार्क में आम बात हो गई। बहू जब बीच में सास को बेंच पर आराम करने बैठाती और उन्हें पानी पिलाती या जाड़ों में थर्मस से गर्मा-गर्म चाय पिलाती तो पार्क में टहलते सभी बुड्ढे बुढ़िया बड़े रश्क से इस सास-बहू की जोड़ी को देखते। कुछ मन मे सोचते होंगे कि काश, भगवान ने ऐसी बहू उन्हें भी दी होती।

कुछ दिनों के बाद बहू ने मोहल्ले में लेडीज किट्टी का आयोजन किया। पहली किट्टी की शुरुआत अपने घर से की। उसकी सास भी किट्टी पार्टी में मौजूद रहीं। काफी आवभगत करने के बाद उसने प्रस्ताव रखा कि हमारे घर की बुजुर्ग महिलायें अकेले घर में उपेक्षित पड़ी रहती हैं। यह ठीक नहीं। किट्टी में उन्हें भी आना चाहिए। इससे इनका मन बहल जायेगा और किट्टी की राशि भी बढ़ जायेगी। अन्य बुजुर्गों के आने से उसकी सास के साथ-साथ सभी वृद्ध महिलायें भी अपने को फिर से जिंदगी से जुड़ा महसूस करने लगीं।

कुछ दिन के बाद श्रीवास्तव साहब के प्रथम तल पर बने हाल में एक प्रशिक्षक की देख रेख में बुजुर्ग महिलाओं ने योग सीखना भी प्रारम्भ कर दिया। सबके लिए तो निःशुल्क था पर प्रशिक्षक की फीस व चाय का जिम्मा श्रीवास्तव परिवार पर ही था।

धीरे-धीरे सभी वय-प्राप्त महिलाओं के जोड़ खुलने लगे, इधर-उधर के स्पष्ट-अस्पष्ट वेदना (वेग एक्स एंड पेन्स) शांत होने के अलावा उनके स्वभाव में भी परिवर्तन आने लगा। छह महीने बाद जब बेटी घर लौटी तो अपनी माँ को देख कर लिपट कर बोली, ''अम्मा अब तुम पहले से बहुत ठीक हो, अब तो तुम्हारा बुढ़ापा लगता है कम हो रहा है।''

माँ ने बहू की ओर इशारा करते हुए कहा, ''यह सब तुम्हारी भाभी की सेवा का असर है वरना शायद मैं भी तुम्हारे पापा के पास पहुँच गई होती।'' भाभी की इतनी बड़ाई बेटी को रास नहीं आई, मन में कुछ खटास आई ही थी कि भाभी के शब्दों में धुल गई। ''नहीं दीदी, तुम मेरे

बच्चों का इतना ध्यान रखती हो तभी तो मैं यहाँ निश्चिंत हो कर अम्मा की सेवा कर पा रही हूँ। वास्तव में आपने बहुत सहयोग किया।''

अच्छे और बुरे समय का प्रकृति में चक्र हमेशा चला करता है। आज जो खुश है उसे कल गम अवश्य मिलेगा, यह शाश्वत सत्य है। श्रीवास्तव परिवार का भी सुख दो वर्ष से अधिक नहीं चल पाया। एक दिन सुबह लोगों को सूचना मिली कि श्रीवास्तव जी की पत्नी सोते-सोते ही स्वर्ग सिधार गई। बच्चे तो दूर थे। सबसे पहले पड़ोसी ही पहुँचे। सास का पार्थिव शरीर जमीन पर लिटाया हुआ था। सफेद चादर से सर से पाँव तक पूरा शरीर ढका था। पास ही बैठी बहू इस आकस्मिक आघात से विक्षिप्त सी हो रही थी। रोना नहीं रुक पा रहा था। लोगों ने सांत्वना देने का प्रयास किया, पर व्यर्थ। विगत दो वर्षों से सास बहू का संबंध प्रगाढ़ हो गया था। पर काल की गति निर्णायक होती है।

कुछ समय बाद सभी को बाहर कर दिया गया। थोड़ी देर बाद जब दरवाजा खुला तो लोगों ने देखा कि उनका शरीर ठीक वहीं पर लिटाया गया था जहाँ दो वर्ष पहले श्रीवास्तव का पार्थिव शरीर रखा था। मृतका के चेहरे पर हल्का सा मेकअप कर दिया गया था, हल्की लिपिस्टिक का आभास था। गले में गुलाब के फूलों की मालायें, पास में जलता दीपक और सुलगता लोबान था। मृत्यु के बाद चेहरे पर जो हल्की सी विकृति आती है वह भी मेकअप में छुप गई थी। फूल मालाओं से सजी मिसेज श्रीवास्तव ऐसी लग रही थीं मानों तीर्थयात्रा से लौटने के बाद उनका मालाओं से स्वागत होने के बाद वह आराम से सो रही हैं।

बच्चों के आने में देरी थी सो शरीर को शीशे के काफिन-फ्रीजर में सुरक्षित कर दिया गया। बेटा बेटी अपने परिवार के साथ आई। माँ को मृत देख वह बेहाल हो गये। अभी तो उन्हें विश्वास था कि माँ ने उनके साथ मजाक किया है। शायद वह परखना चाहती होंगी कि उनका कौन बच्चा कितनी देर में आता है। पर यहाँ तो माँ वाकई नहीं है। सभी ने प्रणाम किया।

बहू ने बताया कि माँ विद्युत् शव दाह-संस्कार चाहती थीं जहाँ कपड़े ज्यादा अस्तव्यस्त नहीं किए जाते हैं। इसलिए माँ को विद्युत संस्कार करने की व्यवस्था करायी गयी।

पार्थिव शरीर की अंतिम यात्रा के समय सभी की आँखें नम थीं, बच्चे रो रहे थे पर बहू की हालत तो सबसे दयनीय उसे कौन समझाये,

कैसे समझाये।

मिट्टी जाने के बाद उसने सारा घर धोया। नौकरों ने मदद की पर सास का कमरा उसने अपने हाथों से धोया। नहा धोकर सड़क की ओर खुलती खिड़की पर बैठ व्यग्रता से सबके वापस आने की बाट जोहने लगी। किसी ने उसे डिस्टर्ब नहीं किया। जब वह सब घर लौट आये और शांति से माँ की माला पड़ी फोटो के सामने बैठ गए तब ही वह राहत की लंबी साँस लेकर लाबी में आई।

दो साल पहले की सभी परम्पराएँ इस बार मिसेज श्रीवास्तव की माला पड़ी फोटो के सामने दुहराई गईं। ओम् उच्चारण के बाद सब लोग चलने लगे। इस बार सभी बहू को सांत्वना दे कर जा रहे थे। आखिर वही तो अंतिम दिनों में साथ रही। कुछ बुजुर्ग महिलायें बहू के सिर पर आँचल रह कर 'जुग जुग जीने' का आशीष देकर जा रही थीं। एक महिला ने अत्यंत भावुक होकर कहा, ''तुमने अपनी सास ही नहीं, हम सबकी धूमिल जिंदगी में रोशनी ला दी, अल्लाह तुम्हें सलामत रखे।''

वकील अंकल ने एक बार फिर वसीयत एसी कमरे में पढ़कर सुनाई। इस बार उन्हें ज्यादा देर नहीं लगी। मिसेज श्रीवास्तव ने बहुत संक्षेप में लिखा कि अपनी बहू की अथक लगन और सेवा से वह अपनी सारी चल-अचल संपत्ति अपनी बहू के नाम कर रही हैं।

किसी को आश्चर्य नहीं हुआ। केवल बेटी को पीड़ा हुई। इस पीड़ा के पीछे शायद यह पछतावा भी था कि काश, उसने माँ के साथ रहना स्वीकार किया होता। आखिर दो साल की ही तो बात थी। पर अब क्या... मालकिन तो भाभी हो गई।

इस बार चलते समय किसी ने चाय के लिए नहीं पूछा। वकील साहब ने चलते समय सोचा, पर अगले ही क्षण ध्यान आया कि इस बार बहू ही बेसुध है तो शिष्टाचार कौन करे। वकील साहब सिर हिलाते हुए अकेले बाहर निकल आये।

बेटी माँ के संस्कार के बाद ही चली गई। भाई के बच्चों को भी छोड़ गई। ननद को विदा करते समय बहू ने कहा, ''दीदी माँ के न रहने से यह मत सोचना कि तुम्हारा मायका खत्म हो गया। मेरे और तुम्हारे भइया द्वारा तुम्हें पहले से ज्यादा सम्मान व सत्कार मिलेगा।''

बेटी ने भाभी की आँखों को कुछ पढ़ना चाहा, पर प्यार के सिवा

उसे कुछ नहीं दिखा। वह सिर हिला कर चली गई।

बहू कुछ हफ्ते वहीं रुकी। सारी चल-अचल संपत्ति अपने नाम करा कर वह अपने पिता के साथ जाने को तैयार हो रही थी। शीशे के सामने उसे अपनी ननद की कही बात ''वाकई केवल चेहरे से ही किसी का व्यक्तित्व नहीं पहचाना जा सकता।'' याद कर उसके चेहरे पर एक मुस्कान आई, जिसकी कुटिलता देखकर वह स्वयं चौंक गई।

अगले क्षण उसी मुस्कान के साथ बहू के मुँह से निकला, ''अच्छा हुआ कि किसी ने सासू के गले की माला को नही हटाया... वरना फंदे का निशान तो बहुत गहरा था।''

❐❐❐

मासूम शिकार

'हंस' के एक अंक में मासूफ रजा की लिखी कहानी 'पतझड़ के शोक गीत' पढ़ कर एक युवक सदमे में आ गया। उसके मन में बार-बार यही प्रश्न घूमता कि क्या परिवार में ऐसा भी होना संभव है। माना कि मनुष्य ही सबसे सफल शिकारी है, पर क्या... वह घर में ही शिकार कर सकता है?

नई नौकरी, परिवार से दूर, किससे यह भाव शेयर करे, समझ नहीं पा रहा था। एक शाम अपने मित्र के घर आयोजित छोटी सी पार्टी में भी उसने धीरे से चर्चा की। उसको बड़ा आश्चर्य हुआ कि सभी ने कहा कि ऐसा ही होता है, खास कर संयुक्त परिवारों में। एक 'ज्ञानवान' साथी ने बताया कि इन परिवारों में शिक्षा का माहौल अमूमन उतना अच्छा नहीं होता था। पुश्तैनी जायदाद का एक मुखिया होता था और सारा परिवार उसी के सहारे चलता था। घर के अन्य पुरुषों के पास मुखिया के बताये गए काम के अलावा कोई काम नहीं रहता था। सारा समय ताश-पत्ता, हँसी-मजाक, प्रपंच और परनिंदा में ही बीतता था। हाँ, कुछ परिवार जिनमें सरस्वती की कृपा होती उनमें साहित्य गोष्ठियाँ अक्सर हुआ करती थीं। ऐसे परिवारों में दूरदराज के रिश्तेदार भी आते जाते रहते। ऐसे लोगों के पास कोई काम न होने की वजह से इन लोगों का महीना पंद्रह दिन से अधिक रुके रहना एक आम बात होती थी। जो प्रपंच में जितना निष्णात होता, वह मुखिया की चापलूसी में उतना ही आगे रहता और महिलाओं के बीच भी आसानी से घुलमिल जाने में उसे कोई दिक्कत नहीं होती। एक प्रकार से ऐसे लोग महिलाओं को बाहर की दुनिया की सूचना उपलब्ध कराने के गिने चुने माध्यमों में से एक थे। यह सूचनाएँ वह बड़े ही रोचक तरीके से सुनाते और साथ ही साथ अपने शिकार ढूँढते रहते थे। ऐसे लोग प्रौढ़ाओं में अधिक लोकप्रिय होते थे। ऐसी प्रौढ़ाओं के माध्यम से ही वह कम उम्र वाली लड़कियों तक अपनी पैठ बनाते थे।

युवक को लगा कि यह कहानी न हो कर पुरुष प्रधान समाज का

कुरूप चेहरा है कि जिस पर लोगों की दृष्टि कम ही पड़ती है। युवक ने पीड़ा से लगभग कराहते हुए कहा ''घर की बड़ी बूढ़ियों को क्या यह शोषण दिखाई नहीं पड़ता था?''

''इसकी वजह है कि उन महिलाओं ने इन किशोर पुरुषों का शोषण किया था। इसलिए उन दरिन्दों को किस मुँह से रोकेगी। जो कभी शिकार हुआ था वह अब स्वयं शिकार करने लगा। इसमें अचरज क्या?'' बोलने वाला व्यक्ति अभी तक एकदम चुपचाप बैठा था, बोलते समय उसके चेहरे पर आक्रोश के निशान थे। उसके इस कथन ने जैसे कमरे में विस्फोट कर दिया हो और इसके बाद पार्टी में स्तब्धता छा गई।

''आप ऐसी घिनौनी बात बोल भी कैसे रहे हैं?'', लोगों ने आक्रामक लहजे में पूछा।

''यह अत्याचार मैं स्वयं झेल चुका हूँ।'' युवक ने दूसरा वाक्-बम फोड़ा। युवक का चेहरा ग्लानि और आवेश से विवर्ण हो रहा था। अपने को संयत करते हुए फिर बोला, ''मैं गरीब परिवार से था और ऐसे ही परिवार में रह कर मैंने अपनी पढ़ाई पूरी की है।''

पार्टी में मौजूद डॉक्टर साहब ने वार्तालाप में हस्तक्षेप करते हुए कहा, ''आप लोग बिल्कुल आश्चर्य न करें। यह श्रीमान् बिलकुल सही कह रहे हैं। मैं स्वयं पहले समझता था कि लड़कों का शोषण मात्र पुरुष ही करते हैं पर वास्तव में ऐसा भी होता है जैसा इन्होंने बताया।''

एक विनोदी ने अर्थ भरी मुस्कान बिखेरते हुए डॉक्टर से पूछा ''क्या डॉक्टर साहब आपके साथ भी...?''

डॉक्टर ने उनके हास्य मिश्रित व्यंग्य नजर अंदाज करते हुए, ''नहीं मेरे साथ तो ऐसा नहीं हुआ, परंतु आप सब जानते होंगे कि डॉक्टर, वकील व पुलिस तीनों से समाज की कोई बुराई छुपी नहीं रहती।''

''एक बार ऐसे पारस्परिक शोषण की घटना मेरे सामने भी आई।''

''कॅरियर के शुरुआत में मैं एक छोटे जिले के अस्पताल में पोस्टेड था। नया-नया जोश, विवाह भी नहीं हुआ था। अत: चौबीसों घंटे अस्पताल और ऑपरेशन। छोटे जिलों में डॉक्टरों का सम्मान बहुत है। एक दिन आउट डोर में एक प्रौढ़ा अपनी बेटी को लेकर आई और बताया कि बेटी के पेट में ट्यूमर है। लड़की देखने में बहुत मासूम लग रही थी। उम्र लगभग 11-12 वर्ष। लड़की को लेट कर पेट दिखाने में किशोरी सुलभ

संकोच था, फिर भी माँ के आँख दिखाने पर उसने सकुचाते हुए धीरे से पेट खोल दिया। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, लगा जैसे लड़की पेट से थी। परंतु लड़की के भोलेपन को देख दिल गँवारा नहीं कर रहा था। फिर भी ध्यान रखते हुए जब मैंने उसकी माँ से इस बारे में पूछा तो वह विस्मित होते हुए बोली ''साहब अभी तो यह कन्या है, माहवारी भी नहीं शुरू हुई'' कहते हुए उसने अल्ट्रासाउंड दिखाया जिसकी रिपोर्ट में लिखा था कि लड़की के पेट में 'ओवेरियन ट्यूमर' है।''

मैंने झेंपते हुए कहा, ''ठीक है। दोनों हालत में इसे जनाने अस्पताल में लेडी डॉक्टर को दिखाना पड़ेगा।'' माँ ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, ''हुजूर, पहले मैं इसे वहीं लेकर गई थी। पर वहाँ तो आयाओं ने ही इतना उल्टा सीधा कहना शुरू कर दिया कि हम लोग रोकर लौट गए। बड़ी उम्मीद से हम आपके पास आएं हैं।''

लड़की के साथ उसका चाचा भी था जिसकी उम्र 30 के करीब होगी, बड़ी दयनीयता से बोला, ''हुजूर! लड़की जात है। जनाने अस्पताल में अगर लड़की को चाहे बुखार के लिए ही ले जाओ तो टोले मोहल्ले वाले खुसपुसाने लगते हैं कि 'हमल गिराने ले गए थे।' साहब बिटिया की जिंदगी खराब हो जाएगी, आप इसका मर्दाने अस्पताल में ही इलाज कर दो।''

लड़की की मासूमियत, अल्ट्रा-साउंड की रिपोर्ट से गाइड हो और अभिभावकों की आर्त याचना, जो कि मुझे अव्यवहारिक नहीं लगी, से मैं द्रवित हो गया और उसे ऑपरेशन के लिए भर्ती कर लिया। ऑपरेशन टेबल पर जब पेट खोला तो देखा बच्चेदानी में पूर्ण विकसित शिशु था।

हम सभी हिल गये। बच्चा तो मैं भी निकाल सकता था। पर सरकारी अस्पताल का एक निश्चित 'प्रोटोकाल' होता है। सो, जनाने अस्पताल की बड़ी डॉक्टर को बुलवाया गया। लेडी डॉक्टर काफी सीनियर व मृदु स्वभाव की थी। वह 'वाश' कर ऑपरेशन के लिए आई तो मास्क लगे होने के बाद भी सर्जन के चेहरे की ग्लानि को पढ़ लिया। उन्होंने सांत्वना देते हुए कहा, ''कोई बात नहीं डॉक्टर साहब, ऐसा कई बार होता हैं। हम शराफत में मरीजों के बहकावे में आ जाते हैं।'' सर्जन ने बड़ी दबी आवाज में अपना पक्ष रखा, ''मैम, इसके अल्ट्रासाउंड में ट्यूमर की रिपोर्ट थी।''

बच्चेदानी पर चाकू चलाते हुए बड़ी डॉक्टर तल्खी से बोली, ''यह

रिपोर्ट फेक (नकली) है, बच्चे'' और दस सेकेण्ड के अंदर ही उन्होंने बच्चा बाहर निकला लिया। नाल काट कर उसे नर्स के ट्रे में देने के बाद सर्जन से बोली, ''अब तुम इसे बंद तो कर दोगे? मेरे आउट डोर में बड़ी भीड़ लगी है।''

'बच्चे' शब्द की ममता में लीन, सर्जन मात्र हाँ में सिर ही हिला सका। इस गरिमामय डॉक्टर को वह धन्यवाद भी नहीं दे सका।

बड़ी डॉक्टर जाते-जाते शिशु को 'शिशु देख-भाल वार्ड' (नियो-नैटल यूनिट) भेजने का निर्देश दे गईं।

डॉक्टर ने देखा कि कमरे के लोग बड़ी तन्मयता से उनके किस्से को सुन रहे थे। वैसे भी सैनिकों और डॉक्टरों की कहानियों में लोग काफी दिलचस्पी लेते हैं। आश्वस्त होकर उन्होंने किस्सा जारी रखा।

शाम को बड़ी डॉक्टर को धन्यवाद ज्ञापित करने मैं उनके घर पहुंचा। बड़ी डॉक्टर ने बड़ी स्नेह से स्वागत किया। सेविका को आवाज देकर बोली, ''सर्जन साहब अकेले रहते हैं, इन्होंने शाम की चाय भी नहीं पी होगी। इन्हें बढ़िया सी चाय पिलाओ।'' कह कर मेरी ओर मुखातिब हुई। ''और सुनाओ काफी थके हुए लग रहे हो। क्यों इतना काम करते हो, सेहत का भी ध्यान रखा करो। ''सर्जन ''मैंम थकान काम से नहीं आती, काम के तनाव से आती है।''

बड़ी डॉक्टर ने हँसते हुए कहा, ''अरे तुम अभी भी उस केस के अपराध बोध से ग्रसित हो। ऐसा कौन है जिससे गलती नहीं होती। भगवान् भी गलती करता है। जन्मजात विकृत पैदा बच्चे इसके उदाहरण हैं।''

फिर कुछ रुक कर कहा, ''हर गलती वास्तव में एक सीख होती है। इस केस को जब तक तुमने क्लीनिकली सोचा तुम्हारी डाइग्नोसिस सही थी, परंतु जैसे ही तुमने अल्ट्रासाउंड देखा तुम्हारा विचार डगमगा गया। अल्ट्रासाउंड तो अब आया है। इससे पहले क्या हम केसेज को डायग्नोज नहीं कर पाते थे।''

मैंने सहमति में सर हिलाया।

''और तुमको तो मालूम है कि मेडिकोलीगल और ऐसे केसेज जहाँ बदनामी का डर हो, लोग झूठ बोल कर डॉक्टर से अपना काम निकालने की कोशिश करते हैं। खैर, तुम अभी नए हो यह सब दुनियादारी भी धीरे से सीख जाओगे। रहा यश-अपयश वह हरि हाथ।''

सर्जन, ''बात यश-अपयश की नहीं। मैंने इतनी बड़ी गलती की कैसे! मुझे इसी का अफसोस है।''

बड़ी डॉक्टर, ''इसे तुम यों सोचो - यह 'सत्कर्म' यदि तुमने न किया होता तो लड़की के अभिभावक उसे किसी दाई या झोला छाप के यहाँ ले जाते, जिसमें माँ और बच्चे दोनों की मौत हो सकती थी। यदि बच्चा बच भी जाता तो उसे यह लोग किसी कचरे के डिब्बे में फेंक देते या शायद बच्चे की हत्या भी कर देते। तुमने यह कर के दो जिंदगियों को बचाया है। तुमने अंजाने में ही एक पुण्य कार्य किया है।''

सर्जन जब अपने घर लौटा तो उसका विषाद खत्म हो चुका था। वह रात में ठीक से सो पाया।

अगले दिन मैंने प्रसूता की माँ को बुलवाया। साथ में लड़की का चाचा भी था। मैंने दोनों को धोखा देने के लिए डाँटा। माँ ने भी वही कहा जो बड़ी डॉक्टर ने कहा कि मुझे दो जानें बचाने या परिवार की इज्जत बचाने का पुण्य मिलेगा। इस पर मेरा क्रोध और बढ़ गया। मैंने उन्हें धमकाते हुए कहा, ''जिसको बच्चा हुआ वह लड़की नाबालिग है। इसका मतलब है कि यह दुर्घटना चाहे बच्ची की मर्जी से या बगैर मर्जी के, उसके साथ जो कुछ हुआ वह बलात्कार ही माना जाएगा। सच-सच बताओ क्या हुआ था वरना मैं पुलिस को सूचित करने जा रहा हूँ। इस लड़की के साथ कुकर्म किसने किया?''

पुलिस का नाम सुन कर दोनों डर गए। माँ चाचा की ओर इशारा कर वहाँ से जाने लगी, कि चाचा ने उसका हाथ पकड़ कर रोकते हुए कहा, ''मुझे अकेले छोड़ कर तू कहाँ जा रही है?''

पर माँ उसका हाथ झिटक कर चली गई। केवल चाचा ही मेरे सामने खड़ा था। उसके चेहरे पर कोई अपराध भाव न होकर एक रोष था।

''चाचा पिता समान होता है, ऐसा तुमने क्यों किया?''

वह कुछ बोला नहीं।

''घर में यह सब बहुत दिनों तक चला होगा क्या तुम्हारी भाभी (लड़की की माँ) को पता नहीं चला।''

''वह सब जानती थी, वह फुफकारा।''

''फिर वह अपनी बेटी का ही शोषण कर भी क्यों चुप रही?'' मैंने

जोर देकर पूछा।''

जैसे एक ज्वालामुखी उबल पड़ा, ''किस मुँह से करेगी? क्योंकि उसने ऐसी ही उम्र में मेरा भी शोषण किया था।''

❐❐❐

पोस्टमार्टम

सरकारी डॉक्टरों को जो कार्य सबसे अधिक अरुचिकर लगता है वह है पोस्टमार्टम या शव परीक्षण। ज्यादातर मेडिकल छात्र जीवित मरीजों से संबंधित विषयों में ज्यादा रुचि लेते है इसलिए मेडिकल करिकुलम में मेडिकल Jurisprudence विधिशास्त्र को एक अ-महत्त्वपूर्ण विषय माना जाता है। परंतु सरकारी सेवा में यह चिकित्सक की ड्यूटी का महत्त्वपूर्ण हिस्सा होता है। वैसे भी डॉक्टर जब मरीज के मर्ज की डाइग्नोसिस करता है तो वह एक जासूस की तरह ही मरीज द्वारा बताई गई परेशानियों का विश्लेषण करता है फिर शारीरिक परीक्षण द्वारा उसकी बीमारी का पता लगता है। यदि इतने पर भी डाइग्नोसिस नहीं बन पाती तो एक्सरे तथा खून आदि का परीक्षण करवा किसी निश्चित डाइग्नोसिस पर पहुंचता है। परंतु जब उसे यही जासूसी मरे हुए व्यक्ति पर करनी पड़ती है तो स्वाभाविक है कि उस कार्य को आनन्दपूर्वक नहीं करता। जो कार्य अरुचि से किया जाता है उसे संपादित करने में कठिनाई तो आती ही है तथा गुणवत्ता पर भी फर्क पड़ता है। फिर भी मृत शरीर के परीक्षण से अपराध के अन्वेषण में मदद करने में भी एक रोमांच का एहसास तो होता ही है। यह जरूरी नहीं कि पोस्टमॉर्टम की रिपोर्ट हमेशा पुलिस की theory को सपोर्ट करे, और यह भी संभव है कि कभी-कभी डॉक्टर की रिपोर्ट क्राइम स्टोरी को सपोर्ट तो करती है पर परीक्षण करने वाले डॉक्टर या पुलिस के विवेचना अधिकारी किसी सूक्ष्म मेडिकल तथ्य से अंजान होने के कारण वह उस पर ध्यान नहीं दे पाते और उस तथ्य को अनदेखा कर जाते हैं। ऐसे में डॉक्टर या पुलिस पर लापरवाही या बेईमानी का आक्षेप भी आ जाता है।

पोस्टमार्टम के लिए एक 16-17 वर्ष की लड़की का शव आया, जो कि स्टेशन पर एक लकड़ी के डिब्बे में पैक्ड पाया गया था। किसी ने डिब्बे पर 'चमड़े के बैग' लिखकर उसे चोपन के लिए बुक कर दिया

था। किन्हीं कारणों से वह डिब्बा ट्रेन पर लोड नहीं हो पाया और प्लेटफॉर्म पर ही पड़ा रह गया। दो चार दिन तक किसी का ध्यान उस डिब्बे की ओर नहीं गया। पर जब डब्बे से बदबू आने लगी तो लोगों को शक हुआ। डिब्बा हिलाया डुलाया गया तो उससे खून बहने लगा। पुलिस को सूचना दी गई। तय था कि अपराध हुआ है, इसलिए पुलिस ने पंचनामा कराया। पंचनामे में शव पर कोई बाहरी चोट के निशान नहीं मिले। शव काफी सड़ चुका था। पुलिस को लड़की के शरीर पर कोई चोट नहीं मिली इसलिए पंचनामें में राय बनी कि मृत्यु का कारण अज्ञात होने के कारण शव पोस्टमार्टम के लिए भेजा जाय जिससे मृत्यु के कारण का पता लगाया जा सके। शव पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया।

पोस्टमार्टम स्थल पर पहुँचते ही दुर्गंध आपका स्वागत करेगी, यह बदबू, गर्मी और बरसात में और भी असहनीय हो जाती है, क्योंकि इस मौसम में सड़न की गति काफी तेज हो जाती है। वैसे यह सड़न प्रक्रिया वास्तव में प्रकृति-चक्र का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। इसी के द्वारा मिट्टी का शरीर मिट्टी में मिल जाता है। साधारण मनुष्य ऐसे माहौल में एक मिनट भी खड़ा नहीं रह सकता। परंतु वहाँ के कर्मचारियों की रोजी-रोटी की मजबूरी उन्हें ऐसे वातावरण का अभ्यस्त होने को बाध्य करती है।

पोस्टमार्टम के कक्ष में आपको कई शव विभिन्न मुद्रा में दिखेंगे। कोई ऐसा लगता अभी बोल उठेगा, कुछ ज्यादा पुराने होने की वजह से अत्यधिक डीकम्पोज्ड होते हैं। पूरा शरीर फूला, हाथ पैर अकड़े हुए, बिलकुल पहलवानी अंदाज (pugilist posture)। कोई चेहरा फूल कर विकृत, जुबान, आँखें बाहर निकली हुई, प्राकृतिक छिद्रों से स्राव, कुछ शरीरों पर कीड़े (maggots) बिलबिला रहे हैं। कुल मिलाकर वीभत्स दृश्य की छटा। परंतु डॉक्टर और कर्मचारियों में इस रस के स्थायी-भाव 'घृणा' का पूर्ण अभाव। क्योंकि शव की प्रत्येक दशा एक वैज्ञानिक तथ्य उद्घाटित करती है, चिकित्सक को अनुमान लगाने में सहायता करती है कि मृत्यु कब हुई होगी। इसी प्रकार मैगट्स (maggots) की स्टेज से भी मृत्यु का समय पता चलता है। यदि शरीर के ऊपरी हिस्से में अकड़न जा चुकी है तो शव लगभग आधा दिन पुराना है, यदि पूरे शरीर से अकड़न जा चुकी है तो शव एक से डेढ़ दिन पुराना हो सकता है। हाँ, इसमें आधे दिन का इधर या उधर फर्क हो सकता है आदि आदि।

एक कवाल टाउन[1] के पोस्टमार्टम कक्ष से जुड़े एक मनोरंजक वाकये का जिक्र समीचीन होगा। उन दिनों एक वकील और नए पत्रकार बंधु सनसनीखेज खबरों के लिए (chasing the ambulance)[2] पोस्टमार्टम रूम का चक्कर लगाते रहते थे। एक रात को उनमें से एक ने अनधिकृत रूप से एक शव को देखना चाहा जो कि गैर कानूनी है। परंतु उनके साथ एक बाहुबली के होने से अकेला चौकीदार लाचार था। उसने सोचा जान है तो नौकरी है। अगर मना किया तो पत्नी के हाथ एक अदद मेडेल व मेरी फोटो को एक फूलों का हार ही मिलेगा। वह दुनियादार था इसलिए उसने मुँह मोड़ लिया। बाहुबली तो खैर रात में शव कक्ष में घुसने का साहस नहीं कर सके, परंतु दूसरे महोदय निडर थे- वह अंदर गये...। कक्ष में तमाम शव थे। कुछ एक के रिश्तेदारों ने शव खराब न हो तो इसके लिए बर्फ की सिल्ली का प्रबंध कर रखा था। अत: वहाँ भीषण गर्मी में भी कुछ ठंडक थी। सीलिंग फैन भी चल रहे थे। शवों के चेहरे ढके थे। उसने एक शव के चेहरे से चादर हटा कर टार्च डाली। पर यह क्या... लाश ने आँख खोल दी। बड़ी-बड़ी लाल-लाल आँखें। लाश उठकर बैठ गई...।

चौकीदार एक भयानक चीख सुनकर अंदर की ओर दौड़ा। परंतु गेट पर अंदर से भागते हुए उन महोदय से टकराया। दोनों गिर पड़े। उठने पर महोदय दरवाजे की ओर देख कर फिर चीखे। वह लाश दरवाजे पर खड़ी थी। वह भूत-भूत कह कर भागे। चौकीदार ने मुड़ कर देखा तो बाहुबली पहले ही मैदान छोड़ चुके थे। उसके बाद वह दोनों पोस्टमार्टम रूम के आसपास भी नहीं दिखाई पड़े। हुआ यूं कि, शव-विच्छेदन करने वाला कर्मचारी मदिरा सेवन के बाद पोस्टमार्टम कक्ष में बर्फ व पंखे की ठंडक में एक पलंग पर लेट चादर ओढ़ कर सो गया। उन महोदय ने उसे भी लाश समझकर उसके चेहरे पर टार्च डाली और उसके 'मदिर रक्तिम नयन' देखकर डर गए। वास्तव में यह उनके अन्तर्मन का भय ही था जो भूत के रूप में साकार हो गया।

1. KAVAL - कानपुर, आगरा, वाराणसी, इलाहाबाद, लखनऊ।
2. 'चेजिंग दि एम्बुलेन्स' सुप्रसिद्ध विधि-विशेषज्ञ 'नानी पालखीवाला' के मुंबई कॉलेज का कन्वोकेशन भाषण, जिसमें उन्होंने accident के केस में compensation हेतु मरीज लॉ के संबंधियों लिटिगेशन हेतु प्रोत्साहित न करने के लिए वकीलों से अपील की है।

मई या जून का महीना था। पोस्टमार्टम में पाया गया कि शव एकदम सूखा हुआ था और decompose हो चुका था। शव की खाल अलग हो रही थी, सिर के बाल भी अपने आप जगह छोड़ चुके थे व दाँत अपने सॉकेट में ढीले हो गए थे। कुल मिलाकर शव चार पाँच दिन पुराना लग रहा था। डॉ0 को परीक्षण में एक बात एकदम अजीब लगी। साधारणतया डिकम्पोज शव के फेफड़े व वक्ष गुहा में पानी इकट्ठा हो जाता है। पर इस शव के फेफड़े भी एकदम सूखे लग रहे थे। कुल मिलाकर ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे मृतका को कई दिनों से पानी नहीं मिला हो। शरीर पर किसी भी प्रकार की चोट का कोई निशान नहीं था। गले पर भी ऐसा निशान नहीं मिला जिससे पता लगे मृतका का गला घोंटा गया हो। गले के अंदर की हाएड नाम की हड्डी भी टूटी नहीं थी, जो कि अमूमन गला दबाकर मारे जाने की स्थिति में टूट जाती है। यह किस्सा उस जमाने का है जब किसी लड़की का अफेयर पाया जाता था तो माँ-बाप उसकी पिटाई करके सबक सिखाने के लिए एक कमरे में बंद कर देते थे, और उसका खाना पीना बंद कर दिया जाता था। शव के बहुत सूखे होने व शरीर के अंदर भी पानी न मिलने से यही संभावना बन रही थी कि हो सकता है कि किसी कारण माँ बाप ने या अभिभावक ने ऐसी ही किसी गलती पर सजा दी हो और भीषण गर्मी में पानी न मिलने से लड़की की मृत्यु हो गई। घर वालों ने ही घबराहट में या डर के मारे शव को पैक कर चोपन के लिए पार्सल कर दिया हो, ताकि चोपन में लड़की की शिनाख्त न हो पाने की वजह से अपराधी भी नही पकड़ा जा सकेगा।

परंतु इसी समय मार्चरी सहायक ने बताया कि पुलिस वालों को सूचना मिली है कि अपराधी पकड़ा जा चुका है और उसने थाने में अपराध स्वीकार कर लिया है। उसने लड़की का गला दबा कर मारा।

शव का बारीकी से एक बार फिर परीक्षण किया गया, गले को अंदर, बाहर से बारीकी से देखा गया। गले पर चोट का कोई निशान नहीं था। पुलिस की रिपोर्ट पढ़ी गई। लिखा था पूरे शरीर या गले पर कोई चोट का निशान नहीं पाया गया। मार्चरी सहायक का 30-35 वर्ष का अनुभव था। उसने दबी जुबान से राय दी, ''जब अपराधी ने कुबूल कर लिया है, गला दबाने की रिपोर्ट देना ही माकूल होगा।'' डॉक्टर ने सोचा पुलिस कभी-कभी केस बनाने के लिए दबाव डालती है और ऐसे हथकंडे इस्तेमाल करती है। अनुभवी सहायक चुप रहा। डॉक्टर ने रिपोर्ट लिखी

(cause of death could not be ascertained. Viscera preserved) मृत्यु के कारण का निश्चय नहीं हो सकता अतएव आंतरिक अंग परीक्षण के लिए संरक्षित किए गए।''

दूसरे दिन नाश्ते के समय डॉक्टर ने अखबार में खबर देखी, ''रिपोर्ट के 24 घंटे के अंदर ही कातिल पकड़ा गया'' तो चिंतित हो गया। तत्काल ही वह अस्पताल रवाना हो गया। अस्पताल पहुँचते ही खबर मिली ''बड़े साहब ने याद किया है।'' बड़े साहब ने गंभीरता से पूछा, ''क्या बात है?' सुबह-सुबह सिविल-सर्जन ने क्यों बुला भेजा।?''

'कल एक अटपटा पोस्ट-मार्टम किया था। संभवत: उसी के लिए बुलाया हो।'

चलते-चलते बड़े साहब ने फिर पूछा, ''तुमने तो ठीक ठाक ही किया होगा।'' डॉक्टर हामी में सिर हिलाता हुआ सिविल-सर्जन आफिस चल दिया।

सिविल-सर्जन का अर्दली, जो कि साधारणतया साहब से मिलवाने के लिए 'टिप' की उम्मीद करता था, आज बड़े तपाक से चिक हटाता हुआ बोला ''साहब इंतजार कर रहे हैं।''

बलि के बकरे से सभी सहानुभूति रखते हैं, यह सोचता हुआ डॉक्टर सिविल सर्जन के सामने हाजिर हुआ।

सिविल सर्जन ''कप्तान साहब बहुत खफा हैं। पोस्ट-मार्टम में तुमने ऐसा क्या लिख दिया?''

डॉक्टर ने पूरी बात बताई। सिविल-सर्जन ने पोस्ट-मार्टम रिपोर्ट लेकर आने को कहा।

रिपोर्ट देखकर सिविल-सर्जन ने कहा, ''इतनी डिकम्पोज्ड बॉडी में बाहरी चोट मिलने का प्रश्न ही नहीं। यदि तुमने लिखी होती "then I would have taken you to task" (मै तुम्हें दंडित करता।)

अधिकारी को अनुकूल पाकर डॉक्टर आश्वस्त हुआ। रिपोर्ट देख कर साहब ने सिर टेढ़ा कर चश्मे से प्रश्नवाचक निगाहों से घूरते हुए पूछा, ''हायड बोन ठीक से देखी थी?''

''हाँ सर, बिल्कुल इटैक्ट थी।''

थोड़ी देर तक वैसे ही घूरने के बाद बोले, ''कप्तान साहब दुबारा

पोस्ट-मार्टम कराना चाहते हैं। मैं क्या कहूँ?''

डॉक्टर ''कराने दीजिए सर, पर एक शर्त पर। पोस्टमार्टम या तो आप स्वयं करे अथवा मुझे भी उस समय उपस्थित रहने की परमीशन दें।''

यह सुन कर सिविल-सर्जन ने डॉक्टर को बैठने को कहा, और पास बैठे एक सीनियर व अनुभवी चिकित्सक से पूछा, ''यदि आपने यह परीक्षण किया होता तो क्या करते?''

अनुभवी चिकित्सक ने तत्काल कहा, ''सर, मैं तो चूल से चूल मिलाकर लिख देता। कोई झंझट ही न होता।''

सभी चुप।

सि. सर्जन ने कप्तान से फोन पर कहा, ''मैंने पोस्ट-मार्टम की रिपोर्ट देख ली, डॉक्टर को भी एग्जॉमिन कर लिया है। कोई गलती नहीं दिखाई देती है। पोस्ट-मार्टम रिपोर्ट ठीक है।''

एस.पी. ने कुछ उधर से बोला।

सि. सर्जन सख्ती से बोले, ''तुम्हारे आई.ओ. ने भी तो शरीर पर कोई चोट का निशान नहीं पाया। हाँ-हाँ रि-पोस्टमार्टम तो तुम करवा ही सकते हो, पर यदि उसमें भी कुछ साक्ष्य दुबारा भी नहीं मिला तो तुम्हारा केस तो चौपट होगा ही साथ में विभाग की बदनामी तब ज्यादा होगी।.. . पोस्टमार्टम मैं खुद करूंगा।''

सि. सर्जन एस.पी. से, ''देखो ऐसा करो, अपने आई.ओ. को मेरे पास भेजो। मैं देखता हूँ कि क्या हो सकता है।''

फोन रख कर उन्होंने डॉ0 से कहा, ''आई.ओ. चार बजे आ रहा है तुम भी चार बजे आओ। पूरी तैयारी के साथ आना।''

चार बजे शाम सि. सर्जन का आफिस- सि. सर्जन ने आई.ओ. से पूछा, ''क्या तुम्हें मृत शरीर पर कोई चोट मिली थी?''

आई.ओ., ''नहीं सर, शव बहुत सड़ा था, मैंने दूर से देखा था। हो सकता है चोट रही हो।''

सि. सर्जन, ''जिस बॉडी के तुम पास नहीं जा सके, मेरे डॉक्टर ने पास से देखा गले के अवयव काट कर देखे उसे तुम गलत करना चाह रहे हो?''

''मेरा केस खराब हो जायेगा सर।''

''नहीं, मुझे पूरा वाकया बताओ। देखें तुम्हारी मदद कैसे हो सकती है।''

आई.ओ. ने कहा, ''कस्बे का एक रईसजादा शहर में पढ़ने आया और पूरा मकान किराए पर ले लिया। बड़ी शान से रहता, दिल खोल कर पैसे खर्च करता, पर लंगोट का कच्चा था। उसके पैसे और शानो-शौकत की वजह से उसके पड़ोस की दो-तीन लड़कियों से नाजायज संबंध हो गए। मृतका भी उसमें से एक थी। एक बार मृतका ने उस लड़के को दूसरी लड़की के साथ देख लिया तो काफी नाराज हुई। दोनों में झगड़ा होने लगा। एक बार वह लड़की आई और शादी के लिए फसाद करने लगी। लड़के ने साफ मना कर दिया और खुद लड़की के चरित्र पर टिप्पणी की। इस पर लड़की ने लड़के के झापड़ मार दिया। लड़का बताता है कि गुस्से में लड़की का गला पकड़ लिया...। पर यह क्या... लड़की एकदम से उसके हाथों में झूल गई। लड़का खुद सदमे में है कि बगैर ताकत लगाए लड़की कैसे मर गई?''

''अपराधी की पहली प्रतिक्रिया अपना अपराध छुपाने की होती है। लड़के ने एक बड़ी पॉलीथीन में लड़की के शरीर को लपेटा, लकड़ी के डिब्बे में पैक कर उसे चोपन के लिए बुक कर दिया। वह कहता है कि बुक करने वाले कर्मचारी को यदि उसने सुविधा शुल्क दे दिया होता तो डिब्बा गाड़ी पर लोड होकर चोपन पहुँच गया होता, और उस पर आँच न आती। सुविधा-शुल्क देने में उसे आपत्ति नहीं थी। वह मात्र ज्यादा देर वहाँ रुकना नहीं चाहता था।''

सि. सर्जन, ''तो तुम उस तक पहुँचे कैसे?''

''हुजूर जैसा मैंने बताया, लड़का शौकीन था। उसने अपने नाम की कई मोहरें बनवा रखी थी। टेस्ट करने के लिए उसने उस पॉलिथीन, जिसमें उसका फ्रिज पैक होकर आया था, तथा जिसमें लड़की की लाश पैक की, पर भी कभी एक ठप्पा लगा रखा था। उसकी इसी गलती से हमें उसका नाम और पता मिल गया, और हमने उसे पकड़ लिया।''

सि. सर्जन, ''पर अखबार में तो तुमने कोई और ही स्टोरी दी है? कि तुमने पड़ोस के बच्चों से पूछा कि यह दीदी कहाँ-कहाँ जाती थी, और उन बच्चों की मदद से तुम कातिल तक पहुँचे। पॉलिथीन और मोहर

का तो क्राइम-स्टोरी में तुमने जिक्र भी नहीं किया।''

''सर, थोड़ा बहुत तो इधर-उधर करना ही पड़ता है। हँ-हँ-हँ।''

सि. सर्जन डॉ0 से, ''मृत्यु कैसे हुई, जब गले पर कोई दबाव ही नहीं डाला गया?''

डॉ0, ''सर, वेजो-वेगल शाक से।''

''हूँ- कहाँ पढ़ा?''

''सर Adams[1] में। मोदी[2] में डिटेल में नहीं दिया। गला दबाने पर 33 डेथ वेजो-वेगल शाक से होती हैं। वेजो-वेगल से मृत्यु होने के लिए गले पर ज्यादा दबाव आवश्यक नहीं है। गले के बीच का उभार जिसे साधारण भाषा में एडम्स एपल या टेटुआ कहते हैं, पर कभी-कभी हल्की सी चोट या दबाव पड़ने से एकाएक दिल की गति रुक सकती है। सर, टेक्स्ट बुक में दिया है 'even holding throat of an agitated person may cause death by sudden stoppage of heart and respiration' (यहाँ तक कि, किसी उत्तेजित व्यक्ति का गला पकड़ने से ही दिल और साँस रुक सकती है।) यदि उस समय कोई जानकार प्राथमिक उपचार देने वाला न हो तो मृत्यु हो जाती है। ऐसी स्थिति में गले पर चोट के निशान अथवा struggle marks (छटपटाने, प्रतिरोध करने के निशान) का पाया जाना आवश्यक नहीं है, जैसा कि इस केस में हुआ।' वहीं गला घोंटने से asphyxia (दम घुटने) से मृत्यु होती है, में गले पर अत्यधिक दबाव की जरूरत होती है। मृत्यु के पहले पीड़ित दो ढाई मिनट तक छटपटाता है, स्ट्रगल करता है। कातिल के चेहरे को भी नोच सकता है। ऐसी स्थिति में मृतक और मारने वाले, दोनों के शरीर पर चोट के निशान पाये जाते हैं। गले के ऊपर दबाव व नाखून के निशान व गले के अंदरूनी भाग में रक्त-स्राव, कंजेशन मिलेगा और अधिकतर केसेज में हायड बोन टूट जाती हैं पर वेजो-वेगल डेथ में ऐसा कुछ नहीं होता।''

सि. सर्जन, ''समझे दरोगा जी। आपका केस एकदम दुरुस्त है। मुजरिम का बयान कोर्ट में करा दें, पॉलिथीन जिसमें बॉडी लिपटी हुयी मिली उस लगी मोहर का तस्किरा अपनी केस डायरी में अवश्य करें,

---

1. मेडिको-लीगल और जूरिस की एक सुप्रसिद्ध रिफरेंस बुक जिसे डॉक्टर ही नहीं बल्कि ballistics-एक्सपर्ट (आग्नेयास्त्र विशेषज्ञ) भी बाइबिल मानते हैं।
2. मेडिकल कोर्स में पढ़ाई जाने वाली मेडिकोलेगल की सबसे प्रचलित टेक्स्ट-बुक।

उसे सबूत की तरह कोर्ट में पेश कीजिये आपको कप्तान साहब के सामने शर्मिन्दा नहीं होना पड़ेगा। आपका केस स्ट्रांग है।''

दरोगा और डॉक्टर दोनों एक साथ ही बाहर निकले। डॉक्टर के चेहरे पर राहत के भाव थे तो दरोगा के चेहरे पर कुटिल मुस्कान।

पेशी के दिन डॉ0 पूरी तैयारी के साथ कोर्ट पहुँचा। कोर्ट में भीड़ देख कर ऐसा लगता था कि शहर की आधी आबादी मुकदमा ही लड़ रही है। हर उम्र के लोगों की भीड़। युवा से ढलती उम्र के वकील गाउन पहने टहल रहे हैं। सिपाही किसी को हथकड़ी व किसी को रस्सी से बाँधे अथवा केवल हाथ ही पकड़े ले जा रहे थे। कोर्ट में दाखिल होने पर दो सीढ़ी ऊँचे डायस पर पीठासीन-अधिकारी की ऊँचे बैक वाली कुर्सी। उसके सामने बड़ी मेज के अगल-बगल अहलमद और पेशकार की कुर्सी। डायस को पब्लिक से अलग करने हेतु लकड़ी का जंगला जिस पर लाल कपड़ा बँधा था। यह कपड़ा इसलिए लगा था कि जनता कोर्ट कर्मचारियों से अदान-प्रदान न कर सकें। परंतु इस लाल कपड़े में पेशकार की कुर्सी के पास हाथ डालने भर के छेद बना दिये गये जिनसे मुद्रा-विनिमय की पूरी सहूलियत थी। पीठासीन अधिकारी के पीठ के पीछे 'वादकारी का हित सर्वोच्च है' लिखा था। पर उसे केवल वादकारी ही देख रहे थे। कोर्ट के कर्मचारियों की तो वहाँ दृष्टि ही नहीं जाती थी।

डॉक्टर को गवाही के लिए बुलाया गया, शपथ दिलाई गई- पर यह क्या? वहाँ उससे किसी ने वेजो-वेगल शाक के बारे में नहीं पूछा। न ही किसी ने यह पूछा कि क्या गले पर चोट के निशान की अनुपस्थिति में भी मौत हो सकती है आदि आदि। यहाँ पर उस केस को ओपेन एंड शट केस मान लिया गया था। सरकारी वकील ने उससे बड़ी लापरवाही से कहा- ''डॉ0 साहब, लिखवा दीजिए कि शव परीक्षण में शव के गले या शरीर पर कोई चोट का निशान नहीं पाया गया।''

पर डॉ0 ने अनुरोध कर एडवान्स्ड डिकंपोजिशन के चिन्ह नोट कराये। क्योंकि उसे बताया गया था कि यह केस अपनी में हाई-कोर्ट भी जा सकता है, जहाँ केवल दस्तावेज (records) पर ही बहस होगी। यदि रिकार्ड्स पर डिकंपोजिशन का ब्योरा नहीं होगा तो पोस्टमार्टम में लापरवाही बरतने के आक्षेप पर उसके खिलाफ प्रतिकूल टिप्पणी भी हो सकती है।

अंत में वही हुआ। केस पूरी तौर से छूट गया। क्योंकि शव लपेटने

वाली पॉलिथीन पर मोहर का कोई जिक्र नहीं आया, न ही आरोपित का बयान (164 के तहत) ही कराया गया। इसलिए आरोपित कोर्ट में अपने पुलिस को दिये बयान से मुकर गया। यदि पॉलिथीन पर मुहर का जिक्र रिकार्ड पर होता तो आरोपित की लाश पार्सल करने में लिप्तता सिद्ध होती, और यही लिप्तता जुर्म भी सिद्ध करने में सहायक होती। पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। केवल एक ही वादकारी के हित का ध्यान रखा गया। दूसरा वादकारी-मृतका का परिवार गरीब था।

वास्तव में आरोपी के पकड़े जाने व मुकदमा शुरू होने में बहुत लंबा समय गुजर जाता है। इस दौरान तफतीश करने वाले भी कई बार बदल जाते हैं, जिससे अन्वेषण में तारतम्यता नहीं रह जाती। अपराध करने के तुरंत बाद अपराधी में एक अपराध-बोध होता है जिसके तहत ही वह अपने जुर्म का इकबाल करता है। यह अपराध बोध कुछ दिनों तक उसके चेहरे पर भी परिलक्षित होता है, जिसे देख कर कोर्ट ही क्या कोई भी जान लेगा कि अपराध उसी से हुआ है। परंतु जब ज्यादा समय बीत चुकता है तो अपराध की भावना लुप्त हो ही जाती है बल्कि अपराधी और बोल्ड हो जाता है, जिससे वह कोर्ट में ज्यादा विश्वास के साथ झूठ बोलता है। कोर्ट दुविधा में पड़ जाती है। अपराधी छूट जाता है, और वह फिर एक और अपराध करने के लिए तैयार रहता है।

❐❐❐

सोने की बिल्ली
(Felicide)

शहर के बड़े अस्पताल के सर्जन की पत्नी को पहला बेटा (?) होने को था। पर बेटा ही क्यों? बेटी क्यों नहीं? डॉ0 साहब नियमित रूप से पूरी चैत्र और शारदीय नवरात्र भर दुर्गा का पाठ करते थे। 12वें अध्याय में देवी का आश्वासन है ''सर्व बाधा विनिर्मुक्तो धन-धान्य सुतान्वित: मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति नहि संशय:।'' इस पर डॉ0 साहब का पूरा विश्वास था कि सुत ही होगा।

शहर में कई बड़े सरकारी अस्पताल थे। पर प्राइवेट अस्पताल का ग्लैमर ही और होता है। अत: डॉ0 साहब ने एक नामचीन लेडी डॉ0 के यहाँ डिलिवरी कराने का निश्चय किया। पर सभी चीजें वैसी नहीं हो पाती जैसा हम चाहते हैं। ऐसा ही सर्जन साहब के साथ हुआ। डिलिवरी के संभावित तिथि के पहले ही ट्रीटिंग लेडी डॉ0 का इंतकाल हो गया। डॉ0 साहब का तबादला उसी शहर में दूसरे अस्पताल में हो गया। दूसरा अस्पताल रेफेरल अस्पताल (सारे प्रांत के बीमा अस्पतालों से केस उसी अस्पताल में रिफर होते थे) था, इसलिए डॉ0 साहब अपने काम में व्यस्त हो गए, और शिफ्टिंग की सारी जिम्मेदारी बेचारी उनकी पत्नी पर आन पड़ी। इस कार्य में पत्नी के मायके वाले बहुत काम आये। यह अस्पताल मेडिकल कॉलेज के पास था। इसी कॉलेज से डॉ साहब भी पढ़े थे, काफी जान पहचान थी अत: डिलीवरी वहीं कराने का निर्णय किया।

गाइनी विभाग में पहुँच कर तो डॉ0 साहब का दिल गार्डेन-गार्डेन हो गया। उनकी पढ़ाई स्टूडेंट्स अब हाउस सर्जन थी, जिन डॉक्टरों को उन्होंने चाकू पकड़ना सिखाया, घाव सिलना सिखाया- आज सीनियर डॉक्टर हो चुकी थी और कंसल्टेंट की निगरानी में उन्हीं को डिलीवरी करानी थी। इतने नमस्कार, कि पत्नी भी खुश हो गई। हाँ, नमस्कार के साथ लेडी डॉक्टरों की मुस्कुराहट पत्नी को उतनी अच्छी नहीं लगी।

प्राइमरी चेक-अप हो गया। एक्सपेक्टेड डेट के पहले ही वी.आई.पी. 'दीपिका' वार्ड भी एलाट हो गया। इसकी चाभी परमानेंटली लेबर रूम में रख दी गई। जिससे जरूरत पड़ने पर शीघ्र उपलब्ध हो सके। खैर, लेबर पेन शुरू हुए। पत्नी सीधे लेबर रूम पहुँचा दी गई। डॉक्टरनियाँ मुस्तैदी से देख भाल करने लगीं। डॉक्टर साहब दीपिका वार्ड में सामान रखवाने पहुँचे। वार्ड खोला गया। पहले से ही साफ-सुथरा कर रखा गया था। पर यह क्या...? लाइट जलते एक बड़ी काली बिल्ली बिजली की फुर्ती के बाहर भाग गई। डॉ0 साहब का दिल धक्क से हुआ। विचलित होकर उन्होंने सास जी से कहा- ''यह तो अच्छा नहीं हुआ।''

सास खुले दिमाग की थी। वह अंधविश्वास पर यकीन नहीं करती थी। बोली, ''भइया यह जीव-जन्तु अस्पताल में मरीजों के दिये खाने पर ही पलते हैं। बंद कमरे में तो बिल्ली आसरा ले ही लेती है। आप काली बिल्ली का वहम मत पालिए।''

डॉ0 साहब सास से तो कुछ नहीं बोले पर वह वार्ड में बिल्ली मिलने से हिल गए थे...।

जनाने अस्पताल में साफ-सफाई के लिए काफी स्टाफ तैनात रहता है। खास कर लेबर-रूम में। रक्त से सने कपड़े, रुई व प्लैसेन्टा (खेड़ी, नारा-झोरा मांस का आवरण जिसमें शिशु सुरक्षित रहता है, और प्रसव में बच्चे के साथ बाहर आ जाता है) आदि जिसको कायदे से जमीन में गाड़ दिया जाना चाहिए, कर्मचारी लापरवाही से इधर उधर डाल देते हैं। अस्पताल में बेटोक घूमती बिल्लियाँ इन्हें खाकर तगड़ी तो हो ही जाती है साथ 'लागुन' हो जाती हैं। नवजात शिशु के शरीर से भी प्लैसेन्टा की खुशबू आती रहती है। कभी-कभी अकेले शिशु को पाकर उसे प्लैसेन्टा समझ कर शिशु पर भी अटैक कर देती हैं। पिछले महीने ही कई महीने के कई नवजात इसी तरह बिल्ली द्वारा घायल किए जा चुके थे।

बच्चे के होने के पहले इलाजकर्मी लेडी डॉक्टर की मृत्यु, ट्रान्सफर और अब बिल्ली के आतंक के बीच काली बिल्ली का कमरे में आवास...। डॉक्टर साहब का परेशान होना उचित भी था। डॉ0 साहब की परेशानियों का अंत नहीं था। एक कनिष्ठ लेडी डॉक्टर ने आकर बताया कि ओ.टी (ऑपरेशन के कमरे) में ऑक्सीजन नहीं है। ऑपरेशन की स्थिति में ऑक्सीजन की जरूरत तो पड़ेगी ही। डॉ0 साहब के ताल्लुक काम आए, दिल वाले अस्पताल से ऑक्सीजन मिल गई।

जच्चा-बच्चा अस्पताल में आपको लगभग साहित्य में वर्णित सभी रस दिख जाएँगे, जैसे - जब मरीज अस्पताल पहुँचता है तो सभी के दिल में उत्सुकता और उत्साह होता है। प्रसव पीड़ा के साथ यह चिंता से उत्पन्न भक्ति और करुणा का रूप ले लेता है जो प्रसव उपरांत वात्सल्य और शांत रस में परिवर्तित हो जाता है। कभी कर्मचारियों या स्टाफ की कडुवी जबान की वजह से वीर अथवा रौद्र रस प्रकट होता है तो कभी अत्यधिक मरीजों की संख्या से अथवा सफाई की कमी से दुर्गंध, गंदगी की वजह से वीभत्स वातावरण भी परिलक्षित हो जाता है।

डॉ0 साहब के केस में करुण और भक्ति रस की स्टेज चल रही थी, कि लेबर रूम से उनकी पत्नी का बुलावा आया। जब वह ड्यूटी पर होते और उन्हें विशेषज्ञ के रूप में प्रसूति-गृह में काल किया जाता था तब वह बेझिझक लेबर रूम में चले जाते थे, परंतु आज वह चिकित्सक की हैसियत से अलग स्थिति में होने की वजह से पहले अन्य मरीजों की पर्दे की व्यवस्था के बाद ही लेबर रूम में गए। पत्नी ने आँखों में आँसू भर कर कहा ''बहुत पीड़ा है। जरा डॉक्टरों से बात करो, मेरे बाद आई महिलाओं की डिलिवरी यह लोग निपटाती जा रही हैं केवल मेरे केस में देर लगा रही हैं।''

पास ही खड़ी डॉक्टर हँसते हुए बोली ''भाभी जी उन सभी महिलाओं का बच्चे पैदा करने के अनुभव आपसे बहुत ज्यादा हैं। कोई चौथा और कोई पाँचवा बच्चा जन रही हैं। आप भी भगवान न करे चौथा बच्चे के लिए आओगी तो आपकी भी क्विक सर्विस होगी।''

करुण रस का वातावरण हास्य के पुट से हल्का हो गया।

डॉ0 की स्थिति बड़ी अजीब होती है। सभी लोग पहले से ही कह रहे थी की वीआईपी होने से बेवजह ऑपरेशन होने की संभावना ज्यादा होती है। भइया देखना कहीं ऐसे ही सर्जरी न हो जाए- आदि, आदि।

बहरहाल हुआ वही जिसका डर था। बच्चा दुनिया में आने को तैयार नहीं था। नीचे आने के बजाय बार-बार ऊपर लौट जाता था। डॉक्टरो ने कहा हो सकता है (तब अल्ट्रासाउंड की सुविधा नहीं थी) बच्चे के गले में नाल का फंदा पड़ा हो इसलिए नीचे नहीं आ पा रहा है। डॉक्टरों का अनुभव-जन्य अनुमान ठीक निकला। ऑपरेशन करना पड़ा। डॉ0 साहब की एक सहयोगी बेहोशी की डॉक्टर थी और इस संभावना का पूर्वानुमान

कर वह लेबर रूम में पहले से ही मौजूद थी। ऑपरेशन हुआ। पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई। सब प्रसन्न थे। सिवाय पिता के। सबने डॉ0 से उनकी अन्यमनस्कता का कारण पूछा। कुछ मित्रों ने मसखरी की, ''बच्चे की सूरत पिता से नहीं मिलती इसलिए डॉ0 साहब का दिल बैठ गया।'' कुछ देर शांत रहने के बाद उन्होंने बात शेयर की। और बिल्ली के आतंक के बारे में सबको अवगत कराने के बाद वह बोले, ''अब तो बच्चे को वार्ड में ले जाना होगा, जहाँ आतंकी बिल्ली पहले से ही डेरा डाले है। इस समय कोई और वार्ड खाली नहीं है। मजबूरी है।''

डॉ0 साहब की सास व पत्नी की बड़ी बहन ने आश्वासन दिलाया कि वह बच्चे का रातो-दिन ध्यान रखेंगी। भगवान ने चाहा तो सब ठीक होगा। डॉ0 साहब कृतज्ञता से भर गए।

तब प्राइवेट वार्ड में भी कूलर या एसी नहीं होते थे। जून की उमस भरी गर्मी, कमरे में दो पलंग। एक पर प्रसूता व दूसरे ढाई फिट के पलंग पर बच्चे की नानी और मौसी बच्चे को बीच में रख कर बारी बारी से सोती जागती रहती थीं। डॉ0 साहब को पत्नी के पूर्व निर्देश थे कि आपको मेरे साथ ही रहना होगा। पति के रहने से पत्नी ज्यादा आश्वस्त रहती है। पर रात में डॉ0 साहब लेटें कहाँ? डॉक्टर भइया क्या जमीन में सोएँगे? सभी चिंतित थे। इस प्रश्न के आते ही पत्नी करवट लेकर सो गई या सोने का नाटक करने लगी। प्रश्न वहीं का वहीं रहा। तभी लेडी-डॉक्टरों का झुंड नाइट राउंड पर आया। सभी एक स्वर से बोली, ''अरे इनको सोने की क्या जरूरत है। हम लोग यहीं बरामदे में बैठ कर ड्यूटी करेंगे, गप्प लगाएंगे, चाय-पानी करेंगे, जब कॉल आएगी तो जाकर देख आएंगे। ड्यूटी चाहे यहाँ बैठ कर या ड्यूटी रूम में लेट कर। रात बात करते कट जाएगी। क्यों डॉक्टर साहब अभी कुछ साल पहले तक हमलोग इसी तरह तो ड्यूटी पर रात गुजार देते थे, हैं ना...?''

यह प्रस्ताव कान में पड़ते ही पत्नी कुनमुनाई...। डॉक्टर साहब को मजबूरी में हाँ कहना पड़ा- बहुत दिनों के बाद एक बार फिर रात की ड्यूटी हँसी ठहाको में कब बीत गई पता ही नहीं चला।

पर अगले दिन सुबह भयानक गर्मी से भी ज्यादा श्रीमती जी का पारा गरम था। एक तो सद्य-प्रसूता पत्नी, वह भी जिसने बेटा जना हो और मायके वाले साथ हो- कितना fatal combination (घातक-संयोग)। डॉ0 साहब नित्य क्रिया का बहाना करके ही अपने को बचा पाये।

अगली रात डॉ0 साहब ने खुद ही फर्श पर चटाई बिछा कर लेटना तय किया और डॉक्टरों के नाइट राउंड के पहले लेट कर सोने का नाटक करने लगे। डॉक्टरनियाँ आईं। डॉ0 साहब को नीचे लेटा देख कर बोली, ''च्च-च्च-च्च! डॉ0 साहब कैसे जमीन पर लेटे हैं।

दूसरी ने कहा, ''कल हम लोगों ने रात भर इनको सोने नहीं दिया इस कारण आज बिचारों को जमीन पर ही नींद आ गई।''

तीसरी, ''अरे तो घर ही चले जाते।''

कमरे से बाहर निकलते चौथी डॉक्टर जो शादी-शुदा होने के वजह से अनुभवी थी, की आवाज सुनाई दी ''अरे बड़े-बड़े शादी के बाद जोरू के गुला...।'' और जोर की हँसी।

डॉ0 साहब ने जमीन पर लेटे लेटे इतने जोर से आँखें मींची की आगे के शब्द दिमाग तक नहीं पहुँच सके।

डॉ0 साहब ने अगले दिन चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों से बिल्ली मरवाने की बात की। सबने कहा, ''कोई बिल्ली मारने को तैयार नहीं होगा। कहते है बिल्ली मरने से बड़ा पाप लगता है। प्रायश्चित में बिल्ली के वजन के बराबर सोने की बिल्ली दान देनी पड़ती है। इतना सोना कहाँ से आए?''

अथारिटीज से बिल्ली आतंक या cat menace की बात की। वहाँ पता चला कि नगरपालिका ने कहा कि उनके यहाँ कुत्ता पकड़ने का दस्ता तो है, पर बिल्ली पकड़ने की कोई व्यवस्था नहीं है। वहाँ शायद 'सोने की बिल्ली दान' ही अड़चन रही होगी।

मरता क्या न करता। मौसी और नानी बीच में लेटे शिशु की बारी-बारी से जाग कर पहरेदारी करती रहीं, डॉ0 साहब जमीन पर बिस्तरनशीन रहे, लेडी डॉक्टर च्च-च्च-च्च करती रहीं। जच्चा और बच्चा दोनों ही सकुशल घर आ गए।

घर पर पुत्रोत्सव के धमाल के बाद जब डॉ0 साहब बेटे को टीका-करण के लिए अस्पताल ले गए तो विशेष कर बिल्ली के आतंक के बारे में जानने हेतु महिला विंग गए। उन्होंने पूछा कि अब उस बिल्ली का आतंक कैसा है? सिस्टर व डॉक्टरों ने बताया कि वह तो आपके जाने के एक हफ्ते के अंदर ही मार दी गई।

डॉ0 साहब को सुखद आश्चर्य हुआ।

उन्होंने अपनी समझ से बड़ा अच्छा मजाक किया, ''अरे तो सोने की बिल्ली के दान का क्या हुआ? मुझे क्यों नहीं बुलाया, मुझसे अच्छा पंडित आपको कहाँ मिलता?

सिस्टर- ''एक मरीज जिसको 14 साल के इंतजार के बाद बच्चा हुआ था, के रिश्तेदार ने बिल्ली को मारने हेतु रु0 200 के इनाम की घोषणा की (उस समय यह बहुत बड़ी रकम मानी जाती थी। एक डॉ0 की शुरूआती सैलरी रु0 300 होती थी।) ईनाम की रकम सुनकर दो घंटे के अंदर ही सभी कर्मचारियों ने घेर कर बिल्ली को मार दिया।''

डॉ0 साहब- ''वाह क्या नायाब तरीका निकाला। इनाम किस कर्मचारी को मिला?''

सिस्टर- ''सभी कर्मचारी आपस में लड़ने लगे कि बिल्ली को मैंने मारा। नौबत मारपीट तक पहुँच गई। जब तक वह फैसला हो कि बिल्ली को किसने मारा तब तक मरीज मय बच्चे के अस्पताल से जा चुका था।

इस प्रकार बिल्ली का आतंक बगैर ईनाम या बगैर 'सोने की बिल्ली' दान के ही समाप्त हो गया।

❐❐❐

सहृदयता

आठवें दशक की शुरूआत में रायबरेली जिला एक बार फिर पूरे भारत की नजर में चढ़ने लगा था। जनता सरकार की करारी हार के बाद कांग्रेस पुनः दिल्ली के तख्त पर काबिज थी, जबकि प्रदेश में अभी भी कांग्रेस से इतर सरकार थी। गर्मी के दिनों में विधान सभा के चुनाव होने थे। इमरजेंसी के बाद रायबरेली के विधानसभा के नतीजे लोकसभा के नतीजों से एकदम उलट थे। तब रेडियो बीबीसी ने रायबरेली वासियों की राजनैतिक बुद्धि का लोहा मानते हुए तारीफ की थी कि जनता ने लोकसभा व विधानसभा के चुनावों में संतुलन रखा। इस चुनाव में सबकी नजर थी कि कहीं ऐसे ही लोकसभा से उलटे नतीजे इस चुनाव में न हों। कांग्रेसतर पार्टियाँ भी इसी गणित से उत्साहित थीं। रायबरेली में दोनों की साख दाँव पर थी।

ऐसी गर्मी में प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी का चुनावी दौरा घोषित हुआ। सरगर्मी अब टॉप गियर पर पहुँच गई थी। पीएम को प्रतापगढ़ से रायबरेली के सलोन आना था। सलोन की मीटिंग के बाद रास्ते में कई मीटिंग करते हुए बाराबंकी के हैदरगढ़ में चुनावी सभा को संबोधित करते हुए इंदिरा जी को उसी दिन वापस लौटना था। बड़ा हेक्टिक शेड्यूल था।

पूरा प्रशासन दुरुस्त और चौकन्ना। सभी विभागों को आवश्यक निर्देश मिल चुके थे। दो रोज पहले से काफिले का रिहर्सल भी हो रहा था, जिसका जिला अस्पताल की एंबुलेंस को निहायत ही जरूरी हिस्सा माना जाता था। पीएम की आवती के दिन फायरब्रिगेड के व अन्य गाड़ियों के साथ एंबुलेंस को भी निर्देश थे कि निर्धारित समय के चार घंटे पहले रैली-स्थल पर मुस्तैदी से तैनात हो जाएँ।

प्रोटोकाल के अनुसार एंबुलेंस में एक सर्जन, एक फिजीशियन, एक लेडी डॉक्टर, एक नर्स (महिला प्रधाानमंत्री के लिए) एक नर्सिंग सहायक व इमरजेंसी मेडिसिन्स का एक बड़ा बक्सा, ईसीजी मशीन,

ऑक्सीजन सिलेण्डर आदि काफी तामझाम रहता था। डॉक्टरों को यह ड्यूटी बड़ी ही अरुचिकर लगती थी। पर नए युवा सर्जन के आने से थोड़ी स्थिति भिन्न हो गई थी। सभी लोग पिकनिक के मूड से निकलते थे। हँसी मजाक के साथ-साथ एंबुलेंस में खाने पीने की व्यवस्था से बोझिल माहौल काफी रोचक हो जाता था। सर्जन यह कह कर सभी को उत्साहित करते कि जब कष्ट अनिवार्य और अपरिहार्य हो जाये तो उसको भी एंज्वाय करना चाहिए। प्रशासनिक अमले को भी तपती गर्मी में 'शीतल जल' केवल एंबुलेंस से ही मुहैया हो पाता था। इसकी एवज में रास्ते भर डॉक्टरों के चाय-नाश्ता, कोल्ड-ड्रिंक का प्रबंध सुनिश्चित हो जाता था। वीआईपी किट तो वीआईपी के लिए सील हो जाती थी पर सर्जन अपने हैंडबैग में कुछ फुटकर दवाएं अलग से लेकर चलते थे जिसे वह ड्यूटी पर लगे अधिकारियों, कर्मचारियों में मुक्त हाथों से बाँटते थे। कुल मिला कर एंबुलेंस काफिले में काफी पापुलर हो गई थी।

उस दिन हम लोगों को अपराह्न 12 बजे सलोन सभा स्थल पर पहुँचने का निर्देश मिला। हमें मुख्यालय से 11 बजे तक चल देना चाहिए था। एंबुलेंस व हम सभी 11 बजे सन्नद्ध, परंतु फिजीशियन महोदय नदारद। बहुत सीनियर थे, लगभग चिकित्साधीक्षक के समकक्ष। उनको सूचना भेजी गई। उत्तर आया इतनी जल्दी जाकर क्या करेंगे। हम सब चुप।

वैसे फिजीशियन की कोई गलती भी नहीं थी। जिले के अकेले फिजीशियन, पब्लिक हमेशा घेरे रहती थी। किसको मना करें किसको छोड़ें, यह दुविधा भी उनके सामने अवश्य होगी। होते करते फिजीशियन महोदय 2 बजे पधारे। बोले, ''अरे 45 मिनट में पहुँच लेंगे। तो भी मीटिंग से एक घंटा पहले ही पहुँच जाएँगे।'' सर्जन ने कहा, ''हम सब तो हुकुम के गुलाम हैं। आदेश मिला 11 बजे चल दो, हम तैयार। इस समय आप वरिष्ठतम हो आपकी आज्ञा सर माथे पर।'' सभी हँसने लगे। वातावरण जो इंतजार करते बोझिल हो चुका था हल्का गया। गाड़ी ने स्पीड पकड़ी। झकरासी निकल गया। नर्स व महिला डॉक्टर की आँखें बोझिल होने लगी। चलती गाड़ी में नींद की झपकी आना बहुत स्वाभाविक है पर उस ऊँघने में लोगों की क्या भंगिमा बनने लगती है, यह गौर करना भी काफी रोचक होता है। वह महिलाएं बेचारी इसी डर से झपकी भी नहीं ले पा रही थी, कि फिजूल में सबको हँसने का बहाना मिल जाएगा। सब कुछ

ठीक ही चल रहा था कि एकाएक एंबुलेंस ने अजब तरीके से घुरघुराना शुरू कर दिया। जब तक हम कुछ समझे-समझे गाड़ी 'डेड-स्टाप' हो गई। सरकारी एंबुलेंस के ड्राइवर मात्र ड्राइवर ही होते हैं, उन्हें गाड़ी की डॉक्टरी नहीं आती। पुरुषों ने एंबुलेंस को धक्का मार कर स्टार्ट करने की भरजोर कोशिश की, पर एंबुलेंस... 'पादमेकं न गच्छामि' के अपने इरादे पर दृढ़। ड्राइवर नर्वस, हम सब खास कर हमारे फिजीशियन, सब से ज्यादा नर्वसियाए हुए थे। एंबुलेंस 3:30 तक भी पहुँच जाती तो कोई कुछ न पूछता, परंतु काफिले में एंबुलेंस का ही न होना एक अक्षम्य अपराध माना जाता... क्या करें...? ड्राइवर भुनभुना रहा था, ''इसीलिए टाइम से चल देना चाहिए। 'कुटाईम' चलने से अनिष्ट होती है।''

तभी रायबरेली की तरफ से एक ट्रक आता दिखा। रास्ते में गाड़ी खराब होने पर देखा गया कि ट्रक ड्राइवर बहुत सहायक होते हैं। हमने ट्रक को रोकने का इशारा किया। ड्राइवर बड़ा जड़ीला था मगर महिलाओं को देखकर रुक गया। हमने उससे विनती की कि वह सारे लाव-लश्कर के साथ हम सबको सलोन तक पहुँचा दे। वह बोला, ''पर इतने लोग बैठोगे कैसे?'' हम लोगों ने कहा कि पुरुष वर्ग सामान के साथ पीछे डाले पर बैठ लेंगे। केवल महिलाओं को आगे बैठा लो। परंतु उसने अपने सहयोगियों (संभवत: क्लीनर्स) को पीछे बैठने को कह डॉक्टरों को भी आगे ही एकोमोडेट करने को तैयार हो गया।

ट्रक काफी ऊँचा था, इसलिए महिलाओं को चढ़ने की सुविधा के लिए इमरजेंसी किट का बड़ा बक्सा रखा गया था जिस पर पैर रख महिलाएं चढ़ सकें। यह प्राब्लम साल्व हो गई। नर्स जो आसानी से चढ़ गई, पर लेडी डॉक्टर ने बक्से पर से भी ट्रक चढ़ने को मना कर दिया। अजीब झंझट। महिला को अकेले भी नहीं छोड़ सकते। महिला डॉक्टर लाख समझाने व फिजीशियन के भुनभुनाने से भी ट्रक पर चढ़ने को राजी नहीं हो पा रही थी। तभी सर्जन को सारा माजरा समझ आ गया। नर्स तो स्टाकिंग्स पहने थी इसलिए उसे इतने ऊपर चढ़ने में कोई एतराज नहीं हुआ, पर लेडी डॉक्टर तो साड़ी में थी। सर्जन ने कहा, ''हम लोग पहले बैठ जाते हैं, सहायक को भी हटा दिया गया, तब डॉक्टर साहिबा आसानी से चढ़ गईं।''

गाड़ी चल पड़ी लंबी साँस ली। फिजीशियन ने सर्जन का हाथ दबाते हुए कहा, ''तुझे यह आइडिया कैसे आया?''

सर्जन मुस्कराते हुए धीरे से बोला, ''सर्जन और फिजीशियन में यही अंतर है, सर।''

ट्रक ड्राइवर ने हम सबको सलोन की मेन रोड पर ही सामान के साथ उतार दिया। चलते समय वह बोला, ''आप लोगों को मैं इन्दिरा जी के नाम पर ले आया, वरना मुझे राजनीतिज्ञों से नफरत है।''

हम सबने उसको धन्यवाद के साथ विदा किया।

पर अब हम रैली स्थल तक कैसे पहुँचे? यह बड़ा कष्ट का प्रश्न था। सलोन में किसी सवारी के मिलने की भी कोई उम्मीद नहीं थी। हम सब ऊहापोह की स्थिति में ही थे कि प्रधानमंत्री का मोटरकेड आता दिखा। सड़क के दोनों ओर जनता इन्दिरा जी का अभिवादन कर रही थी पर हम लोग सीएमओ साहब की कार ढूँढ रहे थे। एकाएक डीएम साहब की कार रुकी बाई तरफ बैठे डीएम साहब ने पूछा, ''यहाँ कैसे?''

इसके पहले कि हम लोग कुछ बताएँ उन्होंने हम लोगों को गाड़ी पर बैठने का इशारा किया। बगैर समय बर्बाद किए इमरजेंसी का बक्सा गाड़ी की डिक्की में रखा गया। दोनों डॉक्टर व वार्ड-ब्वाय आगे ड्राइवर के साथ व दोनों महिलाए पीछे कलक्टर साहब के साथ बैठीं।

गाड़ी का ड्राइवर व फिजीशियन महोदय अच्छी काया के थे अत: जगह ज्यादा घेरते थे। ड्राइवर की जगह निश्चित थी इसलिए आगे चार लोग बैठने से सबसे ज्यादा कष्ट फिजीशियन महोदय हो ही हुआ। पर आखिर गलती भी उन्हीं की ही थी। गाड़ी चल दी। जब उन्होंने मुड़ कर पीछे देखा तो गाड़ी में सीएमओ साहब पहले से ही विराजमान थे। उन्होंने बड़ी दर्द भरी आवाज में कहा, ''स्वास्थ्य विभाग की गाड़ियों को आज के ही दिन खराब होना था।''

हम लोगों को तब समझ आया कि उनकी भी गाड़ी ऐन वक्त पर धोखा दे गई जिससे उन्हें भी कलक्टर साहब की गाड़ी में लिफ्ट लेनी पड़ी।

रास्ते में एंबुलेंस खराब होने की सूचना पाकर कलक्टर साहब ने तत्काल ही प्रतापगढ़ से मोटरकेड के साथ आए सीएमओ प्रतापगढ़ को वाकी-टाकी से निर्देश दिया कि रायबरेली की एंबुलेंस हैदरगढ़ जाने की स्थिति में नहीं है, इसलिए प्रतापगढ़ की एंबुलेंस ही प्रधानमंत्री के कनवाय के साथ हैदरगढ़ जाएगी। सलोन में एंबुलेंस ड्राइवर को छोड़ सारा

रायबरेली का स्टाफ व किट प्रतापगढ़ की एंबुलेंस में कनवाय को फालो करेगा।

उन दिनों डीजल की भी भारी कमी थी। कलक्टर साहब ने डीजल लेकर एक गाड़ी रायबरेली से हैदरगढ़ आने की व्यवस्था भी की ताकि हैदरगढ़ में प्रतापगढ़ की एंबुलेंस को लौटने के लिए पर्याप्त मात्रा में डीजल उपलब्ध हो सके। कलक्टर साहब ने जितनी देर में यह व्यवस्था की तब तक सलोन का रैली स्थल आ गया। वह बगैर कुछ कहे वह अपने प्रशासनिक कार्य में लग गए। हम लोग भी बगैर किसी का ज्यादा ध्यान आकर्षित करते हुए प्रतापगढ़ के एंबुलेंस पर शिफ्ट कर गए।

आगे का किस्सा काफी सुखद रहा। प्रतापगढ़ का ड्राइवर जो ड्यूटी बढ़ जाने से कुछ 'आफ मूड' में था वह भी रास्ते में रेवेन्यु विभाग की खातिरदारी से बाग-बाग हो गया। उसके स्वयं के जिले में वीआईपी ड्यूटी पर डॉक्टरों की ऐसी खातिरदारी नहीं होती थी।

हमलोग काफी रात गुजरे रायबरेली वापस लौटे।

सुबह अस्पताल पहुँचते ही सीएमओ साहब के सामने सभी की पेशी हो गई। उन्हें तब तक एक-एक खबर मिल चुकी थी। सभी को प्यार से डाँट मिली (सीएमओ साहब बहुत भले थे)। हाँ, उन्होंने यह जरूर कहा कि अगर कोई और डीएम होता तो सबके सब नहीं तो कम से कम फिजीशियन महोदय तो अवश्य नप जाते क्योंकि देरी उन्हीं की वजह से हुई तथा चिकित्साधीक्षक को 'प्रतिकूल प्रविष्ट' मात्र इसलिए मिलती की एंबुलेंस टाइम से रवाना क्यों नहीं हुई। वीआईपी ड्यूटी में इतना मार्जिन केवल इसीलिए दिया जाता है कि ऐसी आकस्मिकताओं से समय रहते ही निपटा जा सके।

पूरी टीम को ताईद किया गया कि कलक्टर साहब को धन्यवाद देकर आश्वस्त करो कि आइंदा ड्यूटी मुस्तैदी से निभाई जाएगी।

डाँट खाने के बाद हम सबका आत्मविश्वास पाताल में था। ऐसे में डीएम के यहाँ पेशी। फिर भी आत्मग्लानि में तपते हुए हम डीएम ऑफिस पहुंचे - पर यह क्या... कलक्टर साहब ने बड़ी गर्मजोशी से हम लोगों का स्वागत किया और कल की ड्यूटी भली प्रकार करने पर बधाई दी और चाय भी पिलाई। सर्जन ने दबी आवाज में कहा, ''पर हम लोग तो कल की गड़बड़ी के लिए आप से माफी माँगने आये थे।''

कलक्टर साहब- ''डॉक्टर साहब आप लोग किस प्रकार ट्रक रोक कर सभा स्थल तक पहुँचे, यह काबिले तारीफ है। हाँ, यदि आप न पहुँचते तो अवश्य गलती करते। सही समय पर सही निर्णय लेकर आपने आई हुई बाधा को पार कर लिया।''

यह सोचना बेमानी होगा कि कलक्टर साहब को देरी क्यों कर हुई इसका इत्तिला नहीं होगी। यह उनका बड़प्पन ही था कि उन्होंने हमें लज्जित होने से बचा लिया।

वैसे कहानियों में व्यक्ति (करेक्टर) की पहचान बताना वर्जित है पर आज तीन दशकों के बाद उन सहृदय कलक्टर का नाम नहीं बताने पर मैं अपने को अपराधबोध से मुक्त न कर सकूँगा।

यह सहृदय कलक्टर थे श्री शंभुनाथ जी।

❐❐❐

दहेज अभिशाप या अभिशप्त

चौथी कक्षा पास करने के बाद गौरी को बेहतर शिक्षा का वातावरण मिले इस लिए ब्रह्मदत्त रायबरेली से लखनऊ आ गए। रायबरेली के कॉलेज के ब्रह्मदत्त की प्रिसिंपलशिप के दौरान अच्छे परीक्षाफल की वजह से उन्हें वहाँ भी इंटर कॉलेज में वरिष्ठ अध्यापक की जगह मिल गई। शीघ्र ही प्रबंधन ने उन्हें प्रिंसिपल बना दिया। उस विद्यालय में सह-शिक्षा (को-एजुकेशन) थी इसलिए गौरी को भी उसी कॉलेज में दाखिला मिल गया। संभवत: ब्रह्मदत्त के लखनऊ आने के पीछे एक मकसद यह भी था कि गौरी भी उन्हीं के विद्यालय में पढ़े और सह-शिक्षा में पढ़ कर मात्र 'लड़की' होने की झिझक मिट जाये। गौरी मेधावी थी, खेलकूद में भी भाग लेती थी। अच्छे कंठ होने के कारण सुबह की प्रार्थना सभा (एसेम्बली) में प्रार्थना भी लीड करती थी।

ब्रह्मदत्त प्रशासनिक कार्यों के अलावा अपने विषय की कक्षाएं लेने के साथ ही यदि किसी कक्षा का कोई पीरियड खाली होता तो उसमें भी पहुँच जाते और सामान्य ज्ञान, नीति और नैतिक शिक्षा के अलावा ज्वलंत विषयों पर सरल और मनोरंजक शब्दों में छात्रों से चर्चा करते। इसके कारण वह छात्रों में भी लोकप्रिय थे। इन्हीं चर्चाओं पर साल में एक बार निबंध प्रतियोगिता होती, जिसमें बच्चे जोर शोर से भाग लेते।

जाहिर है कि गौरी भी इनमें भागीदारी अवश्य करती। अपने पढ़ने के शौक की वजह से और कुशाग्र, विवेचक बुद्धि की वजह से हमेशा वह ही प्रथम आती। हालाँकि कुछ दिल-जले दबे स्वर उसके अव्वल आने का कारण प्रिंसिपल की पुत्री होना 'कहने से नहीं चूकते' थे। इसीलिए कभी-कभी वह स्वयमेव ही प्रतियोगिता में भाग नहीं लेती। परंतु यह निर्णय उसका स्वयं का होता था। कोई उसे इसके लिए बाध्य नहीं करता था। ब्रह्मदत्त बेटी के इस विवेक पर मन ही मन प्रसन्न होते थे, पर कभी मुँह से कहा नहीं।

धीरे-धीरे गौरी आगे बढ़ती गई। शिक्षा के अलावा उसकी पहचान अब स्पोर्ट्स डिबेट में जिले स्तर पर होने लगी थी। ग्रेजुएशन के लिए विश्वविद्यालय में दाखिले में कोई अड़चन नहीं आई।

वार्षिकोत्सव और कन्वोकेशन के दिन तो 'गौरी बाजपेयी' के नाम की धूम रहती थी। पुरस्कारों की झड़ी लग जाती थी। पढ़ने की मेरिट, स्पोर्ट्स, वाद-विवाद प्रतियोगिता के जीते लोगों में उसका नाम बार-बार पुकारा जाता। हाल में बैठे सभी अभिभावक तथा शिक्षक दिल से ताली बजाते।

यहाँ तक तो भगवान् का किया सभी कुछ अच्छा ही था। पर बेटी के बड़े होते ही पिता के माथे पर चिंता की रेखाएं अपने आप उभरने लगती हैं। सब कहते थे और जिसे ब्रह्मदत्त स्वयं मानते थे कि ऐसी सुंदर और गुणवान बेटी की शादी में कोई झंझट न होगी।

बहुधा देखा गया है कि ज्ञानी और ईमानदार व्यक्ति व्यवहारिक नहीं होते। शायद जाने अनजाने में वह अहंकारी हो जाते हैं और मानने लगते हैं कि उनको छोड़ बाकी सभी बेईमान हैं। वह यह भूल जाते हैं कि दुनियादारी भी एक कला है। अन्य ललित कलाओं की भाँति यह भी कला ही है। इसे ही आज कल 'भावनात्मक परिपक्वता' या 'इमोशनल कोटेंट' या ई.क्यू. कहते हैं, जिसे आई.क्यू. से ज्यादा वरीयता दी जाती है। ईमानदार व्यक्ति यदि व्यवहारिक भी हों तो सोने में सुहागा होता है। पर ऐसे लोग बहुत कम पाये जाते हैं। ब्रह्मदत्त इस ग्रंथि के अपवाद नहीं थे।

परम आदर्शवादी ब्रह्मदत्त के पास जब रिश्ता आता तो वह पहली ही मुलाकात में साफ कर देते थे कि वह दहेज प्रथा के विरुद्ध हैं, उनसे इसकी आशा न की जाय। वर पक्ष को उनकी यह साफगोई अहंकार लगती थी। वह स्वयं को अपमानित महसूस कर लौट जाते और पलट कर कोई बात न करते। धीरे-धीरे वह अहंकार के लिए बदनाम हो गये। रिश्ते आने बंद हो गये। उनके हितैषियों ने बताया कि विवाह में इतनी स्पष्टता ठीक नहीं है। पहले आप बात तो करें। जब दहेज की बात उठे तभी अपना मंतव्य बतायें।

इस बात को गाँठ बाँध कर ब्रह्मदत्त ने योग्य वरों की तलाश प्रारम्भ कर दी। उनका मानना था कि ऐसी कन्या के लिए वर कम से कम डॉक्टर, इंजीनियर अथवा क्लास टू का प्रशासनिक अधिकारी तो होना ही चाहिए। परंतु कहीं ऐसे उच्च पद बेटे का पिता इंटर कॉलेज के प्रिन्सिपल

के यहाँ रिश्ता नहीं करना चाहता, तो कहीं इतनी लंबी डिमांड होती कि ब्रह्मदत्त स्वयं ही मना कर देते। ब्रह्मदत्त यह सोच कर 'वर अन्वेषण' में सतुआ बाँध कर लगे रहे कि ऐसी गुणवंती कन्या के लिए विधाता ने कोई अतुलित वर तो रच ही रखा होगा। और रत्न ढूँढने में भारी मशक्कत तो लगती ही है।

ठोकरें खा-खा कर तथा बेटी की बढ़ती उम्र से ब्रह्मदत्त में व्यवहारिकता की अकलदाढ़ निकलने लगी। अब वह दहेज का विरोध नहीं करते थे। पर अब बहुत देर हो चुकी थी। पूरी पूँजी लगाने के बाद भी वह चार-पाँच लाख से अधिक जुगाड़ नहीं कर सकते थे। पर इतने में प्रशासनिक अधिकारी, डॉक्टर या इंजीनियर कहाँ मिलता। कुछ लोग बहाना बना देते तो कुछ खुले दिल वाले मुँह पर ही मना कर देते। कुछ बदतमीज हद तक मुँहफट हैसियत की याद दिला देते थे। अपने परिवेश में सफल माने जाने वाले ब्रह्मदत्त ने इतनी जलालत कभी नहीं झेली थी। सो उनका डिप्रेशन में जाना अनुचित नहीं ठहराया जा सकता था। वह अब शादी के नाम पर पूर्ण रूप से अव्यवहारिक हो चुके थे। शादी का जिक्र आते ही वह ब्राह्मणों को ऊलजलूल बोलने लगते। कुछ लोग उन्हें समझाते कि यह बुराई तो सभी वर्णों में हैं। यहाँ तक कि अब तो मुस्लिम समाज भी इससे अछूता नहीं रह गया। 28 वर्ष की दहलीज पार करते-करते गौरी को लगा कि उसका ईमानदार पिता उसका कन्यादान नहीं कर पायेगा।

राजकीय विद्यालय में अब गौरी शिक्षक बन गई थी। उसने अपना सारा ध्यान पढ़ने और पढ़ाने पर केंद्रित कर दिया। गौरी ने परिवार से जो संस्कार पाये थे, नूतन परिवेश के झोंकों से उनका बासीपन काफी कुछ खत्म हो चुका था। संस्कार को वह विरासत और संस्कृति की निरंतरता मानती थी। उसका भी सोचना था कि समाज का एक पैर यदि परंपरा है तो दूसरा पैर नवीनता। दोनों पैरों के बगैर गति नहीं हो सकती। जो कि किसी भी समाज के लिए अत्यंत आवश्यक होती है। हाँ प्रत्येक गति, प्रगति नहीं होती कभी-कभी अधोगति की ओर भी ले जा सकती है। फिर भी 'जीवन चलने का नाम'। प्रयास और गति ही जीवन है। परंपरा और प्रगति ही आने वाली पीढ़ियों के लिए संस्कृति हो जाती है। अपने पिता की तरह वह मात्र इंटर कॉलेज की अध्यापक बन कर संतुष्ट नहीं थी। पीएच.डी. के बाद उसने एनईटी भी निकाल लिया था और यूनिवर्सिटी या किसी भी डिग्री कॉलेज में उसका चयन हो सकता था।

वह अपने पिता की 'सयानी कुँवारी पुत्री' की व्यथा से खुद ही व्यथित रहती थी। पर उसका मानना था कि बेटी के जीवन का उद्देश्य मात्र उसका विवाह ही नहीं है।

तभी उसने महादेवी वर्मा की 'पालतू हिरनी' की कहानी पढ़ी। एक निश्चित वय प्राप्त कर लेने के बाद वह हिरनी किसी ऋतु विशेष में अन्यमनस्क होती जाती थी। सिर उठा कर हवा में किसी खुशबू को ढूँढती रहती। जिसे महादेवी जी ने नारी होने के नाते समझा। गौरी भी समझ रही थी कि सृजन प्रकृति की निरंतरता के लिये आवश्यक है। मूक हिरनी को प्रकृति सृजन हेतु उत्प्रेरित कर रही थी। उसे समझ आया कि पितृ-ऋण से उऋण होने को 'धर्म' क्यों कहा गया है।

लखनऊ अपने 'लखनऊ महोत्सव' के लिए भी जाना जाने लगा था। इसमें युवाओं के लिए कुछ शैक्षणिक व सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित होते थे, जिसके तहत वाद-विवाद प्रतियोगिता का भी आयोजन होता था। इसमें आयु के अनुसार वर्ग बना दिये जाते थे और उसी आय वर्ग के लोग आपस में प्रतियोगिता करते हैं। इस प्रतियोगिता में प्रथम आना गौरवपूर्ण माना जाता था। इस वर्ष सीनियर ग्रुप की प्रतियोगिता का विषय था 'दहेज एक सामाजिक अभिशाप।'

प्रतियोगिताओं में युवक और युवतियाँ दोनों थे, परंतु विपक्ष में बोलने के लिए मात्र एक ही नाम था। नाम भी एकदम अलग सा था। सोऽहम्। आयोजकों ने कुछ और प्रतिभागियों को विपक्ष में बोलने को प्रेरित करना चाहा। गौरी से भी कहा, ''तुम तो प्रतिभाशाली हो। किसी भी विषय में उतने ही अधिकार से बोल सकती हो।'' गौरी ने कहा, ''जिस बात पर मैं विश्वास नहीं करती उस पर केवल विवाद हेतु बोलना उचित नहीं है। विषय के प्रति मैं न्याय नहीं कर पाऊँगी।''

प्रतियोगिता से पहले की रात पता नहीं क्यों गौरी को नीद नहीं आई। बार-बार सपने में सिर उठाए किसी गंध को ढूँढती मूक हिरनी ध्यान आती रही। सुबह वह जल्दी ही उठ गई और तैयार हो कर रसोई में माँ का हाथ बँटाने पहुँच गई। माँ ने आश्चर्य से पूछा ''आज तुम्हारी प्रतियोगिता है। तुम्हें तैयारी नहीं करनी?''

''नहीं माँ, मन नहीं लग रहा है इसीलिए आपकी मदद के लिए आ गई।''

प्रतियोगिता की शाम प्रतिभागियों को मंच के ही किनारे पक्ष और विपक्ष में अलग बैठाया गया। सभी विस्मित थे - विपक्ष में मात्र एक ही प्रतिभागी क्या बोलेगा... बेचारा? सभी उत्सुक थे।

मंच-संयोजक ने भी कहा कि पक्ष में बोलने वालों की संख्या ज्यादा होने के कारण पहला मौका उन्हीं को दिया जाएगा, बीच में ही विपक्ष के वक्ता को आमंत्रित किया जाएगा। जैसा कि होता है सबसे अच्छे वक्ता को सबसे अंतिम में रखा गया था। गौरी का नाम सबसे आखिरी में था।

'दहेज एक सामाजिक अभिशाप' के पक्ष में वक्ता आए और अपना-अपना पक्ष रखा। कुछ ने बहुत ही रुटीन बातें, रुटीन तरीके से रखी, कुछ ने उन्हीं बातों को बड़े ही प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया। श्रोताओं की तालियाँ भी मिलीं। किसी को ज्यादा, किसी को कम। गौरी ने नोटिस किया कि कुछ साथी वक्ता, (क्रिकेट सिद्धू की भाषा में) ताली ठोंकने के लिए अपने तमाम समर्थकों को लाये थे। पर क्या सफलता ऐसी प्रायोजित तालियों पर मिलती...?

गौरी ने अपनी नोट-बुक में प्रतिभागियों द्वारा रखे बिन्दुओं को नोट किया।

दहेज पितृ-सत्तात्मक व्यवस्था का नारी को शोषित व उत्पीड़ित करने का षड्यंत्र है- गौरी ने अपना विचार बिन्दु नोट किया... परंतु वास्तविक शोषण तो लड़की के पिता का होता है।

लड़के के विवाह के नाम पर लड़के का विक्रय अथवा नीलामी की जाती है।

दहेज प्रथा समाज का नासूर है।

दहेज हेतु बहू पर अत्याचार।

बेटे की दूसरी शादी में पुनः दहेज के लालच से बहू की हत्या।

यह प्रथा केवल हिन्दू समाज में ही है। किसी ने रामायण के सीता विवाह में दिये विपुल दहेज का उद्धरण देकर बताया कि उक्त प्रथा हजारों सालों से चली आ रही है।... आदि आदि।

गौरी के अलावा विपक्ष वार्ताकार सोऽहम् भी प्वाइंट्स नोट कर रहा था।

फिर उद्घोषक ने विपक्ष में बोलने हेतु एकलौते प्रतिभागी को माइक

पर आमंत्रित किया। अकेला प्रतिभागी होने के नाते श्रोताओं से उसका मनोबल बढ़ाने हेतु जोरदार तालियाँ बजाने का भी आग्रह किया। परंतु गौरी के अलावा ताली बजाने वालों की संख्या बहुत कम थी। सभी ताली बजाने वाले प्रायोजित थे। दूसरे के लिए कैसे ताली बजाएँ?

माइक पर आकर सोऽहम् ने विशिष्ट अतिथियों को अलग अलग संबोधित करने के बजाय 'मेरा सभी को नमन' कह अपनी वार्ता पर आ गया।

उसने प्रारम्भ किया, ''पता नहीं मुझे इस विषय पर वार्ताकार के रूप में क्यों प्रोजेक्ट किया गया। मैं भी दहेज एक समाजिक अभिशाप के पक्ष में ही बोलूँगा।''

श्रोताओं, आयोजकों में फुसफुसाहट हुई- यह अंतिम समय में पक्ष क्यों बदल रहा है?

कुछ देर नाटकीय अंदाज में रुक कर फिर एक मुसकान के साथ बोला, ''जी हाँ! मैं इसी पक्ष में बोलूँगा पर दहेज एक सामाजिक अपराध के आगे एक प्रश्न-वाचक या विस्मय बोधक चिन्ह के साथ।''

अब सभी को सोऽहम् की वाक-पटुता समझ में आई। कुछ ने ताली बजाकर व कुछ ने केवल मुस्करा कर ही उसे सराहा।

गौरी भी प्रभावित हुई। उसने सोचा कि पहले ही वाक्य में इसने स्कोर कर लिया।

सभी ध्यान लगा कर सुन रहे थे।

''जी हाँ, मैं मानता हूँ कि यह समाजिक अभिशाप है। परंतु आने वाले थोड़े समय में मैं अपने विचार आपसे साझा करूँगा कि इसका वास्तविक अपराधी है कौन?''

''तमाम काले, सफेद और गोल पत्थर नदियों के किनारे पड़े रहते हैं। हम उन पर ध्यान नहीं देते। परंतु जब हम उन्हें उठा कर शिव या सालिगराम का विग्रह बना कर उन्हें बाजार में सजा देते हैं तो हमारी ही श्रद्धा की वजह से उनका मूल्य बढ़ जाता है। हम अपनी आर्थिक हैसियत के अनुरूप विग्रह खरीद कर घर लाते हैं। पत्थर तो वही हैं जिन्हें हम ऐसे ही नदी के किनारे से उठा सकते थे। परंतु नहीं हम अपने अहं को तुष्ट करने के लिए उनकी ओर तब आकर्षित होते हैं जब बाजार में उन पर मूल्य की 'बार-कोडिंग' हो जाती है। जितना दुर्लभ पाहन उतना ज्यादा

दाम हम खुद ही चुकाते हैं। इसके लिए दुकानदार को क्यों कोसें?''

कुछ रुक कर ''आप सोच रहे होंगे मैं मूर्ति के बाजार का अनावश्यक ही जिक्र क्यों कर रहा हूँ। यह मात्र उदाहरण है कि पत्थर तो वही है जिसे हम ऐसे ही उठा सकते थे पर... जब वह बाजार में आ गया तब ही लोग उसकी ओर आकर्षित होते हैं और वह पत्थर मूल्यवान हो जाता है। बाजार का नियम है कि डिमांड ही मूल्य तय करता है। जितना योग्य वर, लोग उसका उतना मूल्य लगाते हैं। इसलिए यह कहना कि लड़के वाले वर का विवाह नहीं विक्रय या नीलामी करते हैं, सही नहीं है। क्योंकि बाजार तो ग्राहकों से चलती है विक्रेताओं से नहीं।''

''अपनी पुरानी गाड़ी को बेचते वक्त हम चाहते हैं कि हमें ज्यादा से ज्यादा दाम मिले। वहीं हम अगर सेकेंड हैंड कार खरीदने निकलते हैं तो चाहते हैं कि कम से कम दाम में ऊँचा से ऊँचा मॉडल मिल जाए। इसी प्रकार कौन पिता अपनी बेटी के लिए अच्छा से अच्छा वर नहीं ढूँढना चाहता? लाभ का सौदा लालच नहीं एक सहज मानवीय प्रवृत्ति है। परंतु वर ढूँढते समय यदि हम समकक्ष परिवारों में ही रिश्ते देखें, कन्या के ही अनुरूप वर देखें तो इतनी मुश्किल नहीं होगी। दहेज की व्यवस्था समकक्ष परिवार में संबंध करने के लिए ही बनाई गई है। दोनों परिवारों के स्तर में यदि असमानता होती है तो भी पारिवारिक जीवन सफल नहीं रहता।''

''दहेज प्रथा इस्लाम धर्म में भी है। परंतु वहाँ इस व्यवस्था को ऐसे लागू किया गया है, जिससे रिश्ते समकक्ष परिवार में ही हो सके। इस्लाम में नियम है कि वर पक्ष की हैसियत का आधा मेहर होना चाहिए, और मेहर का आधा ही दहेज होगा। इस व्यवस्था से आदमी अपने समान स्तर में शादी को बाध्य है।''

''परेशानी तब होती है जब हम अपने स्तर से काफी ऊँचे परिवार या वर की आकांक्षा करते हैं।''

पता नहीं क्यों सोऽहम् के इस वाक्य को सुनकर गौरी असहज हो गई, सोचा क्या यह वाक्य उसी को संबोधित था...? उसने कुर्सी पर अपनी पोजीशन बदली।

सोऽहम् बोलता गया- ''देखा गया है कि लड़कियाँ भी हमेशा अपने से श्रेष्ठ वर चाहती हैं। यदि लड़की पीसीएस है तो आईएएस वर चाहती

हैं, यदि ग्रेजुएट है तो पोस्ट ग्रेजुएट चाहती हैं, गाँव की ही लड़की गाँव में शादी नहीं करना चाहती। कोई भी कमाती हुई लड़की न कमाते हुए लड़के से शादी नहीं करेगी, क्यों....?''

''ज्यादातर घरों में केवल पति ही कमाता है पत्नी नहीं। फिर कमाती हुई लड़की न कमाते हुए लड़के से शादी क्यों नहीं कर सकती? आप कहेंगे होम-मेकर पत्नी घर संभालती है। पति होम-मेकर नहीं होता, तो यहाँ आप भ्रम में हैं या वास्तविकता नहीं स्वीकार रहे हैं। आधे से ज्यादा मध्यवर्गीय पति व्यवसाय से लौटने के बाद पत्नी के साथ गृह-कार्य में हाथ बँटाते हैं। यह बात दीगर है कि मेहमानों व रिश्तेदारों के सामने पत्नियाँ ही उन्हें काम नहीं करने देतीं, जिससे उनकी 'आदर्श नारी' छवि बरकरार रहे। हाँ, हो सकता है कि कुछ परिवारों में बेरोजगार पति गृह कार्य करने में हेठी समझें पर, धीरे-धीरे यह मानसिकता भी बदल रही है। यदि लड़की वाले खासकर कमाती हुई लड़की खुद बेरोजगार युवक से संबंध कर ले तो दहेज प्रथा स्वतः खत्म हो जायेगी और बेरोजगारी भी समाप्त हो जायेगी।''

''मैं अपना स्वयं का उदाहरण देता हूँ। मैं विज्ञान से पोस्ट-ग्रेजुएट व पीएच.डी. हूँ, हमेशा मेरिट में रहा हूँ। मेरे पिता विद्यालय में क्लर्क हैं। मेरे पास ऊँची सिफारिश या रिश्वत के लिए पैसे भी नहीं हैं, इसलिए बेरोजगार हूँ। तीस का हो गया हूँ पर कोई अशिक्षित, असुंदर कन्या का पिता भी मेरे यहाँ प्रस्ताव लेकर नहीं आया, क्योंकि मैं नदी के किनारे का मात्र वह पत्थर हूँ। अभी मार्केट में मुझे देवत्व प्राप्त नहीं हुआ। अतएव कोई खरीददार नहीं। यहाँ तो दहेज नहीं है, परन्तु कोई रिश्ता भी नहीं है।''

''वास्तव में दहेज अभिशाप नहीं। 'अंगूर खट्टे हैं' की तरह ही दहेज भी दिलजलों द्वारा अभिशप्त है।''

यह कहने के बाद सोऽहम् थोड़ा रुका। लोगों ने समझा उसकी वार्ता खत्म हो गई कि उसके चेहरे पर शरारत भरी मुस्कान आई। वह बोला, ''मैं निर्णायकों का कार्य हल्का करना चाहता हूँ। मैं सोऽहम् अवस्थी दहेज को वाकई अभिशाप मान लूँगा यदि सामने बैठी मेरी प्रतिभागी लड़कियों में से कोई मुझसे शादी को तैयार हो जाय, या मुझ बेरोजगार का विवाह किसी कमाती हुई लड़की से कराने का वायदा करे। मैं वचन देता हूँ गृह कार्य की जिम्मेदारी मेरी'' यह कह कर सोऽहम् सभी को विनम्रता से

प्रणाम करके अपनी सीट पर चला गया।

सभी चुप थे, कोई प्रतिक्रिया नहीं, सिवाय कुछ फूहड़ों के जो हो-हो-हो करके हँस पड़े और बेहयाई से लड़कियों को चैलेंज करने लगे।

पहले तो गौरी को सोऽहम् का यह मसखरापन लगा परंतु तत्काल ही उसे समझ आया कि यह एक अप्रिय सत्य है। किसी ने भी इस तथ्य पर विचार ही नहीं किया। विचार आया भी हो तो स्वीकार नहीं करना चाहता, इसीलिए आज तक यह बात उठी ही नहीं। दहेज को कोसने वाले लोग भी विवाह के दौरान कितनी फिजूलखर्ची करते हैं? उसे लगा कि उसके पिता और वह स्वयं इसी ग्रंथि से पीड़ित थे। दोष समाज में न होकर लोगों की सोच में है। उसके मन में यह प्रश्न चला था कि सोऽहम् में यह विलक्षण विचार आए कैसे? वह कैसे प्रथा के मूल तक पहुँच गया, जो सत्य के काफी नजदीक है। फिर एकाएक उसे ध्यान आया कि बेरोजगार होने से वह मूल्यहीन है, इसीलिए अविवाहित है। इस पीड़ा ने ही उसे यह भान कराया।

सबसे पहले व्यवस्थापकों ने तालियाँ बजाई, गौरी ने भी साथ दिया फिर पूरा हाल तालियों से गूँज उठा।

उद्घोषक ने अंतिम परंतु सबसे मेधावी वक्ता कहकर गौरी को बोलने को आमंत्रित किया।

वह स्टेज की ओर चली परंतु उसके मस्तिष्क में तैयार किए बिन्दु नहीं थे। वह सोच रही थी कि वह स्वयं भी तो कमाती है, परिवार का बोझा उठाने में सक्षम है, तो भी उसके पिता डॉक्टर इंजीनियर क्यों ढूँढ़ रहे हैं...? क्यों दहेज को कोसते हुए डिप्रेशन में चले गये। 28 की उम्र में वह भी महादेवी जी की हिरनी सी अपने पिता के ही घर पर पड़ी है।

माइक पर आकर बगैर किसी भूमिका के वह बोली, ''मैं पूर्व वक्ता सोऽहम् जी से पूर्ण रूप से सहमत हूँ कि दहेज उतना बड़ा अभिशाप नहीं है जितना कि अभिशप्त। शेक्सपियर के शाइलक की भाँति मैं 'मोर आफ सिन्ड दैन सिनर'। मैं सोऽहम् जी के तर्कों से पूरा सहमत हूँ। इसलिए मेरे पास प्रतियोगिता में बोलने को कुछ भी नहीं बचता। धन्यवाद।''

सभी आश्चर्यचकित थे।

निर्णायकों ने एकमत से सोऽहम् को विजयी घोषित किया। अध्यक्ष ने सोऽहम् को लीक से अलग सोच के व अप्रिय सत्य बोलने के साहस को सराहा।

परंतु सोऽहम् से भी अधिक प्रशंसा गौरी के उस कथन को मिली जिस बात पर विश्वास नहीं उस पर मात्र प्रतियोगिता हेतु बोलना उचित नहीं। जब तक उसकी धारणा विषय के पक्ष में थी उसने विपक्ष में बोलने को मना किया और जब उसकी धारणा बदल गई तो पक्ष में बोलने से इंकार कर दिया। ऐसा कथनी करनी में फर्क न करने वाले बहुत दुर्लभ है। उनका सम्मान होना चाहिए।

मंच से उतर कर सभी प्रतिभागी विजयी सोऽहम् को बधाई दे रहे थे पर, गौरी थोड़ी दूर चुपचाप खड़ी थी। सोऽहम् स्वयं गौरी के पास आया और विनम्रता से बोला 'आज मैं आपकी वार्ता सुनने से वंचित रह गया।''

गौरी ''आपकी नई सोच के बाद कुछ बोलना बेमानी था। यह सोच आपको कहाँ से मिली?''

''मेरे पिता का मानना है कि अंधेरी गुफा से बाहर निकलने के लिए दीपक जलाकर ही रोशनी का रास्ता खोजा जा सकता है।''

''आपके पिता?''

''श्री रामानुज अवस्थी?''

गौरी- ''तुम राजानुज चाचा के बेटे हो!'' गौरी ने इस नये परिचय से प्रसन्न होते हुए कहा ''तब तो महोत्सव में एक कप चाय तो बनती है।''

सोऽहम् ने हँसते हुए कहा, ''एक शर्त है... पेमेंट आप करेंगी। मैं तो... आपको तो मालूम है।''

गौरी हँसते हुए सोऽहम् का हाथ पकड़ कर टी स्टाल ले गई। उसके निश्छल व्यवहार से गौरी अभिभूत थी।

घर पहुँचने पर गौरी को प्रसन्न देख कर माँ ने पूछा, ''लगता है बिटिया आज फिर जीत कर आई है।''

गौरी ने कहा, ''नहीं। आज लीक पीटने वालों पर यथार्थ की विजय हुई। रामानुज चाचा का बेटा बहुत अच्छा बोला इसलिए मैंने उसके पक्ष को मानकर वाक-आउट दे दिया।''

''रामानुज का बेटा इतना बड़ा और विद्वान हो गया।''

''हाँ! माँ। आपको और पिता जी को प्रणाम कहा है।''

''वह खुद क्यों नहीं आया?''

''आने को कहा है'', कहकर खुशी में गौरी हाथ मुँह धोने चली गई।

माँ भी आज गौरी की खुशी देखकर गद्‌गद्‌ हो गई।

गौरी उस रात बहुत आराम से सोई। हवा में मुँह उठाए हिरनी स्वप्न में नही आई।

अगले दिन शाम को कॉलेज से लौटते समय सोऽहम्‌ से फिर भेंट हो गई। गौरी अनजाने में ही रुक कर उसके साथ हो ली। दोनो पुरानी पारिवारिक बाते करते रहे। सोऽहम्‌ ने बताया कि उसके पिता श्री ब्रह्मदत्त को अपना आदर्श मानते हैं, पर माँ मेरे पिता की विपन्नता का कारण आपके पिता के प्रभाव को मानती हैं। परन्तु पिता जी अपनी विपन्नता में भी संतुष्ट हैं।

घर लौटने के बाद गौरी ने हमेशा की तरह सारी बातें माँ से शेयर की। माँ ने अनुभव किया कि सोऽहम्‌ के जिक्र आने के पर गौरी के चेहरे पर अतीव... उत्साह आ जाता है। माँएं अपनी बेटियों को ज्यादा समझती हैं।

रात भर गौरी उस हिरनी से अपनी तुलना करती रही। कभी-कभी कुछ कहानियाँ जीवन को कितनी नजदीक से छू जाती हैं। शायद महादेवी जी भी इस वजह से हिरनी के भाव समझ सकी। सोऽहम्‌ द्वारा प्रतियोगिता में लड़कियों को दी गई चुनौती गौरी को बार-बार याद आ रही थी। फिर एकाएक उसने उस चुनौती को स्वीकार करने का निर्णय लिया और आराम से सो गयी। अगले दिन सुबह सोऽहम्‌ तैयार हो रहा था कि फोन की घंटी बजी। दूसरी तरफ से गौरी की खनकती हुई आवाज थी, ''सोऽहम्‌ प्रतियोगिता में दी तुम्हारी चुनौती को स्वीकार करती हूँ। बोलो तुम तैयार हो?''

सोऽहम्‌ इसके लिए तैयार नहीं था वह तत्काल कुछ सोच नहीं पाया। तभी गौरी की आवाज आई, ''बेहोश हो गए क्या?''

अबकी सोऽहम्‌ भर्राए गले से बोला, ''आर यू सीरिअस गौरी!''

गौरी ''कोई शक?''

''नहीं मुझे तुम पर कोई शक नहीं।'' थोड़ा सा रुक कर। ''क्या आज हम लोग मिल सकते हैं?''

''क्यों नहीं, आज मैंने कॉलेज से अवकाश ले लिया है, और तुम तो फुर्सत में ही होगे।''

यह शब्द किसी और ने कहे होते तो सोऽहम्‌ को चुभ जाते पर कहने-कहने में और कहने वाले में फर्क होता है। शब्द अच्छे या बुरे नहीं होते, हमारी खुद की प्रतिक्रिया ही उन्हें अच्छा या बुरा बनाती है। क्योंकि यह शब्द गौरी ने कहे थे, सोऽहम्‌ ने बिल्कुल बुरा नहीं माना।

दोनों सारे दिन साथ रहे। सोऽहम्‌ ने अपने पिता से बात करने के बाद ही निर्णय लेने को कहा। वहीं गौरी निर्णय ले चुकी थी। गेंद सोऽहम्‌ के पाले में थी।

घर आकर गौरी ने माँ को बताया कि वह बेरोजगार परंतु प्रतिभाशाली सोऽहम्‌ से विवाह करने जा रही है। माँ पहले तो हतप्रभ हुई मगर जल्दी ही सहज स्त्री-बोध से उसे गौरी के निर्णय सही मानने में देर नहीं लगी। परंतु...।

ब्रह्मदत्त को जब पता चला कि किसी क्लर्क के बेरोजगार बेटे से उनकी बेटी शादी करना चाहती है, तो उन्हें यह रिश्ता हजम नहीं हो रहा था। लोग क्या कहेंगे- क्लर्क का बेटा... वह भी बेरोजगार! आखिर सामाजिक प्रतिष्ठा भी कोई चीज होती है, और फिर बेटी के लिए सँजोये खुद उनके सपने।

उस रात सारा परिवार चैन की नींद सोया, सिवाय ब्रह्मदत्त के। रात भर उनके मन में दो ही विचार घुमड़ते रहे - सामाजिक प्रतिष्ठा भी कोई चीज है... तथा अपने पिता के वाक्य 'बगैर संतोष के सुख कहाँ?'

सामाजिक प्रतिष्ठा या संतोष...।

संतोष करना कितना कठिन हो सकता है, उन्होंने आज ही जाना।

अगले दिन पूजा में भी उनका मन नहीं लगा। वह यंत्रवत्‌ केवल जल छिड़क कर, मंत्र पढ़, घंटी बजा कर बैठक में चले आए। बाहर के बैठक में अनमने बैठे ब्रह्मदत्त ने सुबह की चाय को हाथ भी नहीं लगाया था। उनके मस्तिष्क में केवल दुविधा ही घूम रही थी कि ''नरवरश्रेष्ठो दातारम्‌ अभिकांक्षते।''

बड़ी जानी-पहचानी आवाज में ब्रह्मदत्त को 'वाल्मीकि-रामायण' के राम-सीता विवाह के समय दशरथ द्वारा जनक से यज्ञशाला में प्रवेश करने की याचना का श्लोक सुन कर अभिभूत हो गये। दरवाजे से रामानुज अवस्थी ने प्रणाम करते हुए प्रवेश किया। रामानुज ब्रह्मदत्त के लिपिक रहे चुके थे और स्नेहपात्र भी। इस श्लोक से ब्रह्मदत्त समझ गये रामानुज ही सोऽहम् के पिता है। वह इतनी तत्परता से रामानुज का स्वागत करने उठे कि उनका चश्मा नीचे गिर कर टूट गया। उन्होंने रामानुज का हाथ पकड़ कर माथे से लगाते हुए कहा, ''रामानुज! आपके पास आना मेरा धर्म बनता था। आपने कष्ट क्यों किया?''

रामानुज ने हाथ पकड़े विनम्रता से कहा, ''बाजपेयी जी प्रतिग्रहीता (दान ग्रहणकर्ता) को ही दाता के पास जाने का निर्देश है। थोड़ा रुक कर रामानुज ने ब्रह्मदत्त का टूटा चश्मा उठाते हुए कहा, ''आपका चश्मा टूट गया।''

ब्रह्मदत्त ने रामानुज को गले लगाते हुए कहा, ''पुराने चश्मे को कब का बदल देना चाहिए था। अच्छा हुआ आज टूट गया।''

❐❐❐

वंचितों की वंचना

वंचित समाज की वंचना का बहुत बड़ा कारण है उनमें क्रोध का अभाव। क्रोध वह भाव है जो कि कष्ट पहुँचाने वाले के प्रतिकार स्वरूप मन में उत्पन्न होता हैं। कितने ही भारतीय या अन्य अश्वेत वर्ग के लोगों को गोरों के शासन में अपमान से दो चार होना पड़ता होगा। परंतु मोहनदास करम चंद गाँधी को दक्षिण अफ्रीका में इस अपमान पर क्रोध आया, जिसे उन्होंने तत्काल ही प्रदर्शित नहीं किया। उसको अपने मन में पाला, पोषित किया और विवेकपूर्वक उसका प्रतिरोध करने का निश्चय किया। उनके इस प्रतिरोध से अन्य अपमानित भारतीयों को दक्षिण अफ्रीका में सम्मान मिला। उसी क्रोध की निरंतरता जब भारत में उत्पन्न हुई तो भारतीयों को भी अंग्रेजी शासन से मुक्ति मिल पाई।

यह गौरव गाथा तो पूरे भारत देश की है। पर क्या भारत के सभी नागरिकों को सम्मान मिल पाया? सदियों से चले आ रहे शोषण से मुक्ति मिल पाई? ...नहीं!

प्रजा-तंत्र में आम आदमी के सशक्तिकरण का सबसे बड़ा माध्यम है 'वोट'। प्रजातन्त्र हर पाँचवे वर्ष नागरिकों को अधिकृत करता है कि वह स्वयं अपना शासक चुन सके। परंतु क्या इस अधिकार का उपयोग हमारे समाज का वर्ग विशेष निर्भय होकर कर पाता है?... नहीं!

इन पाँच साला आम चुनावों को शहरी, विशेषकर तथाकथित 'संभ्रांत' वर्ग बड़े ही हल्के रूप में लेता रहा है। चुनाव के दिन पोलिंग-बूथ तक जाना, वहाँ लाइन लगा कर वोट देना उन्हें अपनी शान के खिलाफ लगता है। इतना कष्ट उठाने के बजाय वह इस दिन का अवकाश के रूप में टी0वी0 देखकर व्यतीत करना ज्यादा पसंद करता है।

इसके उलट ग्रामीण क्षेत्र में चुनाव एक महा-पर्व के रूप में मनाया जाता है। एक अजीब सा उत्साह जनमानस में व्याप्त हो जाता है। देखा गया है कि लोकसभा और विधानसभा चुनाव के दौरान यह उत्साह इतना

तीव्र इसलिए नहीं हो पाता, क्योंकि उम्मीदवारों का जनता से सीधा जुड़ाव नहीं होता। वहीं ग्रामसभा के चुनाव में प्रधान पद अथवा वार्ड-सदस्य का प्रत्याशी उनके गाँव-पड़ोस का होता है। वह अपना आदमी अथवा धुर प्रतिद्वंद्वी भी हो सकता है। प्रधानी के चुनाव में विकास या करप्शन मुद्दा नहीं होता। यहाँ मूँछ का सवाल होता है। सवाल होता हैं कि 'खड़ंजा कहिके दुआरे ते निकली? वुई हमार पनारा बंद कई दिहिन रहय'' आदि बहुत छोटी-छोटी चीजों पर चुनाव निर्भर करता है। सबसे ज्यादा खून खराबा व हिंसक घटनाएँ भी इसी प्रधानी के चुनाव में ही होती हैं। एक जिलाधिकारी का कहना था कि प्रधानी के चुनाव सम्पन्न कराना प्रशासन के लिए बड़ी चुनौती होती है।

ऐसे प्रधानी के चुनाव को प्रत्यक्ष रूप से देखने का मुझे भी एक मौका मिला।

उन दिनों दूरबीनों द्वारा महिला नसबंदी बहुत जोरों पर चल रही थी। तीन चार सचल दल रोज सुबह 10 बजे जिला अस्पताल से सर्जन, लेडी डॉक्टर, नर्सिंग-स्टाफ व सर्जिकल सहायक, आवश्यक उपकरण व साज-सज्जा दो गाड़ियों में लाद कर ग्रामीण अंचल की पीएचसी अथवा सीएससी के लिए निकल पड़ते। शाम होते ही 50-60 केसेज निबटा कर हम लोग वापस लौट आते। कभी-कभी त्योहार पड़ जाने या कभी-कभी ऐसे ही सेंटर्स पर नसबंदी हेतु बहुत कम महिलाएं एकत्र हो पाती थीं। ऐसे में सब लोग शाम तक वहीं केसेज का इंतजार करते और कई बार तो बगैर कोई केस किए, मात्र पिकनिक मनाकर लौट आते।

ऐसे ही एक दिन हमलोग जब 'कैंप (नसबंदी कैंप) करने पीएचसी पहुंचे तो वहाँ के चिकित्साधिकारी ने बड़े ही रिलैक्स्ड मूड में हँसते हुए हम सबका स्वागत किया, ''आईये आज तो पूरा पिकनिक का लुत्फ उठा पाएंगे आप लोग। आज इस ब्लाक में प्रधानी का चुनाव है। एक भी केस होने की संभावना नहीं।''

''यह जानते हुए भी कि आज कोई केस नहीं होना है, आपने मुख्यालय को क्यों सूचित नहीं किया। यदि सूचना होती तो टीम आती ही क्यों?'', सर्जन ने थोड़ा तल्खी से पूछा। ''सबकी तो पिकनिक होगी पर मुझे शाम को वापस लौट कर रात तक इमरजेंसी ऑपरेशन करने पड़ेंगे। बाकी लोग तो आराम से सो जाएंगे।''

बीईई (ब्लाक एक्सटेंशन एजुकेटर) ने स्थिति को संभालने की

नियत से कहा, ''अरे सर, यह तो आपका रोज का काम है। आज गाँव का इलेक्शन भी देख लीजिए। यह मौका दोबारा नहीं मिलेगा।''

चाय पानी कर हम लोग गाँव के भ्रमण को निकले।

पूरे गाँव में उत्सव का माहौल था। लोग टोलियों में निकल रहे थे। महिलाओं की टोलियाँ काफी सजी सँवरी थी। कुछ लोग लगता था कि मेन रोड से बस उतर कर पैदल ही गाँव को आ रहे थे। साथ में बीवी-बच्चे थे। हमने देखा एक पुरुष नए पैजामा कमीज में सजा, नए जूते पहने खाली हाथ आगे-पीछे चल रहा था, पीछे घूँघट डाले उसकी पत्नी एक हाथ सिर पर टीन का बक्सा संभाले और दूसरे हाथ से बच्चे का हाथ थामे चली आ रही थी। ऐसे परिवार का यह नजारा हम लोगों ने पहले नहीं देखा था।

पूछा, ''यह कौन है?''

बीईई- ''यह गाँव के वोटर हैं। गाँव वोट देने आए हैं।''

''अरे इतना खर्चा करके सिर्फ वोट देने आए हैं।'', हम सभी को आश्चर्य हुआ।

बीईई- ''नहीं सर, इन सबका आने जाने का किराया प्रत्याशी देगा। प्रत्येक प्रत्याशी अपने सपोर्टर परिवार के सभी सदस्यों को वोट देने के लिए अपने खर्चे से बुलवाता है।

''सिर्फ एक वोट के लिए इतना पैसा खर्च किया जाता है।'' सर्जन ने विस्मय से पूछा।

बीईई ''गाँव के एलेक्शन में वोटर बुलवाने से अधिक पैसा तो दारू बाँटने में खर्च होता है।''

''प्रधान बनने में इतना क्या फायदा कि आदमी एलेक्शन में इतना पैसा खर्च करता है?'' एक लेडी डॉक्टर ने जिज्ञासा की।

बीईई ने हँसते हुए बताया, ''विकास कार्यों की गुणवत्ता व कम्प्लीशन सर्टिफिकेट' तो प्रधान जी ही देते हैं। एलेक्शन का सारा खर्चा तो एक ही साल में निकल आएगा, बाकी लागत पर कई गुना मुनाफा।''

हम सभी को आश्चर्य हुआ।

तभी लेडी डॉक्टर ने उस महिला को रोक कर घूँघट उठा कर देखा। दो बच्चों वाली महिला की उम्र 18 वर्ष से अधिक नहीं होगी। लिपस्टिक,

बिंदी, पाउडर से गेंहुए रंग को उजला कर दिया था। सबसे अधिक सुंदरता तो उस लड़की की आँखों में थी जो आने के उत्साह और प्रसन्नता से चमक रही थी। उसने इस प्रकार रोके जाने पर कोई आपत्ति भी नहीं जताई बल्कि प्रसन्न थी कि घूँघट में छिपी उसकी सुंदरता को किसी ने तो देखा।

उसकी निश्छल मुस्कान देख डॉक्टर साहिबा ने हँसते हुए कहा, ''अरी, दो बच्चे, इतना बड़ा संदूक तू अकेले ही क्यों ढो रही है कुछ अपने मरद को भी दे।''

महिला ने उतने ही भोलेपन से जवाब दिया, ''वुई मालिक आहीं। ई तो हमार धरम है।'' कह कर वह तो मुस्काती इठलाती चली गई, पर डॉक्टर के चेहरे पर पर कसैलापन आ गया था।

महिलाएं कितनी संवेदनशील होती हैं।

थोड़ी ही देर में ही हम लोग मतदान केंद्र पहुँच गए। गाँव में पसरी शांति से उलट केंद्र में बड़ी गहमा गहमी थी। केंद्र से थोड़ा पहले प्रत्याशियों के बस्ते लगे थे जिनमें वोटर-पर्चियाँ बन रही थीं। कुछ बस्तों पर ज्यादा संख्या में लोग एकत्र थे कुछ तो बिल्कुल खाली। यह देख कर हममें से एक ने पूछा, ''जिसके बस्ते पर ज्यादा भीड़ दिख रही है संभवत: वही प्रत्याशी विजयी होगा।''

''नहीं ऐसा कुछ नहीं। जिन पर भीड़ ज्यादा दिख रही है वह प्रत्याशी बाहुबली है। हालाँकि ज्यादातर बाहुबली ही जीतते हैं पर कभी-कभी जिनके बस्ते पर भीड़ होती है वह हार भी जाते हैं। ग्रामीण वोटर को आप समझ नहीं सकते।'' कहते हुए बीईई ने वोट देने हेतु लाइन में लगी एक महिला से डाँट कर पूछा, ''क्यों तू किसको वोट देगी?''

महिला ने बड़ी लाचारी से कहा- ''जहिका तुम कहौ।''

''पहले से सोच के नहीं आई?'' बीईई ने फिर धमकाया।

महिला ने उतनी ही लाचारी में नहीं की मुद्रा में सिर हिलाया।

''देखा डॉक्टर साहब! इनसे कुछ उगलवा पाना कितना मुश्किल है। गाँव का वोटर काफी सयाना हो गया है।''

मतदान केंद्र के अंदर पहुँच कर बीईई, ''का हो दरोगा जी! आज पुलिस बड़ी मुस्तैद दिख रही है।''

दरोगा- ''हाँ यह बड़ा ही संवेदनशील केंद्र है। कभी भी फौजदारी हो सकती है।'' फिर हम लोगों को देखकर, ''आप भी डॉक्टरों को ऐसे माहौल में क्यों घसीट लाये?''

तभी मेरा पैर केंद्र में सोते एक व्यक्ति से टकराया। मैंने पूछा, ''यह व्यक्ति यहाँ क्यों सो रहा है?''

दरोगा- ''यह नवयुवक पास के गाँव का प्रधान पद का प्रत्याशी है। लोगों के कहने पर यह खड़ा तो गया पर दबंगों के डर से भाग कर यहाँ छिप कर पड़ा है। मैं भी इसे टोक नहीं रहा हूँ। यहाँ से भगाया तो बाहर जाकर मारा जाएगा बेचारा। बेकार में एक और बवाला हो जायेगा।'' सब हँसने लगे।

हम लोग उसके बाद पूरे गाँव का चक्कर लगाते हुए वापस पीएचसी पर लौट आए। खाना तैयार था। खाते-खाते 3 बज गए। हम लोगों ने अपना लाव लश्कर संभाला और चार बजे वापस मुख्यालय लौट आए।

अगला कैंप भी उसी ब्लाक में लगा। परंतु इस बार ब्लाक मुख्यालय की सीएचसी पर। दो चार केस निपटाने के बाद जब हम लोगों को पता चला कि आज एलेक्शन की मतगणना होनी है, हम लोग काम समाप्त कर ब्लाक भवन की ओर चले जहाँ प्रधानी के एलेक्शन की मत-गणना हो रही थी।

ब्लाक परिसर में गहमागहमी का माहौल था। लोग अपने-अपने ग्रुप बना कर झुंडों में खड़े थे, और चुनाव के संभावित नतीजे की चर्चा कर रहे थे। कुछ लोग जो अपने प्रत्याशियों की विजय के आश्वस्त थे हाथ में फूल-मालायें लिए खड़े थे। हम लोग वहाँ पहुँचने वाले ही थे कि एकाएक किसी की जय-जयकार का स्वर गूँजा। थोड़ी देर बाद एक बुजुर्ग मालाओं से लदे, स्वयं दूसरों के कंधे पर लदे नमूदार हुए। वह काफी वृद्ध थे, सो लेडी-डॉक्टर ने पूछा, ''क्या यह चल फिर नहीं सकते?''

बीईई- हँसते हुए कहा- ''हाँ, यह भी सही है कि प्रधान जी अपने पैरों से नहीं चल सकते, परंतु इस समय इनके समर्थक इनकी जीत की खुशी में कंधे पर उठाये हैं।''

लेडी डॉक्टर- ''यह तो बहुत जर्जर हैं, छह साल जीवित भी रहेंगे?''

''डॉक्टर साहब! पिछले दो इलेक्शन से लोग यही सोच रहे हैं।

लगता है कि भगवान ने इन्हें प्रधानी के लिए ही बनाया है।'' हम सभी हँसने लगे।

कई और प्रत्याशियों का जुलूस और निकला। तभी बहुत जोर से तालियाँ बजने की आवाज से हम लोगों का ध्यान बँटा। देखा मैला सा पैजामा कमीज पहने एक नवयुवक गले में मालाएँ डाले रोता हुआ भीड़ के बीच से भागा जा रहा था। उसके पीछे ताली बजाते दस पंद्रह लोग भी दौड़ रहे थे, परंतु वह नवयुवक बड़ी तेजी से सबको पीछे छोड़ भाग गया।

लेडी डॉक्टर ने पूछा, ''यह कौन है जो रोता हुआ भागा जा रहा है।''

बीईई- ''यह प्रधान प्रत्याशी है जो विजयी घोषित हुआ है।''

''पर यह रो क्यों रहा है इसे खुश होना चाहिए था।''

बीईई- ''यही प्रजातंत्र का असली चेहरा है डाक्टर साहब, जो आपने अभी अभी देखा। आपको एलेक्शन के दिन पोलिंग बूथ पर सोये हुए उस नवयुवक की याद है। यह वही युवक है। इसके गाँव में अभी तक ब्राह्मण और ठाकुर ही प्रधान बनते थे। सरहंग जो थे। उनकी दादागिरी से सभी ग्रामीण परेशान थे इस बार कुछ मसखरों ने इस दलित युवक को उनके मुकाबले चुनाव में खड़ा कर दिया। सभी ने इसको 'लाइटली' लिया। जनता बाहुबलियों से तंग थी सो सभी ने इसी को वोट दिया और यह बेचारा न चाहते हुए भी चुनाव भारी मतों से जीत गया।''

''जिसको यह मजाक समझ रहा था वह दु:स्वप्न सच हो गया। अब इसे चिंता है कि प्रधानी तो गई तेल लेने, सरहंग लोग इसे गाँव में जीने नहीं देंगे। इसी दहशत में यह रोता हुआ भाग गया। हो सकता है कि अब अपने गाँव कभी लौटे ही नहीं।''

हम सब विस्मित ही नहीं, ग्रामीण क्षेत्र में प्रजातंत्र का असली चेहरा देखकर स्तब्ध थे। सभी के मन बोझिल हो गये।

सर्जन लौटते समय मन में सोच रहा था कि सम्भवत: वंचितों को शोषण से मुक्त करने के लिए एक बार फिर एक मोहन दास करमचंद गाँधी को जन्म लेना पड़ेगा जो इनमें क्रोध करने की क्षमता जागृत करे। क्रोध उत्पन्न होने से इन वंचितों में प्रतिकार की क्षमता पनपेगी, और यही प्रतिकार करने की क्षमता ही उनको सम्मान दिला सकेगी।

❐❐❐

कान का बुंदा

नाम था रश्मि, थी भी सुबह की पहली किरन सी उजली, धुली हुई। जिस गली में रहती थी युवा उसे 'सुंदर लड़की वाली गली' पुकारते थे। जब वह बाहर निकलती तो जवान क्या, बच्चे और बूढ़े भी देखने लगते। वह जितनी सुंदर थी उतनी ही अपनी सुंदरता से बेखबर। उसकी शादी एक लायक और होनहार लड़के से हो गई। कुछ के दिल टूट गए पर ससुराल वाले निहाल हो गए। मायके वाले उसके और अपने भाग्य को सराह रहे थे। उसी भाग्य ने एक दिन रश्मि की माँग की लाली पोछ दी। भाग्य कभी निर्दयी भी हो जाता है। सजने सँवरने की उम्र में वह श्वेत परिधान में लिपट कर रह गई। शोक का पहाड़ टूट पड़ा। सभी दु:खी हो गये। पर कुछ दिलजलों को खुशी हुई, मानो एक बार फिर उनका चांस लग गया। किताबों में लिखा है वैधव्य की धवलता का सभी सम्मान करते हैं, किन्तु वास्तविकता में सफेद परिधान को लोग 'टु-लेट' के बोर्ड से ज्यादा नहीं समझते।

संवेदना में काफी लोग आये। सभी जगह जाते हैं। यही रीति है, पर रश्मि की संवेदना के लिए भीड़ कुछ ज्यादा थी। कुछ लोग मात्र रश्मि की झलक देखने आये थे। रश्मि तो जैसे पत्थर हो गई थी। मूर्ति से अगर देव विलग हो जाये तो पाहन ही बचता है। कुछ दिन बाद मायके वाले अपने घर लौट गए। उनके लिए तो रश्मि शादी के बाद से पराई हो चुकी थी। रश्मि भी कब तक अकेले बैठती। मन लगाने के लिए घर में काम में लग गई। 6-7 महीने के बाद जब दीन-दुनिया का भान होना शुरू हुआ।

जब वह बाहर का बरामदा बुहारने जाती तो उसे एहसास होता कि सामने वाले मकान की खिड़की से कोई देख रहा है। उसने ध्यान नहीं दिया, न कभी उस खिड़की पर निगाह डाली, फिर भी स्त्री सुलभ अतीन्द्रिय चेतना से उसे भान रहता कि दो आँखे उसे देख रही हैं। ऐसी ही अतीन्द्रिय शक्ति वन के निरीह जंतुओं में पाई जाती है। उनमें भी अनदेखे खतरे का अचानक ही भान हो जाता है। सही तो है, अकेली,

सुंदर लड़की 'सभ्य' समाज में भी किसी कपोत या खरगोश से कम निरीह नहीं होती।

विज्ञान में परा-स्नातक लड़की की जिंदगी केवल झाड़ू-बहारू में खर्च न हो, यह सोच कर उसे किसी महिला पॉलिटेक्निक में दाखिला दिलाना तय हुआ। महिला पॉलिटेक्निक कमिश्नरी मुख्यालय में था। परिवार से दूर जाने को रश्मि पहले तैयार नहीं हुई। परंतु अकेली कब तक रहेगी, हमारी जिंदगी भी कितनी बची है आदि आदि सास ससुर के समझाने पर वह राजी हुई।

कमिश्नरी मुख्यालय में रेलवे-स्टेशन के पास ही पॉलिटेक्निक था। सो हर शनिवार की शाम वह घर आ जाती और सोमवार को पुनः लौट जाती। एक शनिवार को ट्रेन के डिब्बे में बैठी थी कि उसकी निगाह सामने बैठे युवक पर पड़ी। वह उसके घर के सामने रहता था। पति का मित्र था। अधिकतर वह उसके पढ़ने के लिए कोई किताब दे जाता था। धीरज नाम था। स्मृतियाँ उसकी आँखों में आँसू बन कर घुमड़ उठीं। उसने धीरज की आँखों को भी नम होते देखा। आँसुओं का भी अपना रिश्ता होता है।

इसके बाद धीरज सदैव रश्मि के कूपे में ही बैठने का प्रयास करता था। रश्मि भी उसकी उपस्थिति में सुरक्षित महसूस करती थी। एक दिन रश्मि को लगा कि काफी जगह होने के बावजूद सहयात्री उससे सटने की कोशिश कर रहा है। उसने धीरज जो कि खिड़की के पास सामने की सीट पर बैठा था, से पूछा-

''क्या आप मुझे विंडो के पास बैठने देंगे? मुझे उबकाई आ रही है।'' सहयात्री के सटने से उसको सचमुच उबकाई आ रही थी। उस रोज से रश्मि अपनी पर्स बगल में रख कर धीरज के लिए सीट रोक लेती। अनजाने मुसाफिर से सटकर बैठने से जान पहचान वाले के साथ उचित दूरी रखकर बैठना उसे बेहतर लगा।

जाड़े में शाम को अंधेरा जल्दी होने से सड़के भी जल्दी सुनसान हो जाती हैं। ऐसी शाम को धीरज अपने रिक्शे को रश्मि के रिक्शे के पीछे-पीछे उसे पॉलिटेक्निक छोड़ कर तब स्वयं विश्वविद्यालय जाता था। कुछ दिन बाद दोनों एक ही रिक्शे से जाने लगे।

दूरी खत्म होने को निकटता कहते हैं। निकटता को अंतरंगता में

बदलने में देर नहीं लगती। अनजाने से निकटता जुगुप्सा पैदा करती है वही निकटता पहचाने पुरुष और स्त्री के बीच अंतरंगता और चाहत पैदा करती है। ''तुम मुझे रोज सुबह खिड़की से क्यों देखते थे?'' रिक्शे में जाते एक शाम वह अचानक वह धीरज से पूछ बैठी।

''नहीं, वह मैं नहीं था।'' धीरज हड़बड़ा गया।

रश्मि मुस्कराई, धीरज की 'न' उसकी 'हाँ' को मुखर कर दी गई थी।

धीरज अब शाम को रश्मि के कॉलेज आकर उससे मिलता। वह लोग सामने की सड़क पर घंटों घूमते। कभी पास के होटल के सामने बने लॉन में हाथ पकड़े बैठते, साथ पिक्चर देखते। रश्मि अब खुश दिखती, घरवाले खुश थे। घर की मुरदनी लुप्त हो गई।

पुरुष सानिध्य, जिससे रश्मि अपरिचित नहीं थी, ने उसकी अभिलाषा को हवा दे दी। चिंगारी राख से ढकी थी, धधक चुकी थी। पॉर्क और सिनेमा हाल का एकांत कम पड़ने लगा। वह अधिक एकांत ढूँढ़ने लगे। 'अधिक एकांत' खोजने के लिए उन्हें ज्यादा सोचना नहीं पड़ा। पास में होटल था, जिसके सामने की सड़क व पार्क में उनकी निकटता परवान चढ़ी थी।

एक शनिवार को घर न जाकर रात में उसी होटल में दोनों पति-पत्नी के रूप में एक कमरा बुक कराया। कमरा आसानी से मिल गया। परंतु पति-पत्नी और आतुर प्रेमियों की भंगिमा में फर्क होता है, जिसे कोई भी भाँप सकता है। होटल का स्टाफ दोनों को सड़क पर पार्क में घूमता देख चुका था, उन्हें कमरा बुक करने का आशय पता चल चुका था।

कमरा साधारण था। प्रेमी युगल की कल्पना फूलों से सजी सेज की तो नहीं थी, किन्तु वैसा ही कुछ कर गुजरने की अभिलाषा तीव्र थी। धीरज अपने प्रथम अनुभव के संकोच और रश्मि अपनी लज्जा निकलने के प्रयास कर रहे थे। अचानक दरवाजे पर दस्तक हुई। दोनो हड़बड़ा गए। आवाज आई ''सर! ठंडा पानी....।''

अगले दिन पुलिस स्टेशन के पास रेल की पटरी पर एक महिला का शव मिला। औसत बदन, रंग गोरा उम्र 20-22 के आस-पास। पोस्टमार्टम में मृत्यु का कारण दम घुटना बताया गया। लड़की के गले से

एक छोटा तौलिया निकला जो उसके दम घुटने का कारण बना। लड़की के शरीर की चोटें उसके साथ व्यभिचार होने की पुष्टि कर रही थीं। पुलिस का अनुमान था कि बलात्कार के वक़्त चीख रोकने के लिए मुँह में ठूँसा गया तौलिया उसकी मृत्यु का कारण बना। अपराध छिपाने के लिए मृतका को रेल की पटरी पर डाल दिया गया था। वह पटरी शंटिंग लाइन थी। इस लाइन पर उसके बाद कोई गाड़ी नहीं गुजरी इसलिए लाश कटने से बच गई। लड़की अनजान थी लिहाजा अखबार में फोटो छपी। फोटो देख महिला पॉलिटेक्निक की हास्टल-वॉर्डन ने रश्मि को पहचाना।

धीरज एक हफ्ते अपने घर पर ही रहा, विश्वविद्यालय नहीं गया। पूछने पर बताया कि हॉस्टल मे दो गुटों में फौजदारी हो जाने के कारण बंद कर दिया गया है। उसी झंझट में उसे माथे पर चोट लग गई। घर वालों ने उसे ऐसे झगड़ों से दूर रहने की हिदायत दी।

एकाएक बड़े सुबह ही पुलिस धीरज के घर पहुँच कर उसे हिरासत में लेकर लखनऊ आ गई। घर वाले सन्न, उसकी जमानत के लिए लखनऊ भागे। अदालत में यह सुन कर दंग रह गए कि धीरज पर रश्मि के बलात्कार के बाद हत्या का आरोप लगा है। पॉलिटेक्निक हॉस्टल के चौकीदार के बयान से धीरज की गिरफ्तारी हुई थी। चौकीदार ने पुलिस को बताया कि रश्मि शाम को इस लड़के के साथ घूमती थी। वारदात की रात भी धीरज ही रश्मि को ले गया था। बलात्कार और हत्या का आरोपी होने के कारण धीरज की जमानत नामंजूर हो गई। पुलिस की पूछ-ताछ हेतु 5 दिन की रिमांड मिल गई। बगैर किसी सख्ती के धीरज ने मान लिया कि उसके रश्मि के संबंध थे। वह उसे लेकर उक्त होटल के कमरे में ले गया था।

''सर! ठंडा पानी...'' की आवाज पर धीरज ने दरवाजा खोला। एक आदमी थर्मस लिए खड़ा था। जब तक वह संभले दो आदमी उसका मुंह दबा कर बाहर ले आए। बाहर आते समय धीरज ने देखा कि रश्मि को दो अन्य लोगों ने दबोच कर पलंग पर गिरा दिया था।

धीरज के हाथ, पैर और मुँह बाँध कर उसे किसी स्टोरनुमा कमरे में बंद कर दिया गया। काफी देर के बाद तीन-चार लोग मेरे पास आए और मुझे बेरहमी से पीटने के बाद स्टेशन के पास ला छोड़ कर चुपचाप शहर छोड़ कर जाने को बोला। मैं बहुत डर गया था सर, चुपचाप घर लौट आया।

पूरा बयान सुनकर इंस्पेक्टर चौहान को क्रोध आया। ''और उस लड़की के बारे में तूने कुछ भी नहीं सोचा, जो तेरे विश्वास पर तेरे साथ आई थी?'' धीरज के सिर के बाल पकड़ कर बेरहमी से हिलाता हुआ बोला, ''मेरे पीछे उसे भी लाये थे, मैंने सोचा था मेरी तरह उसे छोड़ दिया गया होगा।'' धीरज गिड़गिड़ाया।

''ऐसा कभी नहीं होता'' चौहान ने निराशा से कहा।

धीरज के बयान के अलावा कोई और साक्ष्य अथवा साक्षी नहीं मिला। होटल से भी कोई सुराग नहीं मिला। कोई पुख्ता सबूत न मिलने के कारण जाँच की फाइल ठंडे बस्ते में चली गई। रश्मि की मौत पुलिस अभिलेखों में अनसुलझी ही दाखिल-दफ्तर हो गई।

इस वारदात को 15 वर्ष बीत गये, पर धीरज इस सदमे से नहीं उबर पाया। उसने शादी नहीं की। इंस्पेक्टर चौहान डीएसपी प्रमोट हो कर एक बार फिर उसी जिले में तैनात हुए।

आज डीएसपी चौहान बहुत खुश थे, उनकी इकलौती बेटी का विवाह तय हो गया था। बेटी की शादी के आभूषण पसंद करने परिवार के साथ सोने की दुकान पर गए। काफी अच्छे डिजाइन थे दुकान पर। गहने महिलायें पसंद कर रही थी, चौहान का ध्यान पास के काउंटर पर बैठे एक व्यक्ति की ओर गया। वह निम्न आय वर्ग का लगता था, कोई गहना बेचना चाह रहा था। वह व्यक्ति अपनी बेटी की शादी की दुहाई देकर उस गहने का अधिक मूल्य माँग रहा था, सुनार ज्यादा दाम देने को राजी नहीं हो रहा था। बेटी की शादी की बात सुन कर चौहान उस कांउटर पर पहुँचे। वह आदमी कान का बुंदा बेचना चाह रहा था। चौहान वापस लौट ही रहे थे कि उनके दिमाग में कौंधा कि यह एक बुंदा क्यों बेंच रहा है? कहीं यह चोरी का तो नहीं है?

उसने फौरन पलट कर उस व्यक्ति के कंधे पर हाथ रख कर पूछा, ''यह चोरी का तो नहीं है? इसका दूसरा जोड़ा कहाँ है?''

आदमी पहले तो घबरा गया, फिर पूछने वाले को साधारण कपड़ों में देख कर, आश्वस्त हो कर बोला, ''तुम कौन हो? तुमसे मतलब?''

चौहान ने उसके जवाब की परवाह न करते हुए बुंदा उठा कर देखने लगा। ऐसी झुमकी उसकी बेटी के पास भी थी जब वह छोटी थी। उसने अपने दिमाग पर जोर डाला। बेटी के बुंदे ऐसा एक बुंदा उसने किसी

लावारिस मृत लड़की के कान में देखा था। उसने उस व्यक्ति को पकड़ लिया। रेडियो-पेट्रोल कार को बुला कर उसे थाने भेज दिया। दुकानदार से बुंदा जमा करवा कर रसीद ले ली। परिवार को बता कर वह थाने पहुँच गया। थोड़ी सी ही कड़ाई पर वह व्यक्ति तोते की तरह बोलने लगा।

''हुजूर! मैं बहुत गरीब आदमी हूँ। एक होटल में चौकीदार हूँ। बहुत साल पहले एक दिन एक नवयुवक एक लड़की को लेकर रात भर के लिए होटल में रहने आया। उनके पास कोई समान नहीं था। देखते ही उनका मन्तव्य पता चल रहा था। आप तो जानते ही हैं सर, होटल में हर प्रकार का धंधा चलता है, पर यह लड़की धंधे वाली नहीं थी। उसको हम लोग पॉलिटेक्निक से आते जाते देखते थे। मैनेजर व उसके साथियों की नीयत खराब हो गई। उनका सोचना था कि लड़की का प्रयोजन वह लोग उस नादान छोकरे से ज्यादा अच्छे तरीके से पूरा कर सकते हैं। पानी जग लेकर मैनेजर खुद गया।

''सर! ठंडा पानी'' लड़के ने दरवाजा खोला। मैनेजर ने जग से लड़के के सिर पर वार किया। लड़का सिर पकड़ कर बैठ गया। मैनेजर के दो साथियों ने लड़की के हाथ पैर बाँध कर मुँह में कपड़ा ठूँस दिया। लड़के के हाथ बाँध कर स्टोर में बंद कर दिया गया। तीनों आदमी बारी-बारी से लड़की से निपटने के बाद स्टोर में जाकर लड़के की पिटाई करते, और मुँह बंद रखने को कहते। जब उनका मन लड़की से भर गया तो उन्होंने मुझसे कहा ''तू भी अपनी आग बुझा ले, ऐसा माल कभी देखने को भी नहीं पाएगा।''

चौहान ने एक झापड़ मारते हुए कहा ''स्सा..... तू भी।''

चौकीदारी झापड़ खा कर गिर पड़ा, परन्तु तत्काल उठ कर बैठ गया और पैर पकड़ कर गिड़गिड़ाते हुए बोला ''सर, जब मैं उस लड़की के पहुंचा तब तक वह मर चुकी थी। अपनी बेटी की कसम, मैंने उसके साथ कुछ भी नहीं किया। मैं खुद डर गया था। हाँ, चलते समय मैंने उसके कान से यह बुंदा जरूर निकाल लिया था। वही बुंदा अब बेटी की शादी में बेच कर पैसे का इंतजाम कर रहा था।

चौहान ने एक लात मारते हुए चौकीदार को हवालात में बंद करने का आदेश दिया और अगली कार्यवाही को निकल पड़ा।

15 वर्ष पुरानी बलात्कार और हत्या की फाइल फिर खुली, मैनेजर उसी होटल से पकड़ा गया। मैनेजर के साथी भी गिरफ्तार हुए। जज ने अपने निर्णय में टिप्पणी करते हुए लिखा-

''प्रेम करना अपराध नहीं है। जब स्त्री प्रेम करती है तो वह पूर्ण रूप से समर्पित हो जाती है, हानि लाभ का विवेक किये बगैर। यह समर्पण पति के लिए हो, पुत्र के लिए अथवा प्रेमी के लिए, वह आगा-पीछा नहीं देखती। हर रिश्ते में महिला की रक्षा का दायित्व पुरुष का होता है। इस प्रकरण में भी यदि पुरुष ने विवेक से काम लिया होता तो यह दुर्घटना न घटती। धीरज जिस शारीरिक और मानसिक पीड़ा से गुजरा है और आज भी अविवाहित है, से पता चलता है कि उसे अपने कृत्य पर पश्चाताप है। अतः पीड़ा को दंड मानते हुए अदालत उसके लिए अलग से दंड का प्रावधान नहीं करती है।''

''चौकीदार के बयान से अपराध की पुष्टि के अलावा यह निष्कर्ष भी निकलता है कि उक्त होटल में ऐसे व अन्य गैरकानूनी धंधे चलते रहते थे। पुलिस प्रशासन इनसे अनभिज्ञ था या अनभिज्ञ बना रहा। दोनों परिस्थितियों में, पुलिस की संलिप्तता नहीं तो असफलता अवश्य परिलक्षित होती है।'' सरकारी गवाह बनने की वजह से अदालत ने चौकीदार के साथ नरमी बरतते हुए उसको चोरी व अपराध में सहायक होने के अपराध में केवल छह महीने की सजा दी। बाकी तीनों मुजरिमों को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। अपने फैसले में कोर्ट ने डीएसपी चौहान की प्रशंसा भी की।

❐❐❐